भाकृअनुप
ICAR

चारा पत्रिका

भा.च.चा.अ.सं.
IGFRI

वर्ष 19 पंजीकरण संख्या ISSN-0973-7979 जनवरी-दिसम्बर, 2017 अंक

भाकृअप-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर मार्ग, झाँसी-284 003 (उ.प्र.)

चारा पत्रिका

वर्ष 19 पंजीकरण संख्या ISSN-0973-7979 जनवरी-दिसम्बर, 2017 अंक

संरक्षक
डॉ. आर.वी. कुमार
निदेशक

संपादक मंडल
डॉ. एन.दास
प्रधान वैज्ञानिक
(से.नि. जुलाई,2017)
डॉ. सुनील कुमार
प्रधान वैज्ञानिक
डॉ. के.के. सिंह
प्रधान वैज्ञानिक
नीरज कुमार दुबे
वरि. तकनीकी अधिकारी

प्रकाशक :
निदेशक
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी
दूरभाष : +91-510-2730666
फैक्स : +91 510 2730833
वेबसाइट : http://www.igfri. res.in
ई-मेल : igfridirector@ mail.com; director.igfri@icar.gov.in

संपर्क सूत्र :
राजभाषा अनुभाग
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर मार्ग,
झाँसी–284003 (उ.प्र.)

मुद्रक :
दर्पण प्रिन्टर्स एण्ड लेमीनेशन आगरा

विषय सूची

निदेशक की कलम से

1. **जनवरी-दिसम्बर माह में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि एवं पशुपालन क्रियाएं**.....1

2. **कृषकों की आय दोगुनी करने की प्रभावी कृषि तकनीकियाँ**.....21
   – एस.एन. रोकड़े मौलिक लेख – प्रथम पुरस्कृत

3. **कृषकों की आय दोगुनी करने की प्रभावी कृषि तकनीकियाँ**.....26
   – मुकेश चौधरी मौलिक लेख – द्वितीय पुरस्कृत

4. **कृषकों की आय दोगुनी करने की प्रभावी कृषि तकनीकियाँ**.....29
   – अमित कुमार सिंह मौलिक लेख – तृतीय पुरस्कृत

5. **वैज्ञानिक विधि से ग्वार का चारा एवं बीज उत्पादन**.....33
   – संजय कुमार, मंजूनाथ एन., मैती ए., विनोद वासनिक, सी.के. गुप्ता एवं डी. विजय

6. **संकर नेपियर लगायें, दुग्ध उत्पादन बढ़ायें**.....36
   – दिनेश चन्द्र जोशी, तेजवीर सिंह एवं ए. राधाकृष्णा

7. **औषधीय एवं सगंधीय पादपों का पशुओं के चारे में उपयोग**.....38
   – पुष्पेन्द्र कोली, एस.बी. मैती, के.के. सिंह एवं ए.के. मिश्रा

8. **चारा मक्का बीज उत्पादन प्रमाणीकरण और भंडारण**.....42
   – सुशान्त कुमार कौशिक, शिवा पालीवाल, प्रहलाद सिंह यादव एवं डी. विजय

9. **साइलेज बनायें: वर्षभर हरा चारा खिलायें** 45
   – के.के. सिंह, एम.एम. दास, एस.बी. मैति एवं ए.के. मिश्रा

10. **हरे चारे की कमी की दशा में पशुओं का पोषण ऐसे करें**.....49
    – सतेन्द्र कुमार, शेषधर पाण्डेय, राजीव कुमार अग्रवाल, एम.एम. दास, के.के. सिंह एवं रोहित कटियार

11. **मृदा एवं जल संरक्षण में घास की भूमिका**.....55
    – अकरम अहमद, प्रभाकान्त पाठक एवं सुनील कुमार

12. **फसलों में रोगों की रोकथाम के लिए बीज उपचार की विभिन्न विधियाँ**.....58
    संजय कुमार, पुष्पेन्द्र कोली, ए. मैती, मंजूनाथ एन., वी.के. वासनिक, सी.के. गुप्ता एवं डी. विजय

13. बीज की यांत्रिक टूट-फूट : कारण एवं निवारण.....61

– संजय कुमार सिंह

14. पौधों की पहचान कैसे करें?.....63

– वी.सी. त्यागी, आर.वी. कुमार, सुनील कुमार, डी. देव, अमित कुमार, राहुल गजघाटे एवं मनीत राना

15. शुष्क क्षेत्र में रोग ग्रसित खेजड़ी का जीर्णोद्धार.....66

– दीपेश, लाधूराम, ऋतु मावर एवं सीता राम कांटवा

16. **बरसीम के हरे चारे एवं बीज उत्पादन हेतु उन्नत कृषि प्रबंधन क्रियाएं.....69**

– तेजवीर सिंह, सीता राम कांटवा, ए. राधाकृष्ण, सेवा नायक डी., संजय कुमार, मंजुनाथ एन.

17. उद्यान-चरागाह पद्धति.....72

– अमित कुमार सिंह, मनीत राना, राहुल गजघाटे, संजय कुमार, वी.सी. त्यागी, पुष्पेन्द्र कोली एवं डी. देव

18. चारा विषाक्तता से अपने पशुओं की रक्षा करें.....74

– पुष्पेन्द्र कोली, एस.एन. रोकड़े, एस.बी. मैती, के.के. सिंह एवं ए.के. मिश्रा

19. शहरी क्षेत्रों में भूगर्भ जल संचयन एवं भूजल सम्भरण.....76

– सोनम आर्या, रेनू आर्या, सुधीर कुमार एवं आर. एल. आर्या

20. जैविक खादः टिकाऊ खेती एवं मृदा स्वास्थ्य के लिए उत्तम विकल्प.....79

– रेनू आर्या, सोनम आर्या, सुधीर कुमार एवं आर.एल. आर्या

21. शुष्क क्षेत्रों में निरंतर चारा उपलब्धता हेतु परम्परागत चरागाहों का पुनरूद्धार एवं प्रबंधन की आवश्यकता.....84

– राजेन्द्र प्रसाद, आर.एस. मेड़तिया, ओ.पी. चतुर्वेदी, आर.के. तिवारी, अशोक शुक्ला एवं प्रशान्त सिंह

22. हाइड्रोपोनिक चारा तकनीकीः वर्षभर हरा चारा उत्पादन के लिए एक वरदान.....89

– शेषराव काऊतकर, वी.सी. त्यागी, अकरम अहमद एवं प्रभाकांत पाठक

23. संस्थान की प्रचार-प्रसार /गतिविधियाँ.....93

नोट : पत्रिका में दी गई तकनीकी जानकारी, आँकड़े एवं विचारों के लिए संपादक मंडल/संपादक उत्तरदायी है। इस हेतु लेखक से सीधे संपर्क करें।

निदेशक की कलम से .....

देश का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल विश्व के संपूर्ण भू–भाग का मात्र 2 प्रतिशत है। यहाँ विश्व की 15 प्रतिशत पशुधन संख्या है। देश में लगभग 01 मिलियन पशुओं की दर से प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है। हमारे देश में वर्तमान में हरा चारा उत्पादन 462 टन है, चारा अवशेष, उत्पादित हरा चारा एवं चरागाह का योगदान क्रमशः 54, 28 तथा 18 प्रतिशत है। देश में 35.6 प्रतिशत हरे चारे, 10.95 प्रतिशत सूखे चारे एवं 49 प्रतिशत पशुआहार एवं दाने की कमी है। देश की कुल जोत के लगभग 4 प्रतिशत क्षेत्रफल में ही चारा उगाया जाता है, वर्तमान में 12 से 16 प्रतिशत क्षेत्रफल में चारा उगाने की आवश्यकता है। ऐसी परिस्थिति में सीमित संसाधनों से ही, पशुधन को भरपूर गुणवत्तायुक्त पौष्टिक चारा उपलब्ध कराने में आने वाले कठिनाईयों का समाधान चारा संबंधी तकनीकियों के शोध से ही संभव है। संस्थान का सदैव प्रयास रहा है कि देश के पशुधन को भरपूर पौष्टिक चारा प्राप्त होता रहे।

हमारे वैज्ञानिकगण इस दिशा में सदैव चिंतनशील है। वे पशुओं के लिए चारे की नई–नई प्रजातियों की खोज में प्रयासरत हैं। जिससे हमारे पशुओं को भरपूर पौष्टिक चारा/आहार मिल सके। नवीनतम तकनीकियों को किसान भाइयों तक देश की राजभाषा हिन्दी के माध्यम से पहुँचाने का कार्य संस्थान की चारा पत्रिका सतत् निभाती आ रही है। पत्रिका का उद्देश्य किसानों/पाठकों को चारा उत्पादन एवं पशुपालन व उनके प्रबंधन संबंधी सामयिक जानकारी प्रदान करना है। पत्रिका के पिछले अंकों में हमने किसानों व जन–सामान्य को पशुओं व चारे से संबंधित अति महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराई है। पत्रिका का यह अंक किसान भाईयों को वर्षपर्यन्त कृषि, पशुपालन व अन्य सामयिक क्रियाओं साथ ही वैज्ञानिक विधि से ग्वार चारा एवं बीज उत्पादन, चारा मक्का बीज उत्पादन, प्रमाणीकरण एवं भंडारण, मृदा एवं जल संरक्षण में घास की भूमिका, उद्यान–चरागाह पद्धति, जैविक खाद–टिकाऊ खेती एवं मृदा स्वास्थ्य के लिये उन्नत विकल्प, साइलेज द्वारा वर्षभर हरे चारे की उपलब्धता इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों को ध्यान में रखकर तैयार करने का प्रयास किया गया है। यह अंक निश्चित ही आपके लिए उपयोगी साबित होगा, मुझे ऐसी आशा है। इस पत्रिका के लेखकों एवं संपादक मंडल को उनके अथक प्रयास हेतु धन्यवाद देता हूँ। यह अंक आपको कैसा लगा, इसके बारे में अपनी प्रतिक्रियाएं/सुझाव अवश्य प्रेषित करें। यदि आप भी चारे व पशुधन से संबंधित जानकारी प्रकाशनार्थ प्रेषित करना चाहते हैं, वह सादर आमंत्रित हैं।

(आर.वी. कुमार)
निदेशक

जनवरी से दिसम्बर माह में किसान भाईयों के लिए सामयिक कृषि एवं पशुपालन क्रियाएं

जनवरी

फसलोत्पादन :

गेहूँ

- समय से बोये गए गेहूँ में माह के शुरू में दूसरी सिंचाई कल्ले निकलने की अवस्था (40–45 दिन) एवं तीसरी सिंचाई गाँठ बनते समय (60–65 दिन) करें।
- देर से बोये गए गेहूँ में पहली सिंचाई 20–22 दिन की अवस्था (ताजमूल अवस्था) एवं दूसरी सिंचाई 40–45 दिन बाद कल्ले निकलते समय करें।

जई

- जई में 20–22 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें एवं अच्छी बढ़वार के लिये कटाई के पश्चात तुरंत सिंचाई करें।
- यदि जई का बीज लेना है तो एक कटाई के बाद बीज के लिये फसल को छोड़ दें।

गन्ना

- गन्ने के जिन खेतों में पेड़ी (रैटून) रखना है, उनमें खरपतवार नियंत्रण के लिये सिंचाई करके ओट आने पर गुड़ाई द्वारा खरपतवार नष्ट कर दें। आवश्यकता होने पर एट्राजिन (2.0 किग्रा. सक्रिय तत्व 600–800 ली. पानी/हे.) का छिड़काव कलिकाएं निकलते समय करें।
- गन्ने की आवश्यकतानुसार कटाई करें एवं खाली खेत की जुताई कर अगली फसल के लिये भूमि की तैयारी करें।

जौ

- जौ में दूसरी सिंचाई गाँठ बनने की अवस्था (55–60 दिन) पर करें।

मक्का

- रबी मक्का में सिंचाई 40–45 दिन की अवस्था में करें।

चना

- भारी भूमि में बोये गये चने में एक सिंचाई उचित रहेगी।
- हल्की भूमि में बोये गए चने का फूल आने से पहले दूसरी सिंचाई करें।

मसूर

- मसूर में 45–50 दिन की अवस्था पर दूसरी सिंचाई करें।

राई सरसों

- राई, सरसों में दाना भरने की अवस्था पर दूसरी सिंचाई करें।

बरसीम

- बरसीम में 14–18 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- बरसीम या अन्य हरे चारे काटकर पशुओं को खिलाएं।
- कटाई के पश्चात् अच्छी बढ़वार के लिये तुरंत सिंचाई करें।
- चारे के लिये बोयी गयी बरसीम की 20–25 दिन के अंतराल पर कटाई करें एवं यदि बीज लेना है तो बीज के लिये छोड़ दें।

तोरिया

- समय से बोई गयी तोरिया कटाई के लिये तैयार होते ही कटाई कर लें। देरी करने पर दानों के बिखरने की संभावना रहती है।

बागवानी

- रबी सब्जियों की समयानुसार सिंचाई, रोग–कीट से सुरक्षा, सब्जियों की तुड़ाई एवं विपणन।

बेर

- बेर, फल की चिड़ियों से सुरक्षा, तुड़ाई एवं विपणन।

अमरूद

- अमरूद फल की चिड़ियों से सुरक्षा, तुड़ाई एवं विपणन।
- इसी वर्ष नए लगे अमरूद, ऑवला, नींबू इत्यादि के वृक्षों की पाला से सुरक्षा हेतु समय–समय पर थाले में पानी देते रहें एवं पौधों को घास–फूस से लकड़ी का आधार बना कर ढकें।

पपीता

- पपीता फल की चिड़ियों से सुरक्षा, तुड़ाई एवं विपणन।

शरीफा एवं अन्य फल

- इसी वर्ष नए लगे शरीफा एवं अन्य फल वृक्षों की पाला सुरक्षा हेतु समय–समय पर थाले में पानी देते रहें एवं पौधों को घास–फूस से लकड़ी का आधार बना कर ढकें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

सुबबूल

- सुबबूल की टहनियों की कटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।

फल संरक्षण :

गेहूँ, जौ एवं जई

- गेहूँ की फसल को चूहों से बचाने के लिए जिंक फॉस्फाइड का चुग्गा प्रयोग करें।
- झुलसा रोग की रोकथाम के लिए जिंक मैग्नीज कार्बोमेट (2.0 किग्रा. 800 लीटर पानी में/हे.) का 10 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें।
- विलम्ब से (दिसम्बर) बोए गए गेहूँ, जौ एवं जई में गेहूँ का मामा (*फैलेरिस माइनर*) के नियंत्रण के लिये आइसोप्रोटूरान (0.75 किग्रा. सक्रिय तत्व/हे.) 600 ली. पानी में घोलकर फसल की 30–35 दिन की अवस्था पर छिड़कें।
- यदि दोनों प्रकार के खरपतवार खेत में हो तो उपर्युक्त दोनों खरपतवार नाशियों का छिड़काव लाभदायक होगा।

जई

- एक से अधिक कटाई वाली तथा बीज के लिए बोई गयी जई में प्रथम कटाई के बाद 30 किग्रा./हे. की दर से नत्रजन का छिड़काव करें।

गेहूँ

- गेहूँ की 40–45 दिन की अवस्था पर सिंचाई के बाद शेष 1/3 मात्रा का छिड़काव करें।

सरसों

- सरसों में माहू कीट के नियंत्रण के लिये मैलाथियान (50 ईसी) 1.5 लीटर अथवा 250 मि.ली. फॉस्फोमिडान (85 प्रतिशत) को 800 लीटर पानी/हे. में मिला कर छिड़कें।

मटर

- मटर में चूर्णिल आसित (पाउडरी मिल्ड्यू) रोग की रोकथाम के लिये 3.0 किग्रा. गंधक 800 ली. पानी/हे. की दर से 10 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़कें।

पशुपालन :

- शरद ऋतु में पशुओं को ठंडक से बचाने के उपाय करना चाहिए। विशेष रूप से रात के समय उन्हें पशुशाला /बाड़े के अंदर रखना चाहिए।

- संभव हो तो फर्श पर बिछावन का उपयोग करना चाहिए।
- जनवरी से अप्रैल के बीच/मध्य हरे चारे जैसे–बरसीम, जई इत्यादि की प्रचुर मात्रा उपलब्ध रहती है। इस मौसम में पशुओं को दिये जाने वाले कुल हरे चारे का 2/3 भाग बरसीम तथा 1/3 भाग जई के साथ 2–3 किग्रा. सूखा चारा तथा 2–4 किग्रा. दाना मिश्रण (दुग्ध उत्पादन के आधार पर) देना चाहिए।
- अधिकतर बकरियाँ तथा भेड़ें इसी मौसम में बच्चों का जन्म देती है। उन्हें ठंड से बचाने का उपाय करना चाहिए।
- प्रत्येक बच्चे को 3–5 मि.ली. तरल पैराफीन पिलाना चाहिए जिससे उनका पेट साफ हो जाता है। उन्हें खीस अवश्य पिलाना चाहिए।
- खीस बच्चों में रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है।
- पशुओं की समय–समय पर पेट के कीड़े मारने (डिवर्मिंग) की दवा (3–4 माह के अंतराल पर) चिकित्सक की सलाह से अवश्य देना चाहिए।
- पशुओं को बाह्य परजीवी (टीक्स) से बचाने के लिए मैलाथियान के एक प्रतिशत घोल को प्रभावित जगह पर लगाना चाहिए तथा धुलाई कर साफ कर देना चाहिए।
- पशुओं को सर्दी लगने की स्थिति में पशु को 30 ग्राम हल्दी, 250 ग्राम गुड़ में मिलाकर देने से पशु को सर्दी से राहत मिलती है।
- बकरी के बच्चे को फड़किया (एन्ट्रोटाक्सिमिया) से बचाव के लिए मेमनों को दो माह की उम्र पर पुनः 15 दिन बाद तथा पुनः दो माह बाद टीकाकरण करना चाहिए।
- गलघोंटू से बचाव के लिए पहला टीका 2 माह की उम्र पर पुनः 6 माह बाद प्रतिवर्ष लगवाना चाहिए।
- इस मौसम में विशेषतौर से बकरियों को प्रति वयस्क बकरी के हिसाब से 150–250 ग्राम दाना बढ़ाकर पूरक के रूप में देना चाहिए। खासकर जब वातावरण का तापमान 5–20° सेल्सियस के बीच हो।

फरवरी

फसलोत्पादन :

गेहूँ

- गेहूँ की बुवाई के समय के अनुसार से दूसरी तीसरी एवं चौथी सिंचाई 40–45, 60–65 एवं 80–85 (बाली निकलते समय) दिन की अवस्था पर करें।

जौ

- जौ के लिये तीन सिंचाईयाँ उपलब्ध होने पर दूसरी सिंचाई गाँठ बनते समय (55–60 दिन) एवं दूधियावस्था (95–100 दिन) पर करें।

मक्का

- रबी मक्का में तीसरी सिंचाई 75–80 दिन तथा चौथी 105–110 दिन की अवस्था पर करें।
- तोरिया, आलू, गन्ना आदि से खाली हुए खेतों में मक्का, ज्वार की अगली फसल की बुवाई एकल या लोबिया के साथ मिलाकर करें। मक्का की कम्पोजिट आदि ज्वार की एकल कटाई, द्विकटाई एवं बहुकटाई (सूडान टाइप) प्रजातियाँ का उपयुक्त बीज दर एवं दूरी पर बोना उचित होगा।

मसूर

- महावट (जाड़े की वर्षा) न होने पर मसूर में फलियाँ बनते समय हल्की सिंचाई लाभदायक रहेगी।

चना

- महावट (जाड़े की वर्षा) न होने पर चना में फलियाँ बनते समय हल्की सिंचाई लाभदायक रहेगी।

गन्ना

- गन्ने की आवश्यकतानुसार (15–20 दिन के अंतराल पर) सिंचाई करते रहें।

बरसीम

- बरसीम की सिंचाई क्रमशः 12–14 एवं 18–20 दिन के अंतराल पर करें। बरसीम या अन्य हरे चारे की कटाई करें एवं पशुओं की आवश्यकता से अधिक होने पर सुखाकर गर्मियों के लिए भंडारित कर लें।

जई

- चारे के लिये बोई गयी जई की सिंचाई क्रमशः 12–14 एवं 18–20 दिन के अंतराल पर करें।

बहुवर्षीय घासें

- यदि सिंचाई की अच्छी व्यवस्था है तो खेत में अथवा मेड़ों पर बहुवर्षीय घासें जैसे नेपियर, गिनी, सिटेरिया आदि की रोपाई कर सकते हैं। इनमें रोपाई के समय 10 टन गोबर की खाद, 60 किग्रा. नत्रजन एवं 60 किग्रा. फॉस्फोरस/हे. की दर से प्रयोग करें।

बागवानी :

मटर

- अगेती मटर की तुड़ाई के बाद शेष पौधों को चराई या चारे के रूप में प्रयोग करें।

शलजम

- शलजम, गाजर के शेष हरे पौधे को चारे के रूप में प्रयोग करें।

गाजर

- गाजर के शेष हरे पौधे को चारे के रूप में प्रयोग करें।

बेर

- बेर के फलों की तुड़ाई एवं विपणन करें।

पपीता

- पपीता के अपरिपक्व फलों को तोड़कर कृत्रिम ढंग से पकाया जा सकता है।

चरागाह वन एवं उद्यान चरागाह :

सुबबूल

- सुबबूल की पत्तियों को इकट्ठा करें।

फसल संरक्षण :

गेहूँ

- गेहूँ में अनावृत कण्डुए रोग से ग्रस्त बाली को तोड़कर जला दें।
- चूहों से फसल बचाने के लिये जिंक फॉस्फाइड से बने चुग्गे या एल्यूमिनियम फॉस्फाइड की टिकिया का प्रयोग करें।

जौ

- जौ में अनावृत कण्डुए से ग्रस्त बाली को तोड़कर जला दें।
- चूहों से फसल बचाने के लिये जिंक फॉस्फाइड से बने चुग्गे या एल्यूमिनियम फॉस्फाइड की टिकिया का प्रयोग करें।

चना

- चने में फली छेदक कीट का अधिक प्रकोप होता है। इससे बचाव के लिये मोनोक्रोटोफास (1 मि.ली./ली.) अथवा इण्डोसल्फान 1.5 ली. (3.5 ईसी) का घोल 800 ली. पानी में बनाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।

मटर

- मटर में चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू) रोग की रोकथाम के लिये 3.0 किग्रा. गंधक, कार्बेन्डाजिम (500 ग्राम) अथवा ट्राइडोमार्फ (80 ईसी) 500 मि.ली. के 2 छिड़काव 12–14 दिन के अंतराल पर करें।

सरसों

- सरसों में माहू कीट के नियंत्रण के लिये 1.5 ली. मैलाथियान (50 ईसी) 1.25 ली. अथवा 250 मि.ली. फॉस्फोलडान (85 प्रतिशत) को 800 ली. पानी में मिलाकर/हे. की दर से छिड़काव करें।

- माह के अंत में जायद फसल के रूप में उर्द, मूँग, मक्का (भुट्टा) आदि की बुवाई की जा सकती है।

पशुपालन :

- सर्दी के मौसम में खासकर बकरी एवं भेंड़ के बच्चों को बचाकर रखना चाहिए।
- जिन बकरी एवं भेंड़ के बच्चों की उम्र 2–3 माह हो उन्हें फड़किया तथा गलघोंटू से बचाव के टीके लगवा देना चाहिए।

मार्च

फसलोत्पादन :

- गेहूँ में बुवाई के समयानुसार पाँचवी सिंचाई दूधियावस्था (100–105 दिन) पर एवं छठी/अंतिम सिंचाई दाने भरते समय (115–120 दिन) पर करें सिंचाई हल्की करें जिससे फसल के गिरने की कम संभावना होती है।
- देर से बोयी गयी जौ की अंतिम सिंचाई 95–100 दिन की अवस्था पर करें।
- दाने के लिये बोयी गयी जई में अंतिम सिंचाई 100–105 दिन की अवस्था पर करें।
- भूमि अधिक सूखी होने की स्थिति में चने एवं मसूर में दाने बनते समय हल्की सिंचाई करें।
- गन्ने की पेड़ी (रैटून) की सिंचाई 15–20 दिन के अंतराल पर करें।
- बरसीम–लूसर्न की सिंचाई क्रमशः 10 दिन एवं 12–14 दिन के अंतराल पर करें।
- बहुवर्षीय घासों की सिंचाई 15–18 दिन के अंतराल पर करें।
- बरसीम की कटाई 25–30 दिन के अंतराल पर करते रहें।
- वार्षिक घासें, चरी एवं बहुवर्षीय घासों की कटाई 30–35 दिन के अंतराल पर करें एवं प्रत्येक कटाई के बाद 30–40 किग्रा. नत्रजन/हे. छिड़काव करें।
- आने वाली गर्मी में चारा उत्पादन हेतु आलू, गन्ना, तोरिया एवं जई आदि से खाली हुए खेतों को तैयार कर मक्का, चरी अकेले अथवा लोबिया के साथ मिलाकर बोए। मक्का के लिये 40 किग्रा., लोबिया के लिये 35 किग्रा., चरी के लिये 25–40 किग्रा. बीज (प्रजाति के अनुसार) प्रयोग करें। परन्तु मिलवां बुवाई के लिये बीज दरों में उपयुक्त आनुपातिक परिवर्तन करें।
- सुबबूल अथवा अन्य पौधों/वृक्षों की पत्तियों को सुखाकर लीफ मील बनाएं।
- मढ़ाई करने वाले यंत्रों (थ्रेसर) आदि को उचित रूप से ग्रीस आदि देकर तैयार कर लें तथा चलाकर देख लें जिससे थ्रेसिंग के समय व्यवधान न हो।
- अचानक वर्षा होने की स्थिति में एवं पकी फसल को ढकने के लिए बड़ी पॉलीथीन इत्यादि तैयार रखें।

बागवानी :

- पिछेती गाजर, शलजम, मटर की तुड़ाई के बाद चारा प्राप्त करें।
- आम, लीची के बागों की सिंचाई पर ध्यान दें।
- आंवले में सिंचाई करते समय हल्का पानी दें ताकि पत्तियाँ एवं पुष्पन अच्छा हो।
- पाला से बचाव हेतु लगाए गए घेरों को हटा दें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

- सुबबूल, अंजन वृक्ष एवं शीशम की कटाई–छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- वन चरागाह पद्धति की स्थापना हेतु पौधशाला तैयार करें। 6×9 इंच की पॉलीथीन थैली में 1:1:1 का मिट्टी, गोबर की खाद, पत्तियों की खाद मिलाकर भरें।
- बीज उपचार कर वृक्षों के बीज की बुवाई करें।

फसल संरक्षण :

- चूहों से फसल बचाने के लिये जिंक फॉस्फाइड से बने चुग्गे या एल्यूमिनियम फॉस्फाइड की टिकिया का प्रयोग करें।
- चने में फली छेदक कीट का अधिक प्रकोप होता है। बचाव के लिये मोनोक्रोटोफास (1 मिली./लीटर) अथवा इण्डोसल्फान 1.5 ली. (35 ईसी) को घोल 800 ली. पानी में बनाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।
- बहुवर्षीय घासों जैसे हाईब्रिड नेपियर, गिनी, सिटेरिया घास की रोपाई पहले से तैयार खेतों में करें। रोपाई से पहले 10 टन गोबर की खाद, 60 किग्रा. नत्रजन एवं 40 किग्रा. फॉस्फोरस/हे. की दर से डालें।
- जायद में बोई जाने वाली उर्द मूँग की बुवाई 25–30 सेमी. की दूरी पर लाइनों में (बीज दर 25–30 किग्रा./हे.) करें। बीज को बुवाई से पूर्व ताँबा या सिल्वर युक्त कवकनाशी (2 ग्रा./किग्रा. बीज) से अवश्य उपचारित करें एवं बुवाई के पूर्व 20 किग्रा. नत्रजन एवं 50 किग्रा. फॉस्फोरस भूमि में अच्छी प्रकार मिलाएं।
- गन्ने की नयी फसल लगाने के लिये खेत में 10 टन गोबर की खाद, 60–75 किग्रा. नत्रजन, 80 किग्रा. फॉस्फेट एवं 60 किग्रा. पोटाश/हे. भूमि में अच्छी प्रकार मिलाएं। इसके पश्चात् कम से कम तीन आंखों वाले टुकड़ों को एरीटान (0.25 प्रतिशत) अथवा एगलाल (0.5 प्रतिशत) के घोल से 5 मिनट तक उपचारित करें। गन्ने के टुकड़ों को 75–90 सेमी. की दूरी पर 10 सेमी. गहरी कूडों में बोयें। सहफसली खेती करने के लिये दो कतारों के बीच 90 सेमी. की दूरी रखें।
- गन्ने की पेड़ी से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये खरपतवार नियंत्रण पर विशेष ध्यान दें। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिये पेड़ी से कलिकायें निकलते समय एट्राजिन (2.0 किग्रा.) सक्रिय तत्व/हे. का प्रयोग करें।

पशुपालन :

- पशुओं को समय–समय पर पेट के कीड़े मारने (डिवर्मिंग) की दवा (3–4 माह के अंतराल पर) चिकित्सक की सलाह से अवश्य देना चाहिए।
- पशुओं को बाह्य परजीवी (टीक्स) से बचाने के लिए मैलाथियान के एक प्रतिशत घोल को प्रभावित जगह पर लगाना चाहिए तथा धुलाई कर साफ कर देना चाहिए।
- पशुओं की संख्या अधिक होने पर उन्हें बाह्य परजीवी से बचाने के लिए डीपिंग का तरीका अपनाना चाहिए। पशुओं को पिछले (0.2 प्रतिशत) या मैलाथियान (0.1 प्रतिशत) के घोल में डुबाया जाता है (सिर का भाग छोड़कर)।

अप्रैल

फसलोत्पादन :

- देर से बोये गये गेहूँ में अंतिम सिंचाई दाने भरते समय करें।
- फरवरी–मार्च में बोई गयी लोबिया, मक्का एवं चरी की सिंचाई 8–10 दिन के अंतराल पर करें।
- गन्ने की पेड़ी/रैटून में 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहें।
- लूसर्न/बहुवर्षीय घासों की सिंचाई 14–18 दिन पर करें।
- गेहूँ की फसल की कटाई का यह उपयुक्त समय है फसल पकते ही कटाई करें।
- जौ की देर से बोई गई फसल पकने की उचित अवस्था में आने पर कटाई करें।

- बीज के लिए छोड़ी गयी बरसीम की दानों के पकने पर कटाई करें।
- फरवरी में चारे के लिए बोयी गयी ज्वार की कटाई 45–50 दिन की अवस्था पर करें।
- गेहूँ, सरसों, चना आदि से खाली खेतों में चारे के लिए चरी की बुवाई के लिए खेत तैयार करें एवं बुवाई करें।
- भूसा अथवा अन्य फसल अवशेषों का उचित भंडारण करें।

बागवानी :

- ग्रीष्मकालीन सब्जियों की सिंचाई करते रहें। रोग एवं कीट से सुरक्षा करें।
- बेर फल की कटाई छंटाई करें। हरी पत्तियों को चारा (पाला) के रूप में प्रयोग करें। शाखाओं को बाड़ या जलाने हेतु प्रयोग करें।
- विगत वर्ष लगाए फल वृक्षों को गर्मी एवं लू से बचाव हेतु थालों में उपलब्ध घास/पुआल/पॉलीथीन की मल्चिंग करें।
- जीवनयापन हेतु सिंचाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- सुबबूल, अंजन इत्यादि वृक्षों के बीज इकट्ठा करें।

फसल संरक्षण :

- ज्वार/लूसर्न एवं बहुवर्षीय घासों की कटाई 20–25 दिन के अंतराल पर करते रहें एवं घासों में प्रत्येक कटाई के पश्चात् 30 किग्रा./हे.की दर से नत्रजन का छिड़काव करें।
- पौधशाला में लगे पौधों की सिंचाई रोग एवं कीट नियंत्रण पर ध्यान दें।

पशुपालन :

- यदि हरे चारे का उत्पादन उपयोग से अधिक हो तब हरे चारे को धूप में सुखा कर 'हे' के रूप में संरक्षित कर लेना चाहिए। इस प्रकार से संरक्षित हरे चारे का उपयोग गर्मी के मौसम में पूरक के रूप में प्रयोग करना चाहिए।
- मार्च–अप्रैल में भेड़ों की ऊन जरूर काटना चाहिए। यदि सम्भव हो तो यह कार्य मार्च के प्रारम्भ में कर लेना चाहिए।

मई

बीज भंडारण करना :

जई

- जई की पिछेती प्रजातियों में फसल के पकने पर कटाई, थ्रेसिंग, बीजों को सुखाना एवं कीटनाशक से संशोधित कर बीज भंडारण करें।

बरसीम

- बरसीम में बीज पकने की अवस्था में रागिंग जरूरी है। फसल की कटाई, थ्रेसिंग तथा बीजों की सफाई करें।

बागवानी :

कलमी पौधे

- फल वृक्ष लगाने हेतु पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की 6–8 मीटर की दूरी पर (प्रजाति/किस्मों के अनुसार) 1×1×1 घनमीटर का गड्ढ़ा इस प्रकार खोदें जिससे कि आधी–आधी मिट्टी दोनों ओर रहे। सूर्य विकरण उपचार से मिट्टी रोग/कीट मुक्त हो जाता है।
- ग्रीष्मकालीन सब्जियों की सिंचाई सायंकाल करें, इससे पानी की बचत एवं उपयोग अच्छा होगा।

धान :

- मई के द्वितीय पखवाड़े में धान की नर्सरी की तैयारी शुरू कर देनी चाहिए तथा अंतिम पखवाड़े तक नर्सरी डाल दें।
- सुगंधित प्रजातियों की नर्सरी के लिए जून तक इंतजार करें। एक हेक्टेयर धान के लिये 500–800 वर्गमीटर क्षेत्र में नर्सरी डालने की आवश्यकता होती है।

- जलभराव एवं जलक्रांत क्षेत्रों में जहाँ गहरे पानी वाले धान की खेती/कास्त की जाती है वहाँ धान की बुवाई फरवरी–मार्च के माह में कर दी जाती है। यथा आवश्यकता उर्वरकों का छिड़काव एवं पानी से सिंचाई करते रहने से फसल की अच्छी बढ़वार प्राप्त होती है। साथ ही जब वर्षा के पानी की अधिकतम फसल को डुबोती है तब अधिक नुकसान होता।

ढैंचा की हरी खाद :

- ग्रीष्मकालीन जुताई यदि अप्रैल में नहीं की जा सकी हो तो मई के प्रथम सप्ताह तक अवश्य करें। प्रत्येक वर्ष जुताई की तुलना में एक वर्ष के अंतराल पर जुताई उचित रहती है।
- जुताई मिट्टी पलट हल से लगभग 20 सेमी. गहरी की जानी चाहिए।
- पानी की सुविधा होने पर सनई अथवा ढैंचा की हरी खाद के लिये बुवाई करें तथा फसल 35–40 दिन की होने पर खेत में पलट दें।
- खेत की मेड़बन्दी कर लें जिससे खेत की मिट्टी का बहाव रूक सके एवं खेत वर्षा का पानी सोख सके।

गन्ना :

- गन्ने की सिंचाई 12–15 दिन के अंतराल पर करते रहें। चारे के लिये बोई गई जई एवं बहुवर्षीय घासों को 10–12 दिनों के अंतर पर सींचते रहें तथा बहुवर्षीय घासों एवं चरी में प्रत्येक कटाई के बाद 30 किग्रा. नत्रजन/हे. की दर से डालें। इस 30 किग्रा. नत्रजन में से 10 किग्रा. कटाई के तुरन्त पश्चात् एवं शेष 20 किग्रा. कटाई के 10–12 दिन बाद डालें तो उर्वरक का असर अधिक लाभदायक होगा।
- जायद में बोई गई उर्द, मूँग आदि की तुड़ाई करें एवं सुखाकर मड़ाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- वन–चरागाह पद्धति स्थापना हेतु 1×1×1 घन फीट का गड्ढ़ा 5–8 मीटर (प्रजाति के अनुसार) की दूरी पर करें। सूर्य विकरण से मिट्टी में रोग/कीट का नाश होता है। इसके साथ ही नर्सरी में लगाए गए पौधों की देख–रेख करें या वन विभाग/उद्यान विभाग से प्रजाति की उपलब्धता निश्चित करें।
- जिन स्थानों पर वृक्षों की रोपाई करनी है वहाँ 50 सेमी. चौड़ाई एवं 1.0 मी. गहराई के गड्ढ़ों की खुदाई करें तथा मिट्टी को गर्मी की धूप में तपने हेतु छोड़ दें जिससे, कीड़े, बीमारी आदि गर्मी की धूप से मर जाएं।
- चारे के लिये बोई गई चरी, मक्का एवं बहुवर्षीय घासों की कटाई करें।
- घासों की पौधशाला डाल दें। घास की क्यारी की चौड़ाई 1.0 मीटर रखें।

पशुपालन :

चारे का संरक्षण –

- रबी की फसलों से प्राप्त भूसे एवं लीफ मील को दाना, चोकर, भूसी तथा चूनी का संतुलित मिश्रण बनाकर उसे भिगोकर पशुओं को खिलाएं।
- भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी द्वारा विकसित पूर्ण पशु आहार वाले फीड ब्लाक (चारे के गट्ठर), फीड पैलेट (चारा गोली) को यथा आवश्यकता भिगोकर पशुओं को खिलाएं।
- फीड ब्लाक बनाने हेतु इस संस्थान द्वारा विकसित मशीन एवं पद्धति का प्रयोग करें।
- धान के साथ चारे वाली घासों में पैरा, सिटेरिया, मछौरी घास की जड़ों की रोपाई मार्च में कर देनी चाहिए और मई के महीने में पशुओं को काटकर खिलाते रहना चाहिए।
- मई के महीने में पशुओं को गलघोटूं, फड़किया, खुरपका, मुँहपका तथा लंगड़ी इत्यादि रोगों से बचाव हेतु टीकाकरण करा लेना चाहिए।

- गर्मी से बचाव हेतु पशुओं को छाये में बाँधना चाहिए।

मृदा प्रबंधन :

- मई के महीने में ऊसर भूमियों की गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए और वर्षा के पानी को निकालने का सही प्रबंध करना चाहिए, जिससे वर्षा के पानी में लवण घुल मिल जाएं और क्षार भी वर्षा के पानी साथ घुलकर निचले स्थानों की ओर चले जाए।

जून

फसलोत्पादन :

- इस माह खेतों की मेड़बन्दी अवश्य पूरी कर लें।

धान :

- मई माह में यदि धान की नर्सरी न बना पायें हो तो उक्त कार्य प्रथम पखवाड़े तक पूर्ण कर लें।
- सुगंधित धान की किस्मों की नर्सरी तीसरे सप्ताह तक डालें। प्रति क्यारी (1.25×8 वर्ग मी.) में 225 ग्राम यूरिया, 500 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 50 ग्राम जिंक सल्फेट डालें।

सोयाबीन, ज्वार, मक्का एवं लोबिया :

- सिंचाई की सुविधा होने पर सोयाबीन, ज्वार, मक्का की बुवाई द्वितीय पखवाड़े तक पूर्ण कर लें।
- चारे के लिये बोयी जाने वाली ज्वार, बाजरा, मक्का तथा लोबिया आदि के लिये तैयारी करें।
- सोयाबीन की बुवाई के लिये 75 किग्रा. बीज/हेक्टेयर पर्याप्त होता है।
- जल उपलब्ध होने पर इसकी बुवाई जून के द्वितीय पखवाड़े में करें।
- उपर्युक्त फसलों को एकल अथवा लोबिया के साथ मिलाकर बोया जा सकता है।
- चारा फसलों की बुवाई 30 सेमी. दूर पंक्तियों में करें।
- बुवाई के लिये मक्का की संकर प्रजातियों के 18–20 एवं संकुल प्रजातियों के 20–25 किग्रा. मक्के के बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। जबकि ज्वार का 12–15 किग्रा. बीज पर्याप्त होता है।
- संकर एवं संकुल मक्की 60 सेमी.की दूरी पर पंक्तियों में एवं देशी मक्का तथा ज्वार को 45 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए। पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी. रखनी चाहिए। जल की उपलब्धता होने पर अरहर की बुवाई जून के प्रथम सप्ताह एवं वर्षा आधारित क्षेत्रों में वर्षा प्रारम्भ होने पर ही करें। एक हेक्टेयर के लिये 12–15 किग्रा. बीज पर्याप्त होता है। बीज को थीरम 2.5 ग्रा./किग्रा. बीज की दर से अवश्य उपचारित करें।

मूँगफली :

- माह के प्रथम पखवाड़े में मूँगफली की बुवाई के लिये तैयारियां करें एवं द्वितीय पखवाड़े तक बुवाई करें। बुवाई के लिए बीज सावधानी पूर्वक छिलके से निकालें। इसके लिए मशीन का प्रयोग अच्छा होगा।
- फैलने वाली मूँगफली की प्रजातियों की 80–100 किग्रा. एवं गुच्छेदार प्रजातियों को 60–80 किग्रा. बीज/हे. पर्याप्त होता है।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- वृक्षों की रोपाई वाले गड्ढ़ों में गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट के साथ मिलाकर भर दें।

बहुवर्षीय घास :

- बहुवर्षीय घासों के लिये खेत तैयार रखें। ताकि वर्षा आरम्भ होने पर रोपाई की जा सके।
- घास के पौधशाला की देखभाल करें एवं समयानुसार सिंचाई करें।

फसल संरक्षण :

धान, मक्का, ज्वार एवं अरहर

- धान, मक्का, ज्वार आदि फसलों में अच्छी सड़ी

गोबर की खाद/कम्पोस्ट 10 टन/हे. की दर से बुवाई के 20–25 दिन पहले डालें। एवं मिट्टी में अच्छी प्रकार मिलाएं।

- मक्का एवं ज्वार में सिंचित दशा में कुल 100:40:40 किग्रा. नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश का प्रयोग करें।
- जबकि बारानी परिस्थितियों में 60:40:40 किग्रा. उक्त उर्वरकों की मात्रा डालें। नत्रजन की दो तिहाई मात्रा बुवाई के समय एवं शेष मात्रा 40–45 दिन बाद डालें।
- अरहर में बुवाई के समय 100 किग्रा. डी.ए.पी. प्रति हेक्टेयर डालें।
- फरवरी, मार्च में रोपी गई गिनी, नेपियर, सिटेरिया की कटाई करते रहें तथा कम अंतराल पर पानी और आवश्यकतानुसार उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट डालते रहें।

बीज प्रसंस्करण एवं भंडारण

- जई में बीज प्रसंस्करण एवं भंडारण करें।
- बरसीम की पिछेती प्रजातियों में फसल कटाई, थ्रेसिंग, सफाई एवं बीजों का सुखाना तथा कीटनाशक से बीजों को संशोधित कर उनका भंडारण करना चाहिए।

बेर

- बेर के बीज पौध की कलिकायन कर अच्छी किस्म में बदलें। खरीफ सब्जियों के लिए खेत की तैयारी करें।
- गड्ढ़े में सड़ी गोबर की खाद एवं दीमकनाशी दवा मिलाकर भरें।
- नर्सरी में लगाए गए पौधों की देखभाल करें। वन विभाग में उपलब्ध पौधों को सुरक्षित करा लें।

पशुपालन :

- गर्मी से बचाव हेतु पशुओं को वृक्षों की छाया में रखें।
- पशुओं को गर्म पदार्थ एवं गर्मी युक्त चारा जैसें ढैंचा, सनई तथा अन्य तेलीय पदार्थ वाले पौधों को चारा न खिलाएं अन्यथा गर्भ गिरने का खतरा बना रहता है तथा पशुओं की उत्पादकता भी गिरती है।
- रबी की फसलों से बनाये गये फीड ब्लाक (चारे के गट्ठर), फीड पैलेट (चारा गोली) को यथा आवश्यकता खिलाते रहें।
- बचे–खुचे पशुओं का टीकारकण अवश्य करा लेना चाहिए।

जुलाई

फसलोत्पादन :

धान

- जुलाई मास कृषि कार्यों के लिये सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। इस माह धान की रोपाई पूर्ण कर लें। रोपाई के लिये 40 दिन पुरानी पौध का प्रयोग करें। मक्का, ज्वार, बाजरा, मूँगफली, उर्द, मूँग आदि की बुवाई क्षेत्र विशेष के लिये समर्थित क्रियाओं के अनुसार करें। बहुवर्षीय घासों की रोपाई 100×50 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में करें।

मक्का, ज्वार, बाजरा, मूँगफली, उर्द, एवं मूँग –

- समय से बोयी गयी मक्का, ज्वार, बाजरा,उर्द, मूँग एवं मूँगफली में निराई–गुड़ाई करें तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. करें।
- मूँगफली की फसल 35–40 दिनों की होने पर निराई–गुड़ाई करें एवं मिट्टी चढ़ाएं। सोयाबीन की भी निराई–गुड़ाई करें।
- खरीफ चारा फसलें जैसे–ज्वार, बाजरा, मक्का, ग्वार, लोबिया के लिए खेत की 2–3 जुताई करें। जुलाई के दूसरे एवं तीसरे सप्ताह में बीजों की बुवाई करें।
- बुवाई के समय बीजों का थीरम या बैविस्टीन (2.5 ग्रा./किग्रा. बीज की दर से) उपचार करके बोएं। बुवाई के तुरन्त बाद एवं अंकुरण से पहले ज्वार, बाजरा एवं मक्का में एट्राजीन (1.5 किग्रा./हे. 600 लीटर पानी में) का छिड़काव करें।

- समय से बोयी गयी बाजरा, ज्वार एवं मक्का में थिनिंग के पश्चात नत्रजन की शेष मात्रा डालें।

बागवानी :

कलमी पौधे

- गड्ढ़े की भराई करें। दो या तीन अच्छी वर्षा हो जाए तब गड्ढ़ों के बीच में कलमी पौध की रोपाई करें।
- अच्छी वर्षा होने पर बहुउद्देशीय पौध लगाएं। विगत वर्ष लगाए गए बागों में मृत पौध की जगह नई पौध लगाएं।
- आंवले के पुराने/बीजू पौध में कलिकायन कर अच्छी किस्मों में बदलें। खरीफ सब्जियों की बुवाई करें।

दलहनी चारा :

- अच्छी वर्षा होने पर घास की रोपाई 50×50 सेमी. पर करें। यदि बीच में दलहनी चारा लगाना हो तो 100×50 सेमी. की दूरी पर घास की रोपाई करें और बीच में दलहनी चारे की एक पंक्ति डालें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- वर्षा शुरु होते ही वृक्षों की रोपाई वाले गड्ढ़ों में मृदा जलवायु उपयुक्त वृक्षों की रोपाई करें।
- फसलों की उत्तम पैदावार हेतु खेतों की मेंड़ों की मजबूत मेंड़बंदी करें।
- शुष्क क्षेत्रों में बाजरा, ग्वार के साथ खेजड़ी के वृक्षों की स्थापना करें।
- पानी की उपलब्धता को ध्यान में रखकर अन्न, चारा एवं नकदी फसलों के साथ स्थानीय आवश्यकता, मिट्टी और जलवायु को ध्यान में रखकर वृक्षों की प्रजातियों की रोपाई करें।
- पोषक तत्वों की उपलब्धता, नमी के संरक्षण, खरपतवारों की रोकथाम, आदि हेतु वृक्षों की पत्तियों का बिछावन आदि करें।
- फसलों की पंक्तियों में वृक्षों की पत्तियाँ, बिछावन आदि बिछाएं। यह क्रिया बुवाई से पूर्व उर्वरकों के मिश्रण के साथ भी की जा सकती है।
- खरपतवारों को नष्ट करते हुये खेत के एक कोने में सुपर फॉस्फेट एवं अमोनियम फॉस्फेट के मिश्रण से सुपर कम्पोस्ट बनाएं और उर्वरकों के साथ फसलों में प्रयोग करें।
- खेतों की खाली मेंड़ों पर वृक्षों एवं चारा घासों की रोपाई करें जिससे मेंड़ों की सुरक्षा एवं पशुओं के लिए चारा प्राप्त होता रहे।

बहुवर्षीय चारे

- बहुवर्षीय घासों में रोपाई के समय 60:40 किग्रा. नत्रजन एवं फॉस्फोरस/हेक्टेयर की दर से डालें।
- गिनी, नेपियर, सिटेरिया बहुवर्षीय चारा घासों की रोपाई करें और स्थापित घासों की कटाई 40 से 45 दिनों के अंतर पर करते रहें तथा कम अंतराल पर पानी और यथा आवश्यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट डालते रहें।
- गिनी, नेपियर,सिटेरिया की रोपाई हेतु 20 सेमी. गहराई की नाली बनाएं और 50 सेमी. की दूरी पर दो से तीन घास की जड़ों की लगातार रोपाई करें।
- जून के शुरुआत में बोई गई चरी की कटाई करें।
- बहुवर्षीय चारों की कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् 30 किग्रा. नत्रजन/हे. की दर से छिड़काव करें।
- अंजन, मार्बल एवं धामन घासों की तैयार नर्सरी से खेतों में रोपाई करें ।
- स्टाइलो दलहनी चारे की बुवाई करें ।

पशुपालन :

- ज्यादातर भेड़ एवं बकरियों में प्रजनन जुलाई एवं अगस्त में होता है। इस समय इन्हें 150–200 ग्रा. अतिरिक्त दाना खिलाने से इनमें जुड़वां बच्चे पैदा होने की संभावना बढ़ जाती है।
- वर्षा ऋतु में मक्खी एवं मच्छर का प्रकोप बढ़ जाता है। पशुओं को इनसे बचाने के लिए रात में धुएं इत्यादि का प्रबंध करना चाहिए।

अगस्त

फसलोत्पादन :

धान

- धान की शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की बुवाई पूर्ण करें। देर से पकने वाली प्रजातियों की बुवाई अब न करें।

बाजरा

- बाजरा की बुवाई यदि रह गयी हो तो शीघ्र पूर्ण करें।

उर्द, मूँग

- उर्द, मूँग में यदि गुड़ाई न की गयी हो तो गुड़ाई कर दें।
- सोयाबीन में पहली निराई होने के 20–25 दिन बाद दूसरी निराई गुड़ाई करें।

मूँगफली

- मूँगफली में दूसरी निराई–गुड़ाई बुवाई के 30–40 दिन बाद करके मिट्टी चढ़ाने का कार्य करें।

फसल संरक्षण :

धान

- धान की रोपाई के 25–30 दिन बाद अधिक उपज वाली प्रजातियों में 25–30 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर की दर से डालें। मक्का में नरमंजरी निकलते समय 40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर की दर से खेत में छिड़काव करें।

ज्वार, बाजरा, मक्का लोबिया :

- समय से बोई गयी अधिक उत्पादन वाली बाजरा प्रजातियों में नाइट्रोजन की शेष मात्रा (30–40 किग्रा.) का छिड़काव करें।
- चारे के लिए बोई गयी ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया आदि की कटाई करें।
- ज्वार, बाजरा की 2 कटाई वाली प्रजातियों में 30–40 किग्रा. नत्रजन/हे. की दर से छिड़काव करें। छिड़काव के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- चारा की सभी फसलों की गुड़ाई एवं निराई करें।

बागवानी :

कलमी पौधे

- कलमी पौधों की रोपाई करें। विगत वर्ष लगाए गए बागों में मरे हुए पौधों की जगह दूसरे पौधे लगाएं।
- खरीफ सब्जियों की रोग/कीट से सुरक्षा करें तथा जल निकास की व्यवस्था करें।
- वन–पौध/बहुउद्देशीय पौध की रोपाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- घास की रोपाई करें। विगत वर्ष लगाए गए चरागाह में मरे हुए पौध की जगह नई घास के पौध की रोपाई करें।
- यदि पुराने चरागाह में चारा की अच्छी बढ़त हो गयी हो तो हरा चारे की एक कटान अगस्त के अंत में कर लें।
- खाद्यान्न एवं नकदी फसलों की खेती के साथ–साथ फसलों एवं वृक्षों की रोपाई करें जिससे पशुओं को चारा एवं लकड़ी तथा अपने लिये खाद्यान्न एवं नकद राशि प्राप्त होती रहे।
- भावी पीड़ियों के जीवन संरक्षण हेतु वर्षा के जल का सही एवं स्वस्थ संरक्षण आवश्यक है और इस कार्य हेतु भारत सरकार की जल संचयन योजनाओं का भरपूर लाभ उठाएं।
- वर्षा ऋतु में यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता के कारण पशुओं को चारा प्राप्त होता रहता है फिर भी किसान खाद्यान्न एवं नकदी फसलों के साथ वृक्षों एवं चारा घासों की स्थापना द्वारा पूरे वर्ष पशुओं के लिये चारा प्राप्त कर सकते हैं।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों की रोपाई यदि जुलाई माह में पूर्ण न हो पाई हो तो शीघ्र पूर्ण करें।
- गिनी, नेपियर, सिटेरिया बहुवर्षीय स्थापित चारा घासों की कटाई 40 से 45 दिनों के अंतर पर करते रहें तथा कम अंतराल पर पानी और यथा आवश्यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट डालते रहें।

- वर्षा ऋतु में इन घासों की पुरानी जड़ें जो सड़–गल गई हों और काले रंग की हो गयी हों तो उन्हें श्रमिकों अथवा ऑफबारिंग ट्रैक्टर चालित मशीन से कटाई करते रहना चाहिए। जिससे नई जड़ों एवं घासों के कल्लों को निकलने में आसानी होती है।

फसल संरक्षण :

- चूंकि इस मौसम में हरे चारे की उपलब्धता बढ़ जाती है, अतः इस समय हरे चारे को साइलेज के रूप में संरक्षित कर लेना चाहिए।

पशुपालन :

- इस मौसम में चारे में शुष्क पदार्थ की मात्रा काफी कम होती है जिससे पशुओं का पेट नहीं भर पाता हैं अतः पशुओं को सूखा चारा 2–4 किग्रा./व्यस्क पशु के हिसाब से खिलाना चाहिए।

सितम्बर

फसलोत्पादन :

तोरिया

- तोरिया की बुवाई के लिए सितम्बर का दूसरा पखवाड़ा उत्तम है। अतः प्रथम पखवाड़े में खेत तैयार कर उसके बाद बुवाई करें। बुवाई के लिए 4–5 किग्रा. उपचारित (3.5 ग्रा. डायथेन एम–45/किग्रा.) बीज प्रति हेक्टेयर 30 सेमी. की दूरी पर कतार में करें। कूड़ों की गहराई 3–4 सेमी. से अधिक होनी चाहिए।
- तोरिया के लिये सिंचित दशाओं में 50 किग्रा. नत्रजन, 50 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 किग्रा. पोटाश का प्रयोग कूड़ों के बगल में पट्टी के रूप में या छिड़काव द्वारा करें। जबकि असिंचित क्षेत्रों में उर्वरक की दर 50 किग्रा. नत्रजन, 30 किग्रा. फॉस्फेट एवं 30 पोटाश किग्रा. प्रति हेक्टेयर रखें।
- फॉस्फोरस के लिये विशेषकर सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करें। उक्त उर्वरक उपलब्ध न होने पर 30 किग्रा. गंधक/हेक्टेयर का भी प्रयोग करें।

धान

- धान में बालियाँ फूटने एवं फूल निकलते समय पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- धान में दूसरी/अन्तिम टॉप ड्रेसिंग, बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था (रोपाई के 50–55 दिन) पर करें। टॉप ड्रेसिंग की दर अधिक उपज वाली प्रजातियों में 30 किग्रा. नत्रजन एवं सुगंधित प्रजातियों में 15 किग्रा./हेक्टेयर रखें।

मक्का

- दाने वाली मक्का में बारिश होने की दशा में जल निकास की व्यवस्था करें। लेकिन यदि भूमि में नमी की कमी हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। क्योंकि फसल में नर मंजरी निकलने की अवस्था एवं दाने की दूधियावस्था में जल की समुचित उपलब्धता अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
- जुलाई के द्वितीय पखवाड़े या अगस्त के प्रथम सप्ताह में चारे के लिये बोयी गयी मक्का की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें। साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

ज्वार

- दाने वाली ज्वार से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये भूमि में नमी की कमी होने पर बाली निकलते या दाना भरते समय सिंचाई करें।
- जुलाई के द्वितीय पखवाड़े या अगस्त के प्रथम सप्ताह में चारे के लिये बोयी गयी ज्वार की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें।
- बहुकटाई वाली ज्वार की भी कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें। साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

बाजरा

- बाजरा की उन्नत/संकर प्रजातियों में नत्रजन की

शेष आधी मात्रा (40–50 किग्रा.) बुवाई के 25–30 दिन बाद करें। दो कटाई वाली बाजरा में भी 40–50 किग्रा. नत्रजन का छिड़काव पहली कटाई के पश्चात् करें।

- बहुकटाई वाली बाजरा की भी कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

लोबिया

- लोबिया की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

दलहनी एवं सोयाबीन

- लम्बे समय तक बारिश न होने पर उर्द, मूँग एवं सोयाबीन में फलियाँ बनते समय पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिऐ हल्की सिंचाई करें।

मूँगफली

- मूँगफली में खूँटियां बनते समय एवं फली भरने की अवस्था में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिये आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करें तथा अधिक वर्षा होने पर उचित जल निकास की व्यवस्था करें।
- मूँग एवं तिल आदि की कटाई करें।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों में कटाई के पश्चात् 30–40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर का छिड़काव करें।
- पशुधन की आवश्यकतानुसार, रोपी गई बहुवर्षीय गिनी, नेपियर, सिटेरिया की कटाई करें यथा आवश्यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट खाद डालते रहें।
- यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता बनी रहती है फिर भी इन घासों को स्वयं के ज्ञान के आधार पर, अंतराल निर्धारित कर यथा आवश्यकता पानी लगाएं और बराबर कटाई करते रहें।
- पैरा, सिटेरिया, कल्लर, मछौरी जैसी बहुवर्षीय घासों को मार्च–अप्रैल में जिन किसान भाइयों ने स्थापना की है वहाँ, वर्षा के जल भराव निश्चित है अतः घासों की भरे हुये जल के ऊपर से ही कटाई करें।
- घासों को पूर्ण रूप से न डूबने दें अन्यथा जल भराव से चारा घासें नष्ट हो सकती हैं, जल निकासी पर ध्यान दें।

बागवानी :

कलमी पौधे

- वर्षा ऋतु में रोपित फलों के कलमी पौधों की मूलवृन्त तथा संकुर शाखा से निकलने वाले अवांछनीय शाखाओं को काटें।
- थालों में नमी की कमी हो तो जीवनयापन हेतु हल्की सिंचाई करें तत्पश्चात् थालों की गुड़ाई करें।

बेर

- बेर के फल वृक्ष पर सूक्ष्म तत्वों एवं वृद्धि नियामक दवा (नेथलीन एसीटीक एसिड) का 20 बूँद/ लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यदि पत्तियों पर पत्ती छेदक कीट का प्रकोप दिखे तो मोनोक्रोटोफास के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

आंवला

- आंवला में फलों के झड़ने को कम करने हेतु वृद्धि नियामक दवा छिड़कें। बोरान, जिंक सूक्ष्म तत्वों का (0.1 प्रतिशत) छिड़काव करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- वर्षा रोपित पौधों को कृन्तन कर सही आकार दें।
- जीवनयापन हेतु पानी देकर थालों की गुड़ाई करें।
- पुराने पौधों को कटाई–छंटाई द्वारा सही आकार दें।
- रोपित पौध को जीवन यापन हेतु 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहें।
- प्राकृतिक एवं बोए हुए चरागाहों से घासों की कटाई आरंभ करें। घास की कटाई के बाद उन्हें इकट्ठा करें। खेतो में छोटे बंडल बनाकर सूखने के लिए रखें। सूखे घास की गज्जी बनाएं।

- खरीफ में बोई गई फसलों की निराई–गुड़ाई करें।
- जल भराव के समय भी घासों की बढ़वार के लिये नत्रजन की आवश्यकता होती है अतः यूरिया के बड़े दाने अथवा पर्त कोटेड यूरिया से नत्रजन की पूर्ति करनी चाहिए।
- चरागाहों एवं बंजर भूमियों पर जहाँ चारा घासें बहुतायत से लगाई गई हैं उनसे प्राप्त चारा फसलों के बीज पक जाते हैं इन्हें श्रमिकों द्वारा, बैल चालित अथवा ट्रैक्टर चालित बीज एकत्रीकरण यंत्र के द्वारा एकत्र किया जा सकता है।

फसल संरक्षण

- ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया एवं ग्वार में पत्तों पर लाल, भूरे रंग के धब्बे दिखाई दें तो डायथेन एम–45 का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

पशुपालन

चारे का संरक्षण

- वर्षा ऋतु में यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता के कारण पशुओं को चारा प्राप्त होता है और इस समय आवश्यकता से अधिक चारा उपलब्ध रहता है इस चारे का सही रूप में संरक्षण करें और भविष्य में आने वाली चारे की कमी से बचें।

चारा बैंक

- वर्षा के जल का सही एवं स्वस्थ संरक्षण बनाये रखें। अतिरिक्त चारे को चारा बैंक के रूप में एकत्र कर सामुदायिक व्यवस्था के तहत बड़े स्तर पर भी पशुओं को खिलाया जा सकता है।

अक्टूबर

फसलोत्पादन :

गेहूँ, जई एवं जौ

- गेहूँ, जई, जौ एवं रबी में बोयी जाने वाली दलहन एवं तिलहनी फसलों के लिये खेत तैयार करने के लिए खरीफ फसलों से खाली करें।
- यदि खेत तैयार हो गया हो तथा तापमान कम हो तो द्वितीय पखवाड़े में गेहूँ की बुवाई की जा सकती है।

बरसीम

- बरसीम की बुवाई के लिये खेत तैयार कर पानी की उपलब्धता होने पर बुवाई करें।

मूँगफली

- समय से बोयी गयी मूँगफली में सिंचाई कर पर्याप्त नमी बनाएं रखें।
- अगेती बोई गई मूँगफली की खुदाई कर रबी फसलों के लिये खेत तैयार करें।

चना, मटर, मसूर

- अक्टूबर के अंत में तैयार खेतों में चना, मटर, मसूर आदि की बुवाई करें। बुवाई हल के पीछे कूड़ों में या कतारों में करें।

धान

- धान के खेत में पर्याप्त नमी बनाएं रखें।
- धान उगाने वाले क्षेत्रों में खड़ी धान की फसल में चारे के लिये बरसीम तथा तेल पैदा करने वाली फसलों में सरसों के बीज का छिड़काव किया जा सकता है जिससे धान की कटाई के साथ–साथ रबी फसल बढ़कर तैयार हो जाती है और 35 से 40 दिन के अंतराल पर पशुओं के लिये बरसीम का पौष्टिक चारा उपलब्ध रहता है।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों एवं बहुकटाई वाली ज्वार की कटाई करें। कटाई के पश्चात् फसलों को सींचकर 30–40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर का छिड़काव करें।

रबी की फसल

- रबी की फसलों की बुवाई का उत्तम समय अक्टूबर से शुरू होता है। अतः खरीफ की फसलों की इस प्रकार कटाई करें कि वर्षा की नमी से खेतों की तैयारी कर लें। जिन किसान भाइयों के पास पानी के साधन उपलब्ध हैं वे लोग जई, बरसीम, रिजका,

सेंजी, शलजम, चारे हेतु चाइना कैबेज आदि की बुवाई करें।

- रबी फसलों की बुवाई के लिये विभिन्न साधनों द्वारा भूमि की सतहों में नमी का संरक्षण अवश्य करें और इसके लिये खेत तैयार कर आखिरी जुताई बखर से करें, प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें, खेतों को तैयार करने हेतु खुली नाली बनाने वाले यंत्रों की अपेक्षा रोटावेटर एवं रोटासीडड्रिल का बुवाई के लिये प्रयोग करना चाहिए।

मुख्य एवं सहफसल

- सम्पूर्ण उत्तर भारत में गन्ना और आलू पंक्तियों में बोए जाते हैं अतः इन फसलों के खाली स्थानों पर बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलों की बुवाई करनी चाहिए।
- इस पद्धति से खेती करने से मुख्य एवं सहफसल दोनों को ही लाभ होता है।

बागवानी :

बेर एवं अनार

- बेर एवं अनार में कीट एवं रोगों से बचाव तथा आंवला में नमी की कमी हो तो पानी लगाएं।
- नव रोपित पौधों की देख रेख करें ।
- जीवनयापन हेतु 15–15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई करें एवं थालों की गुड़ाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- नव रोपित पौधों की देख–रेख एवं पुराने पौध की आकार देने का कार्य करें।
- घासों की कटाई कर छोटे–छोटे ढेर बनाकर रखें। जब कुछ सूख जाएं तो गज्जी बनाएं। कटे हुए घास में क्रमबद्ध पशु चराई कराएं।

फसल संरक्षण :

बरसीम

- बुवाई से पूर्व बरसीम के बीज को थीरम (0.25 प्रतिशत) या बेविस्टिन (0.20 प्रतिशत) एवं राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें।
- बरसीम के खेत में पानी भरकर बीज का छिड़काव करें।

रिजका (लूसर्न)

- रिजका (लूसर्न) को पंक्तियों में कम गहराई पर बोएं।

बीजों एकत्रित करना

- रबी में बोई जाने वाली फसलें की उन्नत एवं रोग रोधी प्रजातियों बरसीम (बुन्देल बरसीम–1, 2 एवं वरदान)। रिजका/लूसर्न (आर.एल–88, आनन्द–2 तथा चेतक) तथा जई (जेएचओ–822, जेएचओ–820 अथवा केन्ट) उन्नत किस्म की प्रजातियाँ हैं, के बीजों को समुचित मात्रा में एकत्रित करें।

पशुपालन :

- पशुओं के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- पशु घर को साफ रखें। गोबर व मूत्र को दिन में दो बार अवश्य हटाएं।
- समय–समय पर कीटनाशक–जैवनाशक दवाओं का घोल फर्श व दीवारों पर छिड़कना चाहिए।

परजीवीनाशक दवा

- चूंकि इस समय तक वर्षा लगभग खत्म हो चुकी होती है। अतः पशुओं को अन्तः परजीवी नाशक दवा पशु चिकित्सक की सलाह पर वर्ष में दो बार (छः माह के अंतराल) देना चाहिए।
- क्योंकि यदि पशु के पेट में कीड़े हैं तो पशु को दिया गया अधिकांश पोषक तत्वों का लाभ पशु को नहीं मिल पाता है तथा पशु की उत्पादकता कम हो जाती है।

सांस की बीमारी

- इस मौसम में पशुओं को अधिकतर सांस की बीमारी होती है। अतः पशु को खाँसी व सर्दी से बचाव का उपाय करना चाहिए।

खुरपका, मुँहपका रोग

- इस मौसम में एक अन्य बीमारी मुख्यतः खुरपका मुँहपका देखने में आती है। जो कि संक्रामक होती है। इसमें मृत्यु नहीं होती परन्तु इससे पशु की कार्य व उत्पादन क्षमता अत्यन्त कम हो जाती है।
- यह रोग पहले खुरों में होता है और चाटने से मुँह में आ जाता है।
- रोग होने पर पशु को तेज बुखार आता है, मुँह व जीभ पर छाले आ जाते हैं, पशु के मुँह से लार बहती है, खुरों की बीच की जगह में भी छाले आ जाते हैं।
- इस बीमारी के फैलने पर, प्रभावित भाग को लाल दवा 1 प्रतिशत के घोल से उपचारित करना चाहिए।

रोग से बचाव

- खुरपका–मुंहपका रोग से बचाव हेतु स्वस्थ पशु को दो बार टीके लगवाने चाहिए। प्रथम टीका अक्टूबर–नवम्बर में तथा बूस्टर टीका प्रथम टीके के एक माह बाद लगवाना चाहिए। यह टीका प्रतिवर्ष लगवा लेना चाहिए।

भेड़ों का ऊन

- अक्टूबर–नवम्बर में भेड़ों का ऊन जरूर काटना चाहिए। यदि सम्भव हो तो यह कार्य अक्टूबर के प्रारम्भ में कर लेना चाहिए। तथा दूसरी बार मार्च–अप्रैल में काटना चाहिए।

नवम्बर

फसलोत्पादन :

गेहूँ

- गेहूँ की बुवाई पूर्ण कर लें। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इस समय बोने के लिए 100 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर के दर से प्रयोग करें।
- बीज को 2 ग्राम कैप्टान अथवा 2.5 ग्राम थीरम प्रति हेक्टेयर की दर से उपचारित करके बुवाई के समय 60 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 किग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। शेष (60 किग्रा.) नत्रजन की मात्रा बुवाई के 40–45 दिन बाद डालें।
- अगर खेत में जस्ते की कमी हो तो बुवाई के समय 25 किग्रा. जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।
- अक्टूबर के द्वितीय पखवाड़े में बोए गए गेहूँ में 20–25 दिन की अवस्था में 5–6 सेमी. गहरी पहली सिंचाई करें।
- बुवाई कतारों में हल के पीछे या कूड़ों में या फर्टीसीडड्रिल से करें। समय से बोए गए गेहूँ में 20–25 दिन पर 5–6 सेमी. की पहली सिंचाई करें।

जौ, जई

- जौ, जई आदि की बुवाई भी उपर्युक्तानुसार पूर्ण करें।

ज्वार

- यदि ज्वार की कटाई नहीं की गई हो तो शीघ्र ही कर लें।

शलजम

- सितम्बर में यदि शलजम आदि की फसल चारे के लिये बोई गई हो तो कटाई पूर्ण कर लें।

बरसीम, रिजका, सेंजी एवं जई –

- बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलों की बुवाई एकल न करके रबी मुख्य फसलों गेहूँ, जौ, चना, मटर आदि की पंक्तियों के मध्य में करें क्योंकि चारा फसलें अन्न वाली फसलों से प्रतिस्पर्धा नहीं रखती। अतः इस प्रक्रिया से पौष्टिक चारा प्राप्त नहीं होता है साथ ही भूमि की भौतिक दशा में सुधार के साथ–साथ उर्वराशक्ति में भी बढ़ोत्तरी दर्ज होती है।
- चारा फसलों में मुख्य रूप से बरसीम, रिजका, के साथ 10 प्रतिशत सरसों के बीज को मिश्रित कर बोना चाहिए।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों की कटाई करें। इसके बाद यह सुसुप्तावस्था में चली जाती है। जिससे अगली कटाई तापमान बढ़ने पर फरवरी–मार्च में ही प्राप्त होती है।

- वर्षा ऋतु में रोपित पौध की देखरेख करते रहें। थालों में हल्की पानी देकर गुड़ाई करें।
- खेतों में यदि 8 से 10 मी. की दूरी की घासों की पुरानी जड़ें जो सड़गल कर काले रंग की हो जाती हैं उन्हें श्रमिकों अथवा ऑफबारिंग ट्रैक्टर चालित मशीन अथवा कल्टीवेटर से कटाई करते रहना चाहिए जिससे नई जड़ों एवं घासों के किल्लों को निकलने में आसानी होती है।

बागवानी :

आंवला

- आंवले में 15 नवम्बर के बाद तुड़ाई आरंभ करें।

अमरूद

- अमरूद में भी दो तीन दिन के अंतराल पर तुड़ाई आरंभ करें।

बेर

- बेर में चूर्णिल आसिता से बचाने हेतु गंधक युक्त दवा का 1.0 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

हरा चारा

- पुराने पौध/वृक्ष से प्रजातियों के आधार पर आवश्यकतानुसार कृन्तन या कटाई–छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- नए पौध की देख–रेख करें।
- खेतों की मेड़ों पर लगे सुबबूल, ढैंचा, नीम, खेजड़ी, भीमल तथा अन्य काटने एवं छांटने योग्य वृक्षों की जहाँ स्थापना की गई है इन वृक्षों की कटाई एवं छंटाई करते रहना चाहिए जिससे पशुओं हेतु चारा, घरों में उपयोग हेतु ईंधन तथा यथा आवश्यकता फल, फूल और गोंद आदि प्राप्त होता है।

सूखी घास

- सूखी घास को खूब मजबूत बांधकर कठोर बंडल बनाकर रखें। जिसे चारे की कमी के समय पशु को दें। पुराने घासों के मैदान में या कटे घास के मैदान में क्रमबद्ध चराई कराएं।

फसल संरक्षण :

जई

- जई के बीज को ट्राइकोडर्मा 5 ग्रा./किग्रा. से उपचारित कर बुवाई करें।

बरसीम एवं रिजका

- बरसीम एवं रिजका की फसलों की सिचाई करें।
- बहुकटाई वाली फसलों की कटाई समय पर करें।
- खेत में खड़ी फसलों में आवश्यकतानुसार खरपतवार नियंत्रण करें।

पशुपालन :

- पशुओं में सर्दी का प्रकोप कम करने के लिए उन्हें 30 ग्राम हल्दी 250 ग्राम गुड़ में मिलाकर देना चाहिए। खाँसी कम करने के लिए तारपीन के तेल का बफारा दिया जा सकता है।
- छोटे पशुओं खासतौर से भेड़ व बकरियों में जो कि मुख्यतः चराई पर आधारित हों उन्हें फॉस्फोरस (डाई कैल्शियम फॉस्फेट) की 10–15 ग्राम मात्रा प्रतिदिन देनी चाहिए। अथवा डाई कैल्शियम फॉस्फेट की 1–2 किग्रा. मात्रा को एक कुन्तल दाने में मिलाकर खिलाना चाहिए।

दिसम्बर

फसलोत्पादन :

गेहूँ

- यदि गेहूँ की बुवाई शेष हो तो बुवाई पूर्ण कर लें। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- इस समय बोने के लिए 125 किग्रा. गेहूँ के बीज/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। बीज को 2 ग्राम कैप्टान या 2.5 ग्राम थीरम प्रति किग्रा. की दर से उपचारित करके बोयें।
- बुवाई के समय 60 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा.

फॉस्फोरस एवं 40 किग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। शेष आधी मात्रा बुवाई के 40–45 दिन बाद डालें। अगर खेत में जस्ते की कमी हो तो बुवाई के समय 25 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हे. की दर से प्रयोग करें।

- समय से बोये गए गेहूँ तथा जई में 20–25 दिन की अवस्था पर 5–6 सेमी. की पहली सिंचाई करें तथा दूसरी सिंचाई 40–45 दिन पर कल्ले निकलने की अवस्था पर करें।

मसूर

- इस माह में मसूर की बुवाई करने के लिए 55–75 किग्रा. बीज का प्रयोग करें।
- बुवाई कतारों में हल के पीछे या कूड़ों में या फर्टीसीडड्रिल से करें।
- बुवाई के 45–60 दिन के बीच पहली सिंचाई करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद मसूर में गुड़ाई करें।

चना

- चने में बुवाई के 45–60 के बीच पहली सिंचाई करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद चना में गुड़ाई करें।

राई, सरसों

- राई–सरसों में 55–65 दिन पर फूल निकलने के पहले दूसरी सिंचाई अवश्य करें।
- चारा फसलों के साथ 10 प्रतिशत भाग पर सरसों के बीज जो मिश्रित कर बोया गया था उसकी कटाई आवश्यक रूप से करनी चाहिए अन्यथा सरसों की अधिक बढ़वार चारा फसलों की पैदावार को घटा देती है।

जौ एवं मटर

- जौ एवं मटर में पहली सिंचाई बुवाई के 30–35 दिन पर करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद मटर में गुड़ाई करें।

मक्का

- रबी मक्का की फसल में बुवाई के 20–25 दिन की अवस्था पर निराई–गुड़ाई करके सिंचाई कर दें तथा समुचित नमी के लिये समय समय पर सिंचाई करते रहें।
- मक्का की फसल के 30–35 दिन की अवस्था पर (पौधों के लगभग घुटने तक की ऊँचाई) 40 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से पहली बार छिड़काव करें एवं दूसरा छिड़काव मंजरी निकलने के पूर्व करनी चाहिए।

बरसीम

- बरसीम में आवश्यकतानुसार 14–18 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।
- बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलें बढ़वार लेकर कटाई योग्य हो जाती हैं।
- बलुई–दोमट भूमि में नत्रजन की शेष 40 किग्रा. मात्रा का दूसरी सिंचाई के बाद छिड़काव करें।
- बुवाई के 50–55 दिन बाद बरसीम एवं 55–60 दिन बाद जई की चारे के लिये कटाई करें। इसके पश्चात् बरसीम की कटाई 25–30 दिन के अंतराल पर करते रहें।

बागवानी

- नए रोपित पौध को घास–फूस से ढक कर पाले से बचाएं। धुआं या सिंचाई करके भी पाले से बचा सकते हैं।
- आंवले–अमरूद की तुड़ाई कर विपणन करें।
- बेर, अमरूद को गिलहरी और पक्षियों से बचाएं।

चरागाह एवं वन चरागाह

- पुराने स्थापित चारा वृक्ष से प्रजाति के अनुसार 20–30 प्रतिशत कटाई–छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- नए रोपित चारा वृक्ष की देखरेख करें।
- सूखे घास के बंडल को पशु चारा के रूप में प्रयोग करें।
- प्राकृतिक चरागाह में क्रमबद्ध चराई कराएं।

फसल संरक्षण

गेहूँ

- गेहूँ में गेहूँ के मामा की रोकथाम के लिये 2.0 किग्रा. आइसोप्रोटूरान (75 प्रतिशत) 500 लीटर पानी में घोलकर अथवा सल्फोसल्फयूरान 25 ग्राम सक्रिय तत्व 250–300 लीटर पानी में घोल कर पहली सिंचाई के बाद परन्तु 30 दिन की अवस्था के पहले छिड़काव करें।
- सल्फोसल्फयूरान के छिड़काव से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार एवं गेहूँ का मामा का नियंत्रण हो जाता है।
- यदि गेहूँ के मामा का कम अनुपात तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार का अनुपात ज्यादा हो तो 625 ग्राम 2,4–डी सोडियम साल्ट (80 प्रतिशत डब्ल्यू सी) का 500–600 लीटर पानी में छिड़काव 30–35 दिन की अवस्था पर करें।
- गेहूँ में बलुई–दोमट भूमि के लिये 40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर एवं भारी भूमि में 60 किग्रा. की दर से पहली सिंचाई के बाद छिड़काव करें।

जौ

- जौ में भी उक्त खरपतवार नियंत्रण समग्र रूप से कार्य करती है।

जई

- जई में 20–25 दिन की अवस्था पर 20 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

बरसीम

- बरसीम की फसल में यदि तना विगलन रोग के लक्षण दिखें तो बहुकटाई वाली फसलों की कटाई समय पर करें।

पाले से फसल का बचाव

- शरद ऋतु के कारण वातावरण का तापमान काफी कम हो जाता है अतः सभी प्रकार की फसलों को पाले से बचाना चाहिए।
- विशेष रूप से मुलायम फसलें शीघ्र एवं अधिक मात्रा में प्रभावित होती हैं अतः फसलों में पानी लगाना चाहिए।
- जिस दिन पाला गिरने की आशंका हो उस दिन खेतों के आसपास धुआं कर देना चाहिए।

पशुपालन :

- यदि इस समय वातावरण में बादल हैं और पशुओं को खिलाने के अतिरिक्त चारा बचा हुआ है तो उसे छाया में सुखाना चाहिए और गर्मी के मौसम के लिये एकत्र कर रख लेना चाहिए।
- दिसम्बर की चटकीली धूप में सुबबूल, ढैंचा, नीम, खेजड़ी, भीमल तथा अन्य काटने एवं छांटने योग्य वृक्षों की छंटाई के बाद पत्तियाँ एवं डंठल आदि को छाया में सुखाकर 'हे' बनाकर रख लेना चाहिए तथा गर्मी के मौसम में जब कम चारा उपलब्ध रहता है उस समय पशुओं को खिलाना चाहिए।

कृषकों की आय दोगुनी करने की प्रभावी कृषि तकनीकियाँ

सुनील नीलकंठ रोकड़े

कृषकों की विभिन्न समस्याएं, उनकी आत्महत्याएं, उनके कारण एवं उनके निवारण हेतु उपाय, कर्ज की माफी, कृषकों हेतु विभिन्न योजनाएं तथा उनकी आय दोगुनी कैसे की जाये आदि विषयों पर काफी चर्चा होती रहती है। दूरदर्शन, रेडियो तथा अन्य प्रसार माध्यमों पर इनमें सम्बंधित चर्चा हम रोजाना सुनते हैं।

कृषि हमारे भारतवर्ष का प्रमुख व्यवसाय है और यहाँ की जनता का 70 प्रतिशत यानि एक बहुत बड़ा तबका इस क्षेत्र पर अपने गुजर–बसर के लिए निर्भर है। कृषि हमारे देश के अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। इन सारे तथ्यों के बावजूद हमारे देश के किसानों की मौजूदा हालत अच्छी नहीं है। इसके प्रमुख कारण और हालत से उभरकर उनकी आय दोगुनी करने हेतु कौन सी कृषि तकनीकियाँ अपनाई जाये ताकि इस समस्या को जड़ से समाप्त कर, इस पर कोई प्रभावी उपाय खोजा जाये जिससे किसानों का सही मायनों में कल्याण हो। किसान की स्थिति खराब होने का एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि पिछले चंद वर्षों से वैश्विक पर्यावरण का तापमान वृद्धि के कारण वातावरण में बदलाव से मानसून की वर्षा अनियमित हो गई है इससे भारत के कुछ राज्यों में अतिवृष्टि होती है। सन् 2010 में गुजरात, बिहार, असम राज्यों में अतिवृष्टि हुई। उदाहरणीय बात यह है कि जहाँ सामान्यतः बहुत कम वर्षा होती है अर्थात् राजस्थान में वर्ष (2017) अतिवृष्टि हुई है। लेकिन बुन्देलखण्ड में वर्ष (2017 में) सामान्य से 60 प्रतिशत वर्षा कम हुई है। अब भारत के ज्यादातर राज्यों में बारानी खेती होती है। अतः जब वर्षा कम या अनियमित होती है तब फसल उत्पादन कम हो जाता है। दुबारा फसल, रबी में या गर्मी में फसल उत्पादन संभव नहीं हो पाता। अतः ज्यादातर किसान जो बारानी खेती करते हैं वे ज्यादातर गरीबी की स्थिति में रहते हैं।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि खेती में निविष्ठाओं की कीमत (बीज, खाद, सिंचाई करने का खर्च, कीट नियंत्रण का खर्च, मजदूरी का खर्च) काफी ज्यादा बढ़ चुकी है और किसानों को किसी भी फसल की समुचित कीमत नहीं मिलती, जो रकम मिलती है वह कर्ज चुकाने में खर्च हो जाती है और उसके पास कुछ भी नहीं बचता। इससे उसे वर्षभर का रोजमर्रा का खर्च चलाना नामुमकिन हो जाता है। इससे वह हर वर्ष कर्ज लेता है, जो वह चुका नहीं पाता और उस पर कर्ज का बोझ बढ़ता जाता है। इससे उसमें भारी मानसिक तनाव पैदा होता है जिसके चलते वह अत्यधिक निराश हो जाता है और कई बार इस निराशा और मानसिक तनाव से छुटकारा पाने हेतु वह आत्महत्या तक कर लेता है। उपरोक्त परिस्थितियों से उबरने एवं अपनी आय बढ़ाने के लिये कृषक भाइयों को निम्नलिखित उपायों को अपनाना चाहिए।

1. कृषक अपने खेत की मिट्टी तथा कुँए के पानी की जाँच कराये और यह ज्ञात करें कि उसके खेत की मिट्टी में कौन सी फसल तथा कौन सी प्रजाति की फसल की खेती की जा सकती है। उदाहरण : अगर परती काली उपजाऊ मिट्टी है तो कपास, मूँगफली जैसी फसल लगाये। अगर हल्की जमीन है तो मूँग, उरद, ग्वार जैसी फसल लगाये।
2. खेत की मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों के हिसाब से उर्वरक डालें।

3. खरपतवार नियंत्रण समय से करें।
4. कीट प्रबंधन हेतु समेकित कीट प्रबंधन पद्धति अपनाये अगर कीटनाशी का प्रयोग जरूरी है तभी करे। अनुशंसा के अनुसार मात्रा में कीटनाशी दवा डालें अन्यथा कीटों में प्रतिरोधी क्षमता निर्माण होगी और कीट नियंत्रण मुश्किल तथा खर्चीला होगा।
5. खेत में जलप्रबंधन करें। बूँद–बूँद सिंचाई या स्प्रिंकलर फुहार सिंचाई अपनाएं।
6. खेत में बाकी किसान जो फसल लगाते हैं वही फसल न लगाये अन्यथा बाजार में एक ही प्रकार की फसल बहुतायत में आने से भाव कम मिलेगा और आर्थिक नुकसान होगा।
7. जल्दी पकने वाली या देर से पकने वाली फसल दोनों प्रजाति की खेती करें ताकि बाजार में या तो उनकी फसल जल्दी पहुँचे या देर से पहुँचे और उसे बाजार मूल्य ज्यादा मिलें।
8. किसान अपनी उपज का सोच समझकर विपणन करें। कोई भी फसल जब बाजार मण्डी में अधिक मात्रा में पहुँचती है तब उसे बाजार मूल्य कम मिलता है और आर्थिक नुकसान होता है। अतः कोशिश करें कि मण्डी में अधिक कीमत मिलने पर ही अपनी उपज बेंचे।
9. खेती में विविधीकरण अपनाएं, अगर एक ही फसल लगाई और नष्ट हो गयी उसका उत्पादन कम हुआ तो नुकसान होता है अतः एक के बजाय दो, तीन या ज्यादा विभिन्न प्रकार की फसलें लगाये। इससे यह होगा कि अगर एक फसल नष्ट हो गई फिर भी दूसरी मिलेगी। अगर वह भी न मिली तो तीसरी या चौथी फसल से कुछ न कुछ आमदनी होगी। इसके अलावा किसान के खुद के परिवार को संपूर्ण वर्ष में जो भी चाहिए उसको ध्यान में रखते हुए तथा उसके खेत में जो हो सकें ऐसी कई फसलों की वह खेती करें। वह अनाज की फसलें ज्वार, बाजरा, मक्का लगाये ताकि उनसे अनाज तथा पशुओं के लिए चारा भी प्राप्त हो सकें। दालें अरहर, चना उरद मूँग, राजमा आदि जो भी वह लगा सकें लगाएं खेत में सब्जी की खेती भी करें।

सब्जी की खेती : किसान को खेत में उन सब्जियों की खेती करनी चाहिए जो उसके खेत में लगाई जा सकें लेकिन जो सब्जियाँ उस इलाके के ज्यादातर किसान लगाते हैं वह सब्जियाँ न लगाये। उदाहरण रबी में बाजार में फूलगोभी, पत्तागोभी आदि सब्जियाँ एक साथ बड़ी तादाद में विपणन हेतु आती है। जिससे उन्हें बहुत कम बाजार मूल्य मिलता है। यहाँ तक कि शाम को काफी सब्जी बच जाती है तो उसे वापस घर ले जाने के लिए परिवहन का खर्च इतना ज्यादा आता है कि वह घाटे का सौदा साबित होता है और सब्जियाँ फेंक देना पड़ती है। इससे कृषकों को भारी आर्थिक नुकसान होता है। यह टालने हेतु गोभी की तथा अन्य सब्जियों की वह प्रजातियाँ लगाये जो जल्दी परिपक्व/तैयार होती है जिससे बाजार मूल्य ज्यादा मिलेगा और आर्थिक लाभ होगा।

नई प्रजातियों के गोभी की खेती करें : आजकल लम्बी गोभी, लाल पत्तागोभी, हरी फूलगोभी आदि के बीज मिल जाते हैं। इनकी शहरों एवं तीन सितारा या पाँच सितारा होटल में काफी माँग रहती है। वही दूसरी ओर सादा पत्तागोभी या सादा फूलगोभी बड़ी मुश्किल से 20 से 40 रुपया प्रतिकिलो के भाव से बिकती है। अतः नई प्रजातियों की गोभी लगाये।

नई किस्मों की सब्जी की खेती करें : कृषि वैज्ञानिकों ने मूली तथा चुकन्दर का संकर बनाया है जिसका फल बाहर से बैगनी और अंदर सफेद होता है और उसमे मूली तथा चुकन्दर दोनों का स्वाद आता है। अतः

इसकी तथा नई किस्म के बैंगन/भुर्ते के बड़े बैंगन, लम्बी मिर्च, हरी लाल तथा पीले रंग की शिमला मिर्च आदि की खेती करे। इनकी बड़े होटलों तथा अमीर ग्राहकों की ओर से भारी माँग होती है।

खुंभी लगाये : आजकल मध्यवर्ग, उच्च मध्यवर्ग तथा अन्य अमीर ग्राहकों को बटन खुंभी, आईस्टर खुंभी की सब्जी खाने में रूची हो गई है। इसे 60 से 100 रुपया प्रतिकिलो भाव मिलता है अतः इसे लगाकर बेंचे।

स्वीट कॉर्न लगाये : सादा मक्के का भुट्टा 2 से 10 रुपये भाव बिकता है जबकि स्वीट कॉर्न का भुट्टा 20 से 30 रुपये में बिकता है यानि दुगुना या तिगुना भाव मिलता है अतः स्वीट कॉर्न की खेती करें।

सब्जियों को आकर्षक बनाये वर्गीकरण करें : कई किसान गुणवत्ता की ओर ध्यान देते हैं। अतः उन्हें कम बाजार मूल्य प्राप्त होता है। सब्जियाँ समुचित समय पर तोड़े। बैंगन बहुत बड़े न हो। बड़े अंड़े के आकार के होते हो तभी तोड़े। भिंडी हमारी छोटी अंगुली के बराबर हो तभी तोड़े। उन्हें धोवें और टोकरी में अखबार बिछाकर तरीके से रखें ताकि आकर्षक दिखे। सारी सब्जियों को छोटे और आकार अनुसार रखें। सब्जियों के बोरे साफ सुथरे रखें। खराब बोरे इस्तेमाल करने से ज्यादातर सब्जियाँ सड़ जाती है और किसान का आर्थिक नुकसान होता है अतः सफाई रखें।

फलों की खेती करें : कम पानी में खेती योग्य ऑवला, अमरूद, बेल, बेर शरीफा, अनार की खेती करें। खेत के मेड़ों पर फलों के पेड़ लगाये या अलग से करें। कुछ ऐसी व्यवस्था करें कि संपूर्ण वर्ष हर महीने कोई न कोई फल विपणन हेतु प्राप्त हो।

फूलों की खेती करें : आजकल शहरों में जन्मदिन हो या शादी हर कार्यक्रम या त्यौहार पर फूलों की भारी माँग होती है। झंडू गैदा, गुलदाउदी डेजी, देशी गुलाब, मोगरा, जूही ऐसे कई फूल है जिनके लिए साधारण खेती की जा सकती है। इसके लिए उच्च तकनीकी उद्यान विधा के लिए जरूरी सामान की जरूरत नहीं होती है। कुछ ऐसी व्यवस्था करें कि वर्ष में हर महीने कम से कम एक या दो फूलों के किस्म की पैदाबार होती रहे और शहर में स्थित किसी जगह किसी दोस्त या रिश्तेदार के घर या खुद एक छोटी दुकान लेकर खुद फूलों का विपणन करें तो मुनाफा अधिक मिलेगा।

फूल खेती के साथ मधुमक्खी पालन करें : आजकल शहरों में शुद्ध शहद मिलता। अगर मिलता है तो 300 से 400 रुपया प्रतिकिलो के भाव से बिकता है। फूलों के खेत में मधुमक्खी पालन करें तो हमें शहद प्राप्त होगा। कबाड़ी से पुरानी काँच की बोतले सस्ते दामों में मिलती है उन्हें गर्म पानी में धोकर धूप में सुखाकर उनमें शहद का संग्रह करें। बोतल में शहद ऊपर तक भरकर ढ़क्कन लगाये और ऊपर मोम पिघलाकर सील कर दें। इसे बेचकर 4 गुना ज्यादा कमाई की जा सकती है।

सब्जियों का प्रसंस्करण करें : कोई भी सब्जी ज्यों के त्यों बेचे तो कम दाम प्राप्त होते हैं। सर्दियों में मटर, मेथी 5 से 10 रुपया किलो इतने सस्ते होते हैं। उन्हें इतने कम दामों पर बेचने के बजाय उन्हें धोकर साफ करें और छाया में अखबार बिछाकर सुखायें। सूखे मटर और सूखी मैथी के छोटे बड़े 100 ग्राम से एक किलो क्षमता के प्लास्टिक थैलियों में भरकर रखे तथा उन्हें गर्मियों में बेंचे तो 100 रुपया प्रतिकिलो के दाम मिलेगे। यानि 10 गुना ज्यादा आमदनी होगी।

फलों का प्रसंस्करण करें : फलों का प्रसंस्करण कर उनके प्रसंस्करित व्यंजन बनाकर बेचने से ज्यादा आमदनी होती है। उदाहरण ऑवला 20 रुपया किलो बिकता है लेकिन उसका मुरब्बा बनाकर बेचे तो वह 200 रुपया किलो बिकता है। उसका रस भी निकालकर भी बेच सकते हैं क्योंकि आजकल ज्यादातर शहरों की

जनता अपना शरीर भार कम करने हेतु उसे खूब खरीदते हैं। गाँव में संतरा, नीबू, मुसम्मी खराब हो जाते हैं या उन्हें समुचित भाव नहीं मिलता उनका रस निकालकर उसमें रसायन जैसे पोटैशियम मेटा बाई सल्फाईट डालकर संरक्षित किया जा सकता है। एक बोतल 80 से 100 रुपये में बिकती है। आम, नीबू, ऑवले का अचार शहरों में 200 रुपया किलो के भाव से बिकता है। ऐसे कई उदाहरण दिये जा सकते हैं। फल सब्जियों तथा अनाज गाँव में ग्रामीण इलाकों में उत्पादित होते हैं लेकिन उनकी माँग शहरों में ज्यादा होती है। शहरों में नौकरी पेशा लोग अधिक रहते हैं। उनके पास पैसा तो होता है लेकिन वक्त नहीं होता। अतः उन्हें सबेरे से शाम तक की जिंदगी में खानपान हेतु कई व्यंजनों की जरूरत होती है जिसकी ग्रामीण इलाकों से पूर्ति हो सकती है। अतः ग्रामीण इलाकों के जनता के लिए कृषकों के आर्थिक सुधार हेतु त्रिमूर्ति कार्यक्रम यह है कि किसान अनाज, फल, सब्जी आदि का उत्पादन करें। इसके पश्चात् उसके परिवार में मौजूदा सदस्य यानि उसकी धर्मपत्नी, बेटी, बेटे उसे प्रसंस्करण कर विभिन्न प्रसंस्करित व्यंजनों का निर्माण करें। ज्यादातर कृषि उत्पादन सब्जी, फल नाशवान होते हैं। अतः उनका नाश होने के बजाय उन्हें प्रसंस्करित कर उनका रूपांतरण प्रसंस्करित व्यंजनों में कर ले तो कई लाभ होते हैं।

प्रसंस्करण कृषि उत्पादनों का समुचित इस्तेमाल होता है। दूसरा फायदा यह कि कृषि उत्पादनों का मूल्यवर्धन होता है क्योंकि फल–कृषि उत्पादनों की बाजार मूल्य कम प्राप्त होता है। उससे कही ज्यादा और कई गुना दाम मूल्यवर्धित/प्रसंस्कृत व्यंजनों से प्राप्त होता है। इसके अलावा कृषि उत्पादनों का प्रसंस्करण करने से उनकी टिकाऊ क्षमता बढ़ जाती है। महिलाएं घर में तैयार आटा, बेसन, सूजी, अचार, पापड़, शरबत, टोमैटो सॉस, चटनी, मसाला, पिसी हल्दी, पिसी मिर्च पाउडर जैसे सैकड़ों व्यंजन बनाकर शहरों में बेचकर लाखों रुपया कमा सकती है। अगर किसान परिवार में मौजूद बेरोजगार युवक इस प्रसंस्करित व्यंजनों का विपणन खुद करें तो उन्हें रोजगार मिलेगा और अतिरिक्त आमदनी भी प्राप्त होगी। इस प्रकार किसान परिवार के तीनों धारकों को आमदनी और रोजगार प्राप्त होगा। किसान परिवार के स्त्रियों को अतिरिक्त आमदनी होने से उनका आर्थिक उत्थान होगा एवं उनका सक्षमीकरण होगा।

पूरक व्यवसाय करें : कृषि का सबसे बढ़िया पूरक व्यवसाय पशुपालन है। पशुपालन में कई मद शामिल है जैसे भैंसपालन, गायपालन, बकरीपालन, भेंड़पालन, मुर्गीपालन, शुकरपालन आदि। इनमें से जो भी व्यवसाय अपने इलाके के लिए उपयुक्त है, उसे अपनाकर अपनी आमदनी में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं। उदाहरणार्थ राजस्थान के लिए ऊँटपालन, भेंड तथा बकरीपालन, पंजाब हरियाणा के लिए भैंसपालन, महाराष्ट्र के गर्म इलाके जैसे विदर्भ के लिए बकरीपालन और कम गर्म इलाके जैसे पुणे के लिए संकर गाय, भैंसपालन तथा मुर्गीपालन उपयुक्त है।

माँस के साथ रेशम कीटपालन : रेशम कीटपालन के लिए मलबेरी (शहतूत) की फसल उगानी पड़ती है। इसे पेड़ों की कोमल पत्तियाँ रेशम के कीटों को खिलाते हैं तथा खुरदुरे पत्ते एवं डालियाँ बकरियों को खिलाते हैं। इन पत्तियों में प्रोटीन की मात्रा ज्यादा होने से बकरियों का वजन वृद्धि दर अच्छा होता है इस प्रकार बकरीपालन के साथ रेशम कीटपालन करने को मीट विथ सिल्क कहते हैं। इससे मलबेरी पेड़ के सभी हिस्सों का न्यायोचित इस्तेमाल होता है। इसमें दो गतिविधियों का मिलान है और यह दोनों एक दूसरे के पूरक व्यवसाय है।

दूध के साथ रेशम कीटपालन : दूध उत्पादन हेतु दूध देने वाले पशु पालने के साथ–साथ रेशम कीटपालन करना इसे मिल्क विथ सिल्क कहते हैं। इसमें भी मलबेरी के पेड़ लगाकर उसकी पत्तियाँ रेशम कीटों को खिलायी जाती है और खुरदुरी डालियां दुधारू पशुओं को खिलायी जाती है। अतः दूध उत्पादन और रेशम उत्पादन साथ–साथ चलते हैं। इसमें भी दोगुनी आमदनी होती है। दोनों एक दूसरे को पूरक व्यवसाय है।

चारा उत्पादन द्वारा आमदनी : अगर किसी किसान भाई के पास अतिरिक्त जमीन और सिंचाई की व्यवस्था है तो वे विभिन्न चारे की कटान कर चारा बेचकर अतिरिक्त आमदनी कमा सकते हैं। चारे के अलावा विभिन्न चारा फसलों के ज्वार, मक्का, बरसीम, रिजका आदि के बीज पैदा कर उसे बेचकर भी अतिरिक्त कमाई की जा सकती है।

बागवानी से आमदनी : अगर किसी किसान के खेत के बंधी/मेंड़ पर देशी बेर है तो उस पर सेब, उमरान, गोला आदि उन्नत प्रजाति के कलम बाँधकर उन देशी बेर के पेड़ों को उन्नत बेर पेड़ों में तब्दील किया जा सकता है। यह बेर 40 से 60 रुपये किलो के हिसाब से बिकते हैं अतः इन्हें बेचकर काफी पैसा कमाया जा सकता है।

घास (लॉन हेज) लगाना : आजकल शहरों में प्लॉट स्कीमों के बगीचों, होटलों में तैयार लॉन लगाते हैं। इसके लिए उन्हें उन्नत प्रजाति की नर्स घास की स्लॅव लगती है। जिन किसानों के पास पर्याप्त जमीन तथा सिंचाई व्यवस्था है वे यह व्यवसाय कर लाखों रुपया महीना कमा सकते हैं।

इसी प्रकार अगर किसान भाई और उसका परिवार चाहे तो ऐसे कई व्यवसाय है जिन्हें अपनाकर वे खुद की आमदनी दोगुनी कर सकते हैं। इस संबंधित अधिक जानकारी के लिए वे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थान, कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय तथा राज्य सरकारों के कृषि विभाग से संपर्क कर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

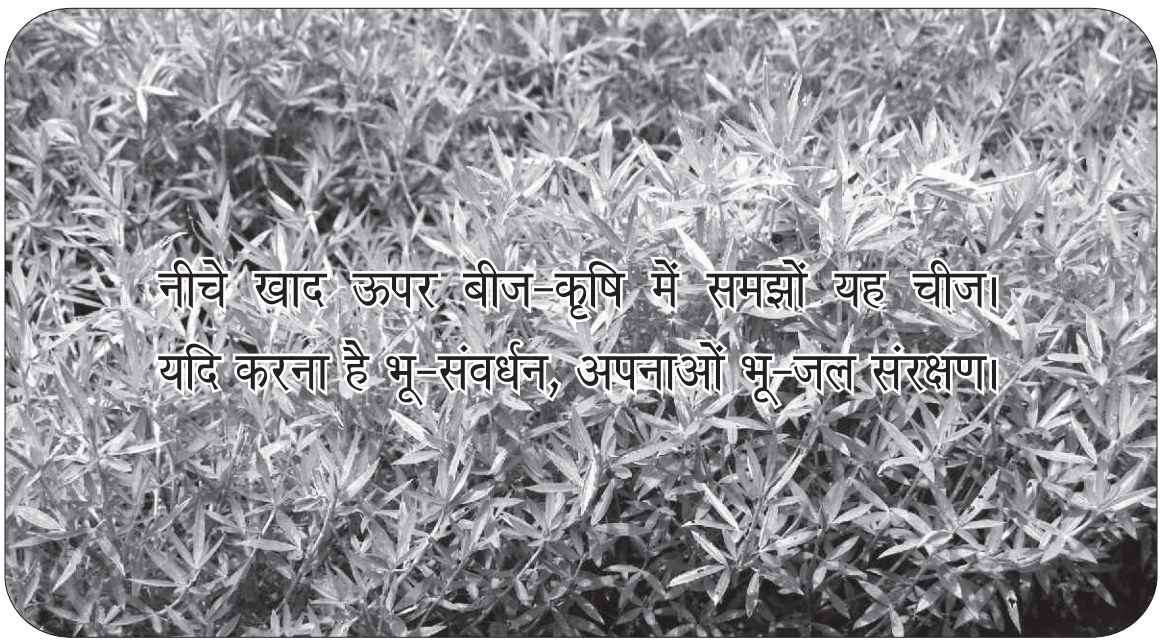

कृषकों की आय दोगुनी करने की प्रभावी कृषि तकनीकियाँ

मुकेश चौधरी

हमारे देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने का संकल्प लिया है। इस क्रम में भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने रूप–रेखा तैयार की है, जिसके सफल क्रियान्वयन से यह लक्ष्य 2022 तक पूरा किया जा सकेगा।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 2012–13 के सर्वे के अनुसार एक कृषक परिवार की कृषि एवं गैर–कृषि स्त्रोतों से वार्षिक आय रूपये 77112 थी। इसमें कृषि क्षेत्र की भागीदारी 60 प्रतिशत है। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2022–23 तक किसानों की आय दोगुनी करने के लिए किसान की आय में 10.41 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि की आवश्यकता है। इसका तात्पर्य यह है कि हमें कृषि की विकास दर को तीव्र गति से बढ़ाना होगा। इसके लिए कृषि के सभी क्षेत्रों में वृद्धि के लिए यथा–सम्भव उपाय अपनाने होगें। किसानों की आय दोगुनी करने के लिए हमें निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

- फसल उत्पादन में वृद्धि
- संसाधन उपयोग दक्षता या उत्पादन लागत में कमी
- फसल सघनता में वृद्धि
- विविधीकरण एवं मूल्य संवर्धीकरण

कृषि उत्पादकता में वृद्धि : भारत देश में लगभग सभी फसलों की उत्पादकता कम है। गेहूँ को छोड़कर लगभग सभी फसलों की राष्ट्रीय उत्पादकता, विश्व की औसत उत्पादकता से काफी कम है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि हेतु निम्न कृषि तकनीकियाँ है।

उन्नत बीजों का चयन : फसलों की अच्छी पैदावार के लिए उन्नत एवं स्वस्थ बीज की महत्वपूर्ण भूमिका है। देश के अनुसंधान संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा सभी फसलों की उन्नत प्रजातियाँ विकसित की गयी है, जो जैविक एवं अजैविक कारकों के प्रति सहनशील है। उन्नत बीज के बोने से औसतन 20–50 प्रतिशत तक उपज में वृद्धि होती है। इसके बाबजूद भी देश में बीज प्रतिस्थापन दर 15 प्रतिशत है अर्थात् 85 प्रतिशत बीज की पूर्ति किसान द्वारा घर में रखे बीज से होती है।

सिंचाई का विस्तार : सिंचित क्षेत्रों की उत्पादकता, असिंचित क्षेत्रों की तुलना में दोगुनी होती है। आजादी के 70 वर्ष बाद भी हम कृषि योग्य भूमि का केवल 35 प्रतिशत भाग सिंचित कर पाये हैं। शेष 65 प्रतिशत भू–भाग असिंचित है या वर्षा पर आधारित है। इन क्षेत्रों में सिंचाई के साधनों का विकास करके कृषि उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। इस क्रम में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा 'प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना' का शुभारम्भ किया गया, जिसमें 50,000 करोड़ रुपये का निवेश किया जायेगा।

समन्वित पोषक तत्व, खरपतवार एवं कीट प्रबंधन : हरित क्रांति के बाद देश में मृदा उर्वरता क्षीण होती जा रही है एवं कई क्षेत्रों में जस्ता, मैंगनीज, बोरोन आदि सूक्ष्म तत्वों की मृदा में कमी उजागर हुई है। मृदा उत्पादकता बढ़ाने हेतु समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन अति–आवश्यक है। इसमें रासायनिक उर्वरकों के साथ–साथ कार्बनिक खाद एवं जैव–उर्वरक का प्रयोग किया जाता है। खरपतवार, कीट एवं रोगों से फसलों में भारी नुकसान आंका गया। इनसे बचाव हेतु भौतिक, रासायनिक एवं जैविक विधियों के समन्वित प्रयोग की सिफारिश की गई, इससे फसल उत्पादकता में वृद्धि के साथ–साथ पर्यावरण संतुलन भी बना रहता है।

संसाधन उपयोग दक्षता में वृद्धि एवं उत्पादकता लागत में कमी : कृषि उत्पादन के संसाधन जैसे मृदा, जल, उर्वरक, श्रम, पूँजी आदि की उपयोग दक्षता निरंतर घटती जा रही है। उत्पादन लागत में भारी वृद्धि के चलते कृषि मुनाफे का व्यवसाय नहीं रह गया। यदि भारत सरकार वास्तव में किसान की आय दोगुनी करना चाहती है, तो उन्हें ऐसी कृषि तकनीकियों को बढ़ावा देना चाहिए, जिससे उत्पादन लागत में कमी हो एवं मुनाफा बढ़े। इससे संबंधित कृषि तकनीकियाँ नीचे दी जा रही है।

संरक्षित कृषि : एक हेक्टेयर भूमि की जुताई के लिए लगभग 3000–4000 रुपये की लागत आती है। शून्य जुताई, संरक्षित कृषि का एक महत्वपूर्ण घटक है। इसको अपनाकर जुताई लागत को काफी कम किया जा सकता है। यह तकनीकी चावल–गेहूँ फसल प्रणाली में लोकप्रिय हो रही है।

समन्वित कृषि प्रणाली : सरल अर्थो में इससे तात्पर्य फसलों के साथ–साथ कृषि के अन्य उद्यमों जैसे पशुपालन, उद्यानिकी, कृषिवानिकी, मछलीपालन आदि को करने से है। इसको अपनाकर कृषि अनाजों के लिए बाजार पर निर्भरता को कम किया जा सकता है, साथ ही साथ घरेलू आवश्यकताओं जैसे अनाज, फल, दूध, सब्जी आदि को पूरा किया जा सकता है। इस तकनीक से संसाधन उपयोग दक्षता में वृद्धि के साथ–साथ उत्पादन लागत में भी कमी होगी।

कृषि मशीनीकरण : गाँवों से शहरों की ओर पलायन होने से कृषि कार्यो हेतु मजदूरों एवं मानवीय श्रम की उपलब्धता घटती जा रही है। मनरेगा–योजना के कारण मजदूरी में भी काफी इजाफा हुआ है, इसके कारण कृषि लागत बढ़ी है। वर्तमान में बुवाई से लेकर कटाई, मढ़ाई एवं प्रसंस्करण तक की मशीनें विकसित की गई, जिससे मानव–श्रम पर निर्भरता कम की जा सकती है। परिणामस्वरूप कृषि लागत में कमी आयेगी।

लेजर द्वारा भूमि का समतलीकरण : खेत समतल होने के कारण जल, उर्वरक एवं अन्य संसाधनों का यथोचित उपयोग नहीं हो पाता है। लेजर द्वारा खेत का समतलीकरण करने पर जल उत्पादकता में 35–45 प्रतिशत एवं उर्वरक उपयोग दक्षता में 15–25 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी होती है।

उठी क्यारी में बुवाई तकनीक : खरीफ में बोई जाने वाली फसलें, जो जल–भराव के प्रति संवेदनशील है जैसे मक्का, कपास, अरहर, सोयाबीन आदि की उपज में उठी क्यारी में बुवाई करने से उपज में वृद्धि होती है। उठी क्यारी में बुवाई करने से फसल उपज के साथ–साथ आर्थिक लाभ एवं संसाधन उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है। जल के उचित संग्रहण एवं अतिरिक्त जल का समुचित निकास होने के कारण उठी क्यारी में बुवाई से सिंचित एवं असिंचित दोनों स्थितियों में जल का सदुपयोग होता है।

धान की सीधी बुवाई : भारत के अनेक राज्यों में दिनो–दिन भूजल स्तर गिरता जा रहा है, जिसके कारण धान की फसल को पर्याप्त मात्रा में पानी नहीं मिल पा रहा है। ऐसी परिस्थिति में, धान की सीधी बुवाई से रोपाई की तुलना में लगभग 20–30 प्रतिशत जल की बचत होती है। खेत में पानी भरा रहने के कारण मिथेन गैस का उत्सर्जन एवं नत्रजन उर्वरकों का क्षय भी कम होता है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली : फव्वारा एवं बूँद–बूँद (टपक) सिंचाई प्रणाली से जल उपयोग–दक्षता में बढ़ोत्तरी होती है, जिससे समान जल की मात्रा से अधिक क्षेत्र को सिंचित किया जा सकता है। बूँद–बूँद सिंचाई प्रणाली से फसल की उपज एवं गुणवत्ता में भी वृद्धि पायी गयी हैं। इस प्रणाली से राजस्थान में बालू के टीलों की फसलों को सिंचित किया जा रहा है।

फसल सघनता में वृद्धि : हमारे देश में मुख्यतः दो मौसम खरीफ एवं रबी में खेती की जाती है। इस प्रकार खेत के एक ही टुकड़े में वर्ष में 2 फसल ली जाती है। यह सिंचाई के साधनों के विकसित होने के कारण सम्भव

हुआ। परन्तु दूसरी फसल अभी भी खेती योग्य भूमि के मात्र 39 प्रतिशत भाग पर ही की जाती है। इस प्रकार फसल सघनता को बढ़ाकर किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में कुछ हद तक सफलता प्राप्त की जा सकती है।

निम्नलिखित कृषि तकनीकियों से कृषि सघनता को बढ़ाया जा सकता है। धान–गेहूँ फसल प्रणाली में अप्रैल से जून तक खेत खाली पड़ा रहता है। इस अवधि में ग्रीष्मकालीन मूँग उगाकर 8–10 कु./हे. की पैदावार ली जा सकती है। इससे शुद्ध लाभ में 15–20 हजार रुपये की बढ़ोत्तरी प्राप्त की जा सकती है। देश में अभी भी 12 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल धान (चावल) काटने के बाद खाली पड़ा रहता है। इस प्रकार की भूमि असम, बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा में पायी जाती है। इस प्रकार की भूमि में उचित जल एवं मृदा संरक्षण तकनीकी अपनाकर रबी में मसूर, चना आदि दलहनी फसलें लगाकर कृषि सघनता में वृद्धि करके किसानों की आय को बढ़ाया जा सकता है।

फसल विविधीकरण एवं मूल्य संर्वधीकरण : लगातार एक ही फसल बोने से खरपतवार कीट एवं बीमारियों का प्रकोप बढ़ता है। इसके कारण भूमि की उर्वरता शक्ति भी क्षीण होती है। फसल विविधीकरण अपनाकर जोखिम को कम किया जा सकता है। मूल्य संर्वधीकरण से किसान की आय में कई गुना इजाफा किया जा सकता है। फसल विविधीकरण एवं मूल्य संर्वधीकरण की कृषि तकनीकियाँ निम्नलिखित है।

पालीहाउस द्वारा बैमौसमी सब्जी उत्पादन : उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में दिसम्बर एवं जनवरी माह में अत्यधिक सर्दी पड़ती है। कम तापमान में पालीहाउस एवं टनल में सब्जी उगाई जा सकती है। बेमौसमी सब्जियों के बाजार भाव इस समय कई गुना अधिक होने के कारण कृषक को अधिक लाभ अर्जित होता है।

पालीहाउस एवं टनल में कद्दू, लौकी, टमाटर, खीरा आदि सब्जियों की रोपाई करके बेमौसमी फसलें उत्पादन करके प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक आय एवं लाभ अर्जित किया जा सकता है।

कृषिवानिकी : इसका तात्पर्य एक ही भूमि पर कृषि फसल एवं वृक्ष प्रजातियों को विधिपूर्वक रोपित कर दोनों प्रकार की उपज लेकर आय बढ़ाने से हैं। यह पद्धति आर्थिक रूप से लाभप्रद, सामाजिक रूप से स्वीकार्य तथा समस्त भूमि–सुधार प्रक्रियाओं का समेकित रूप है। कृषिवानिकी को अपनाकर कृषक खेती में विविधता लाकर अनाज के साथ ही जलाऊ लकड़ी, पशुओं के लिये चारा खेतों पर प्राप्त कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साथ ही अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर सकते हैं। कृषिवानिकी से ग्रामीण आंचल में उद्यमियों को प्रोत्साहन तथा वन आधारित लघु एवं कुटीर उद्योग की अर्थव्यवस्था को सशक्त करने में मदद मिलती है।

मूल्य संर्वधीकरण : हमारे देश में कई बार यह स्थिति आती है जब किसान को अपनी उपज का सही दाम नहीं मिल पाता है। टमाटर, आलू, प्याज आदि सब्जियों का बाजार भाव इतना गिर जाता है कि किसान को अपनी उपज मंडी या सड़क पर फेंकनी पड़ती है। इस स्थिति से बचने के लिए हमें कृषि उत्पादों का मूल्य संर्वधीकरण करना होगा। फलों एवं सब्जियों का प्रसंस्करण करके बेचना होगा। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा कई मूल्य संर्वधीकरण प्रौद्योगिकी विकसित की है, जैसे पके आम का चूर्ण, फल पेय, पर्ल पास्ता आदि। इस प्रकार की तकनीक अपनाने पर किसान अपनी उपज को लम्बे समय तक भंडारण कर पायेगा एवं उसको उपज का उचित दाम मिलेगा।

किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने का जो सपना हमारे देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने देखा है, उसको साकार करने के लिए उपरोक्त कृषि तकनीकियाँ कारगर सिद्ध होगी। इसके लिए किसानों, राज्य सरकारों, अनुसंधान संस्थानों एवं कृषि विभाग को अहम भूमिका निभानी होगी।

कृषकों की आय दोगुनी करने की प्रभावी कृषि तकनीकियाँ

अमित कुमार सिंह

भारत गाँवों का देश है। जनगणना 2011 के अनुसार 83 करोड़ भारतीय गाँवों में निवास करते हैं। लगभग 6,40,000 गाँव भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था का अभिन्न अंग है। ये गाँव हड़प्पा संस्कृति से लेकर तत्कालीन समय तक जीवन का आधार रहे हैं। महात्मा गाँधी के शब्दों में ''गाँव आत्मनिर्भर छोटे (सूक्ष्म) गणतंत्र की तरह व्यवहार करते हैं।'' अर्थात् इन गाँवों में लोकतांत्रिक परम्परा एवं व्यवसायगत विशिष्टता एक गतिशील तंत्र की तरह व्यवहार करती है। जिसमें परिवार, जाति, शादी, जजमानी प्रणाली इत्यादि पाये जाते हैं। चोल संस्कृति, गुप्त साम्राज्य में लिखे गये साहित्यों के अनुसार गाँवों में लोकतांत्रिक व्यवस्था सदियों से पायी गयी है।

अंग्रेजों का भारतीय गाँवों और किसानों पर प्रभाव : अंग्रेजों से पहले समय तक भूमि ही जीवन का आधार थी। यह भूमि किसानों के लिये माता के समान थी। अंग्रेजों ने औपनिवेशकवाद के तहत भूमि को एक वस्तु में परिवर्तित कर दिया। अब भूमि एक महत्वपूर्ण आर्थिक संसाधन की तरह देखी जाने लगी। जमींदारी, रैयतवारी और महलवारी प्रणालियों ने जमींदार जैसे एक नये वर्ग को जन्म दिया जो भूमि के मालिक होते थे और किसानों को अपनी फसल का एक तिहाई से 80 प्रतिशत तक कर देना होता था। इससे किसानों को नगदी फसल उगाने के लिए मजबूर होना पड़ा।

अंग्रेजों ने गाँवों की लोकतांत्रिक व्यवस्था और व्यवसायगत विशिष्टिता को भी ठेस पहुँचायी। पारम्परिक व्यवस्था अब फायदेमंद रही। किसानों की हालत बद से बदतर होती चली गयी। अंग्रेजों ने कपास एवं वस्त्र व्यवसाय पर निर्यात शुल्क तो शून्य स्तर पर रखा किन्तु आयात शुल्क बहुत अधिक करीब 100 प्रतिशत तक बढ़ा दिया। किसानों ने अपनी माँगों को मनवाने के लिये विद्रोह का भी सहारा लिया जिनमें से नील विद्रोह, पागल पंथी सभा, चम्पारन, खेड़ा एवं बारदोली सत्याग्रह प्रमुख है। कांग्रेस ने किसानों की माँगों को मानते हुए कर्ज माफी की भी घोषणा की किन्तु अंग्रेजों के दबाव के कारण कांग्रेस अपने इरादों में सफल न हो पायी।

किसानों की स्थिति : 1947 से 1991 तक कांग्रेस ने सत्ता में आते ही जमीदारी व्यवस्था को खत्म करने की घोषणा की। प्रभावपूर्ण जमींदारों ने इसका विरोध भी किया किन्तु सुप्रीम कोर्ट ने घोषणा को यथावत रखा।

- आजादी के पहले दशक में आचार्य विनोबा भावे ने भूदान आंदोलन प्रारम्भ किया जिसमें स्वैच्छिक रूप से जमीनों का दान एवं उनका शामिल था।
- आजादी के बाद किसान/कृषि क्षेत्र में 3 प्रतिशत की वृद्धि होने के बाद भी किसानों की दशा में कोई मूलभूत सुधार नहीं हुआ। भारत–चीन युद्ध, भारत–पकिस्तान युद्ध एवं लगातार तीन साल सूखे ने किसानों की समस्या को और भी अधिक गंभीर कर दिया।
- 1966 में हरित क्रांति का उद्भव हुआ जिसमें उच्च उत्पादक पौधों की किस्में, रासायनिक खाद का उपयोग, सिंचाई एवं बिजली व्यवस्था ने कृषि को फायदेमंद व्यवसाय बनाया। यह क्रांति पंजाब, हरियाणा से शुरू होकर देश के बाकी राज्यों में भी फैली किन्तु इस दौरान एक महत्वपूर्ण आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि किसानों की संख्या घट गयी एवं खेतीहर मजदूरों की संख्या बढ़ी।

1991 से आज तक : 1991 में भारत ने नयी नीति प्रारम्भ की जिसमें प्राइवेट सेक्टर को बढ़ावा देना और वैश्वीकरण शामिल था। इस दौरान सेवा क्षेत्र को कर दरों से मुक्त व्यवसाय करने का अवसर प्रदान किया गया।

- इस दौरान कृषि की वृद्धि दर संतोषजनक रही। यद्यपि भारत ने इस समय अन्न फसलों का रिकार्ड उत्पादन किया किन्तु यह सफलता किसानों तक नहीं पहुँची इसका प्रमुख कारण बिचौलियों का होना, खामीपूर्ण सरकारी नीतियां थी।
- पिछले कुछ वर्षों में खाद्यान्न महगाई की दर 10 प्रतिशत से भी ज्यादा रही किन्तु किसान गरीब ही रहे।
- पिछले कुछ वर्षों में किसानों की आत्महत्या दर में वृद्धि हुई है। जिसका कारण कर्ज होना बताया जा रहा है। मई से अगस्त, 2017 तक किसानों के विद्रोह पूरे देश के प्रांतों में हो रहे हैं। महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश के मंदसौर, तमिलनाडु, राजस्थान के सीकर जिलें में व्यापक प्रदर्शन हुये हैं।

किसानों की समस्याएं : किसानों की समस्याओं को निम्नलिखित कारकों से समझा जा सकता है।

1. **आर्थिक कारक :**

   हरित क्रांति के पश्चात् भूमि की उत्पादकता में कमी आयी है। शोधों के अनुसार भूमि अब थकान महसूस करने लगी है। समान पोषक तत्व डालने पर भी भारतीय भूमि में उत्पादकता विश्व के अन्य देशों की तुलना में काफी कम है।

- असंतुलित सब्सिडी चाहे वह बिजली हो या पानी, उर्वरक हो या अन्य। यह पाया गया कि बड़े किसानों को उनके प्रभाव के कारण अधिक फायदा मिलता है।
- बैंकों द्वारा किसानों को ऋण प्राप्त करने के लिए एक तयबद्ध प्रणाली से गुजरना पड़ता है जो उनकी तात्कालिक जरूरतों को पूरा नहीं कर पाती है और उन्हें साहूकारों की उल्टी सीधी माँगों को मानना पड़ता है।
- गरीब किसान पैसे के अभाव में नयी तकनीकी को उपयोग में नहीं ला पाता और उसकी स्थिति वैसी की वैसी ही बनी रहती है।

2. **सामाजिक कारण :**

   भारत में अब अलग केन्द्रीय परिवार प्रणाली के उद्भव एवं विकास के कारण किसान की जमीन उसकी संतानों को बँट जाती है जो आर्थिक–दृष्टिकोण से फायदेमंद नहीं रहती।

- हरित क्रांति एवं जमींदारी उन्मूलन के बाद भारतीय समाज में दबंग जाति या प्रभावपूर्ण जातियों का उद्भव हुआ है जो संवैधानिक और नौकरी, शिक्षा संबंधित फायदा भी चाहते हैं और जमीन के ऊपर अपना अधिकार भी नहीं छोड़ते। जिससे किसानों की संख्या में अब कमी आयी है और खेतीहर मजदूरों की संख्या बढ़ गयी है।
- अब कोई किसान नहीं बनना चाहता। क्योंकि कृषि अब फायदेमंद व्यवसाय नहीं रहा।
- जो किसान शहर जाते हैं वहाँ पर भी उन्हें छोटे–मोटे काम करने पड़ते हैं क्योंकि उच्च शिक्षा का अभाव एवं विशिष्टता की कमी उन्हें ऊपरी पदों तक पहुँचने नहीं देती।

3. **व्यापारिक एवं राजनीतिक कारण :**

   यह सभी को मालूम है कि उपभोक्ता जिस दाम पर सामान/फल/सब्जी खरीदता है वह दाम किसानों तक नहीं पहुँचता। बिचौलिये – व्यापारी – छुटभैये नेताओ का समूह वह फायदा खुद हड़प कर लेता है।

- राजनीतिक पार्टियाँ वोट बैंक के फायदे के लिए इस समूह से झगड़ा मोल नहीं लेती हैं और किसान की स्थिति वैसी की वैसी ही रहती है।

किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करना एवं समस्याओं का समाधान :

वर्तमान की केन्द्र सरकार ने किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य रखा है जो किसानों के हित में लिए एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। सरकारी नीति आयोग ने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कुछ नये कदमों को उठाने का प्रावधान रखा है जो निम्नलिखित है।

1. **कृषि क्षेत्र के अंदर आय की वृद्धि :**

- कृषि उत्पादकता में वृद्धि विश्व की तुलना में प्रति हेक्टेयर उत्पादकता भारत में कम है। राज्यों के मध्य भी बहुत अंतर पाया गया है। इसके लिए इनपुट के व्यवहार को बदलना होगा जिसमें सिंचाई की व्यवस्था महत्वपूर्ण है।
- कुल कारक उत्पादकता में वृद्धि तकनीकी बदलाव समर्थवान कृषक को प्रदर्शित करती है।
- उच्च मूल्य फसलों का समन्वयन उद्यानिकी फसलें जैसे फल एवं सब्जी का उत्पादन, मसालों का उत्पादन, रेशेदार फसलों एवं गन्ना उत्पादन किसानों की आय को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो सकती है।
- फसलों के घनत्व/तीव्रता में वृद्धि—यह जमीन के पूर्ण उपयोग को सम्भावना को बढ़ाती है। अत्यधिक घनत्व फसल रोपण भारत के कुछ राज्यों में अत्यधिक सफल रहा है।

2. **कृषि क्षेत्र के बाहर :**

- कृषि उपज मंडी बिचौलियों को हटाया जाना, प्राइवेट सेक्टर का किसानों से सीधा संपर्क, लाइसेंस प्रदान करना जो पूरे राज्य में वैध है। ये सुधार किसानों के आय को उपभोक्ता द्वारा दिये गये रुपये के करीब ला सकती है।
- एकीकृत कृषि बाजार का समावेश किसानों को एक ही इंटरनेट आधारित बाजार से जोड़ना ताकि वे हर राज्य में मूल्यों पर नजर रख सकें।

किसानों की आय दोगुनी करने के लिए तकनीकी/कृषि तकनीकी की भूमिका :

1. **कृषि उत्पादकता :**

- जैव तकनीकी का प्रयोग तनाव, बीमारी से युक्त फसलों का किस्म वृद्धि में सहायक है। यह अन्न में पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि करती है।
- वर्षा आधारित क्षेत्र 50 प्रतिशत से ज्यादा कृषि योग्य भूमि है। जीवन रक्षक सिंचाई, चैकडेम बनाना, सूक्ष्म सिंचाई, टयूबवेल सिंचाई तकनीकियाँ इस कार्य में सहायक सिद्ध होगी।
- राज्यों के मध्य बेहतर आवागमन एवं व्यापार की सुविधा।

2. **पानी एवं खादों से संबंधित :**

- यूरिया के अत्यधिक उपयोग को बदलने के लिए दी जाने वाली सब्सिडी सहायता का नियमितीकरण।
- रासायनिक खादों से कार्बनिक खादों की तरफ उपयोगिता संक्रमण।
- एकीकृत जल उपयोग को बढ़ावा देना सूक्ष्म ट्यूबवैल—साधारण पद्धति को सब्सिडी देकर उनकी उपयोगिता को बढ़ावा देना।
- किसानों को अधिक से अधिक अभियांत्रिक तकनीकी के उपयोग को बढ़ावा देना।

3. **एकीकृत किसानी प्रणाली :**

यह पशुओं, बागवानी एवं फसलों को एक साथ एक ही भूमि पर उगाने की परम्परा है। यह किसान को सूखे की स्थिति में भी एक नियमित आय का स्त्रोत प्रदान करती है।

4. **किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्ति हेतु :**

इसमें फसलों/अन्न के भंडारण हेतु शीत भंडारण की व्यवस्था, बिजली, तकनीकी की सुविधा शामिल है। इसके अतिरिक्त कृषि उपज मंड़ियों में बिचौलियों को हटाना, किसानों को एकीकृत

इंटरनेट आधारित बाजार व्यवस्था से जोड़ना भी महत्वपूर्ण कदम है।

5. **फसलों का बीमा :**

किसानों की फसलों का बीमा इस वैश्विक जलवायु परिवर्तन के माहौल में आवश्यक है। इसके लिए प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का किसानों के मध्य प्रचार–प्रसार जरूरी है।

6. **रिमोट/अंतरिक्ष सेवाएं :**

कृत्रिम सैटेलाइट/उपग्रह किसानों को व्यावहारिक तौर पर मदद करते हैं। फसलों को बुवाई क्षेत्र सूखे की स्थिति का निर्धारण एवं कटाई के वक्त ये बेहतर साबित हुए है।

7. **विशिष्ट कृषि क्षेत्रों का निर्माण :**

भारतीय औद्योगिक नीति के आधार पर विशिष्ट कृषि क्षेत्रों का निर्माण, फसल उत्पादकता, व्यवसायगत सेवाओं, नौकरी देने में सहायक सिद्ध होगा। चीन इसका प्रमुख उदाहरण है।

8. **कृषि अभियांत्रिकी :**

उपकरण किसानों के समय और लागत में कमी लाते हैं। जिससे किसान अन्य उपयोगी क्षेत्रों पर भी ध्यान दे सकता है।

9. सूक्ष्मजीवों एवं कीटों से निपटने के लिए एकीकृत हानिकारक कीट प्रबंधन का ज्यादा उपयोग होना चाहिए।

10. मृदा की उर्वरकता बढ़ाने हेतु व्यापक तौर पर मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं का निर्माण एवं मृदा स्वास्थ्य कार्डो का वितरण तथा एकीकृत पोषक तत्व प्रणाली का उपयोग।

11. **खाद्य प्रसंस्करण उद्योग :**

औद्योगिक समुदाय और किसानों के मध्य बेहतर संवाद जरूरी है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग बढ़ता हुआ व्यवसाय है। किसानों के मध्य व्यापक सुधार एवं प्रचार–प्रसार उन्हें इस ओर आकर्षित कर सकता है।

12. भूमि सुधारों को अधिक प्रभावशाली रूप से लागू करने से किसानों की बेदखली एवं शोषण कम होगा।

उपसंहार : फेसबुक पर हर कोई लिखता है कि यदि आप भर पेट खाना खाये हैं तो किसान को धन्यवाद दीजिए। धन्यवाद देने के लिए प्रयासों की जरूरत है और ये प्रयास सिर्फ सरकारी स्तर पर नहीं बल्कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं व्यापारिक स्तर पर होने की अत्यधिक आवश्यकता है। तभी हमारा अन्नदाता एवं उसका परिवार भी चैन की नींद सो सकेगा जो लिखित तौर पर महात्मा गाँधी और हमारे संविधान का लक्ष्य है।

वैज्ञानिक विधि से ग्वार का चारा एवं बीज उत्पादन की प्रक्रिया

संजय कुमार, संजय सिंह परमार, मंजूनाथ एन., मैती ए., विनोद वासनिक, सी.के. गुप्ता एवं डी. विजय

ग्वार शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र में उगायी जाने वाली एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। इसे मुख्य रूप से हरा चारा, सब्जी, हरी खाद (55–60 किलो नत्रजन/हे.) और गोंद के लिए उगाया जाता है। ग्वार का हरा चारा प्रोटीन की प्रचुर मात्रा के कारण मवेशियों के लिए पौष्टिक आहार है। ग्वार के हरे चारे में 16–18 प्रतिशत प्रोटीन, 46 प्रतिशत कुल पाचक योग्य पोषक तत्व, 11–12 प्रतिशत पाचक योग्य अशोधित प्रोटीन और 70 प्रतिशत से भी ज्यादा पाचकता पायी जाती है। हरा चारा के लिए ग्वार को 50 प्रतिशत पुष्पन स्थिति पर काटकर जानवरों को खिलाना चाहिए तथा ग्वार के चारे को गेहूँ के भूसे के साथ मिलाकर अच्छा साइलेज भी बना सकते हैं। इसके अतिरिक्त ग्वार मील/चूरी जो गोंद निष्कर्षण के बाद अवशेष बचता है वो भी प्रोटीन का सशक्त स्त्रोत है और 42 प्रतिशत अशोधित प्रोटीन पायी जाती है।

जलवायु और मिट्टी : ग्वार सभी तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है किन्तु चिकनी एवं बलुई दोमट मिट्टी ग्वार की फसल के लिए उत्तम मानी जाती है।

पृथक्करण दूरी : ग्वार के बीज उत्पादन के लिए खेत का चयन ऐसे करना चाहिए कि वह ग्वार के अन्य किस्म वाले खेत से 10 मीटर की दूरी पर हो। ताकि बीज उत्पादन के दौरान फसल में दूसरी किस्म के परागकणों द्वारा बीजों की आनुवांशिक शुद्धता बनी रहे।

उन्नत किस्में : निम्नलिखित तालिका से विभिन्न किस्मों का बीज उत्पादन उनके निर्धारित विभिन्न क्षेत्रों में लिया जा सकता है।

तालिका

क्र.सं.	किस्म	संस्थान	विवरण	उपज
1	बुन्देल ग्वार–1	आईजीएफआरआई, झाँसी	पर्ण फंफूदी रोग प्रतिरोधी	35 टन/हे.
2	बुन्देल ग्वार–2	आईजीएफआरआई, झाँसी	वैक्टीरियल ब्लाइट प्रतिरोधी	25–30 टन/हे.
3	बुन्देल ग्वार–3	आईजीएफआरआई, झाँसी	शुष्कता सहनशील किस्म	35–40 टन/हे.
4	दुर्गापुरा सफेद	एआरएस, दुर्गापुरा	पछेती फसल हेतु	25 टन/हे.
5	एचएफजी–156	सीसीएस, हिसार	अधिक हरा चारा किस्म	35 टन/हे.
6	मारू ग्वार	काजरी, जोधपुर	हरा चारा एवं बीज के लिए उपयुक्त किस्म	22.5 टन/हे.
7	ग्वार–80	पीएयू, लुधियाना	उत्तर पश्चिमी क्षेत्र के लिए उपयुक्त किस्म	26 टन/हे.
8	दुर्गा जय	एआरएस, दुर्गापुरा	हरा चारा एवं बीज के लिए उपयुक्त किस्म	27 टन/हे. 12.5 कु./हे. बीज

खेत की तैयारी और उर्वरक : खेत की मिट्टी भुरभुरी और खरपतवार रहित होनी चाहिए जिसके लिए 2 बार जुताई करके खेत में पाटा चलाना चाहिए। ग्वार दलहनी पादप होने के कारण इसको अनुपूरक नाइट्रोजन की जरूरत होती है। परन्तु बहुत कम नाइट्रोजन की मात्रा (20 किग्रा./हे.) शुरूआती पादप जमाव एवं वृद्धि को प्रेरित करता है। इसके साथ ही फॉस्फोरस उर्वरक (40 किग्रा./हे.) के प्रयोग से जड़ों में सहजीवी गाँठ के निर्माण तथा बीज के आकार को बढ़ाने में सहायक होता है।

बीजदर और बुवाई की विधि : बीज की दर ग्वार की फसल के प्रकार पर निर्भर करती है। जैसे बीज फसल के लिए बीज दर 25–30 किग्रा./हे. पर्याप्त होती है। परन्तु चारा फसल के लिए थोड़ी ज्यादा (40–50 किग्रा./हे.) बीज की जरूरत होती है। ग्वार बीज के एक समान अंकुरण/जमाव, अनुकूलतम पादप सस्य बनाने और अच्छी तरह से अंतः कार्य प्रबंध के लिए बीजों की बुवाई पंक्ति में 60×10 सेमी. अंतराल रखते हुए करना चाहिए। बुवाई के लिए बीज की खरीद किसी उपयुक्त स्त्रोत/संस्था से ही किया जाना चाहिए।

बीज संस्करण : फसलों में बीमारियों के खिलाफ प्रतिरोधी क्षमता का विकास करने तथा अंकुरण मृत्यु दर कम करने के लिए बीजों का उपचार महत्वपूर्ण है।

1. जड़ को मारने वाले कवक बीजाणुओं से रोकथाम के लिए 3 ग्रा./किग्रा की दर से बेविस्टिन से बीजों को उपचारित करना चाहिए।
2. जेसिड और एफिड्स जैसे चूसने वाले कीटों से बचाव के लिए बीज को 6 मिली./किग्रा. की दर से इमिडाक्लोप्रिड से उपचारित करना चाहिए।

इसके अलावा बीजों को 600 ग्राम/15 किग्रा. की दर से राइजोबियम से भी उपचार करना चाहिए जिससे नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया सुगम हो जाती है।

बुवाई का समय : आमतौर पर ग्वार की बुवाई मानसून आने के समय की जानी चाहिए परन्तु सिंचाई वाले क्षेत्रों में मानसून से पहले भी कर सकते हैं। बुवाई में देरी के कारण पुष्पन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और बीज की कम उपज मिलती है।

फसल प्रबंधन : सामान्यतः ग्वार की फसल सूखा के प्रति सहनशील है लेकिन अच्छी बीज उपज के लिए पुष्पन और बीज के बनने के समय सिंचाई विशेष रूप से दी जानी चाहिए। चूंकि फसल अक्सर शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाती है। इसीलिए खेत की मेड़बंदी तथा पादप अवशेषों से मल्चिंग जैसे पानी प्रबंधन के तरीकों से अच्छी फसल ली जा सकती है।

निराई और गुड़ाई : फसल बुवाई के बाद प्रारम्भिक 30–35 दिनों के लिए कम से कम खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। आमतौर पर हाथ से निराई सभी प्रकार के खरपतवार नियंत्रण के लिए प्रभावी है। परन्तु फसल जमाव के 25 दिन बाद 400 ग्राम/हे. की दर से इमेजाथापर के इस्तेमाल से भी खरपतवारों को प्रभावी ढ़ग से नियंत्रित किया जा सकता है।

कीट और रोग प्रबंधन : सामान्यतः ग्वार में कीटों और रोगों द्वारा 70 प्रतिशत तक फसल का नुकसान हो जाता है। इसी लिए इनका नियंत्रण अच्छी उपज व बीज गुणवत्ता के लिए बहुत जरूरी है। ग्वार में निम्नलिखित कीटों एवं रोगों का प्रकोप रहता है।

1. **फली छेद्रक**– इसका नियंत्रण 2 मि.ली. की दर से फिनोलफोस के छिड़काव द्वारा कर सकते हैं।
2. **पत्ती हॉपर**– इसके लिए डाइमेथाएट का छिड़काव 1 मि.ली./ली. की दर से किया जाना चाहिए।
3. **जेसिड**– इस फसल में यह एक गंभीर कीट है जो बीज बनने के समय काफी नुकसान पहुँचाता है तथा इसको मेलाथियान (50 ईसी) का 250 से 400 मिली./हे. की दर से छिड़काव द्वारा नियंत्रण कर सकते हैं।
4. **सूखा जड़ सड़ांध**– इस रोग को सल्फर (20 किग्रा./हे.) के छिड़काव से नियंत्रित करना चाहिए।

5. **बैक्टीरियल लीफब्लाइट–** इस रोग से बचाव के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (150 पीपीएम) का छिड़काव करना चाहिए।

रागिंग : ग्वार के अच्छे एवं गुणवत्तायुक्त बीज उत्पादन के लिए खेत से समय–समय पर अवांछित पौधों, दूसरी किस्म के पौधों तथा रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर खेत से दूर जलाकर/गाड़कर समाप्त कर देना चाहिए। इससे बीज उत्पादन के दौरान बीजों की भौतिक तथा आनुवांशिक शुद्धता बनायी रखी जा सकती है।

फसल की कटाई : चारा फसल के लिए ग्वार की कटाई 50 प्रतिशत पुष्पन के समय करनी चाहिए। वही बीज फसल की कटाई 50 प्रतिशत बीज परिपक्वता के समय करने से बीज बिखराव को कम करके अधिक बीज उपज ले सकते हैं। सामान्यतः ग्वार की फसल को बुवाई के 120—130 दिन के बाद कटाई करनी चाहिए।

बीज उपज एवं प्रसंस्करण : यदि वैज्ञानिक ढंग से ग्वार की खेती की जाए तो सिंचित क्षेत्र में 12—15 कु./हे. तक बीज की उपज ली जा सकती है। फसल की कटाई के बाद उपयुक्त नमी की मात्रा तक सूखाने के बाद थ्रेसिंग से बीजों को निकाला जाना चाहिए।

बीज भंडारण : बीजों को अच्छी तरह साफ करके व धूप में सूखाकर पोलीथीन/जूट के थैलों में भरकर भंडारण कर देना चाहिए। भंडारण के समय बीजों में 9 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं रहनी चाहिए तथा बीजों को कीटनाशक मैलाथियान पाउडर व फफूंदनाशक बेवास्टिन से भी संशोधित कर लेना चाहिए ताकि भंडारण के दौरान बीजों को कीटों एवं फंफूद से बचाया जा सकें।

ग्वार के बीज के मानकीकरण :

क्र.सं.	मानक	मात्रा
1.	भौतिक शुद्धता	98 प्रतिशत
2.	अन्य पदार्थ	2 प्रतिशत
3.	अन्य फसल बीज	20/किग्रा.
4.	खरपतवार बीज	कोई
5.	अंकुरण क्षमता	70 प्रतिशत
6.	नमी की मात्रा	9 प्रतिशत

संकर नेपियर लगाये दुग्ध उत्पादन बढ़ायें

दिनेश चन्द्र जोशी, तेजवीर सिंह एवं ए. राधाकृष्णा

वर्ष पर्यन्त प्रचुर मात्रा में हरे चारे की उपलब्धता व्यवसायिक पशुधन उत्पादन का मूलभूत आधार है। क्योंकि हरा चारा, चारे के अन्य स्त्रोतों की अपेक्षा कहीं अधिक पौष्टिक, स्वादिष्ट और पचने में सुगम होता है। इसके निरंतर सेवन से पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता, शारीरिक क्षमता एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है। अतः पशुपालन को एक लाभकारी व्यवसाय बनाये रखने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि हरा चारा साल भर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता रहे। वर्तमान में देश में फसल उत्पादन के अंतर्गत आने वाली भूमि के केवल 4 प्रतिशत भाग में ही चारा फसलों की खेती होती है। त्वरित गति से बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अधिक से अधिक अन्न उत्पादन के दबाव के कारण चारा फसलों के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र को बढ़ाना संभव नहीं है। पशुपालक हरे चारे की आपूर्ति के लिए एक वर्षीय चारा फसलें जैसे ज्वार, बरसीम, मक्का, बाजरा और जई की खेती करते हैं। जिनसे अधिकतम 3 या 4 महीने तक ही हरा चारा मिल पाता है तथा गर्मियों (मार्च से जून) में हरे चारे की अत्यधिक कमी हो जाती है। इसके अलावा एक वर्षीय होने के कारण इनकी खेती में लागत भी अधिक आती है। इस समस्या के निवारण के लिए गन्ने की तरह दिखने वाली बहुवर्षीय संकर नेपियर घास की खेती, जो कि रोपाई के महज 50 दिनों बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है और 4 से 5 वर्षों तक लगातार दुधारू पशुओं के लिए हरा चारा उपलब्ध कराती है।

संकर नेपियर का उद्भव :

नेपियर घास बाजरा के वंश की ही एक प्रजाति है। नेपियर घास को इसकी लम्बाई और अत्यधिक कायिक वृद्धि के कारण सामान्य भाषा में ''हाथी घास'' भी कहा जाता है। उचित रख–रखाव और अनुकूल जलवायु और मिट्टी में रोपण करने पर नेपियर घास की केवल एक जड़ से औसतन 50 टिलर (कल्ले) पनपते हैं जो की बहुतायात में हरा चारा उत्पन्न करते हैं। परन्तु नेपियर घास की पत्तियों की बनावट अत्यधिक मोटी और खुरदुरी होती है तथा इसमें अत्यधिक रोयें पनपते हैं। इसके अतिरिक्त हाथी घास का डंठल कम रसीला और अधिक रेशे वाला होता है। इन सभी कमियों के कारण पशु नेपियर घास को कम चाव से खाते हैं। नेपियर घास की पत्तियों में आक्ज्लेट नामक हानिकारक रासायनिक पदार्थ भी पाया जाता है जो कि पशुओं में व्याधि का कारण बनता है। नेपियर घास में पाए जाने वाली इन कुदरती त्रुटियों को दूर करने के लिए तथा इसे चारे के लिए उपयोग में लाये जाने वाली एक वर्षीय फसल बाजरा के साथ संकरित कराया गया। क्योंकि नेपियर घास की तुलना में बाजरा के चारे की पौष्टिकता अधिक होती है तथा इसकी पत्तियाँ मुलायम और बाल रहित होती है। नेपियर घास और बाजरा के संकरण से उत्पन्न होने वाली इस प्रथम संतति को संकर बाजरा नेपियर घास कहा जाता है। इस तरह उत्पन्न संकर नेपियर में एक ओर नेपियर की उत्कृष्ट हरा चारा उत्पादन क्षमता, बहुवर्षीय लक्षण एवं कायिक प्रजनन की क्षमता तथा दूसरी ओर बाजरा की उत्कृष्ट चारा गुणवत्ता और पौष्टिकता समाहित होती है। इसी कारण पशु नेपियर घास की तुलना में संकर नेपियर घास को अत्यधिक चाव से खाते हैं।

संकर नेपियर की खूबियां :

1. इस घास की सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसे एक बार लगाने पर उचित प्रबंधन और रख–रखाव करने पर यह 4 से 5 वर्षों तक हरा चारा उपलब्ध कराती रहती है।
2. गर्मियों के मौसम में, जब हरे चारे की सर्वाधिक आवश्यकता होती है तथा अन्य चारा फसलें जैसे ज्वार, बरसीम, मक्का इत्यादि भी उपलब्ध नहीं रहती है। सिंचाई के साधन होने पर यह घास प्रचुर मात्रा में हरा चारा प्रदान करती है।
3. संकर नेपियर घास कायिक प्रजनन द्वारा वृद्धि करती है अतः इसकी एक जड़ को लगाने से ही सैकड़ों पौधें तैयार किये जा सकते हैं।
4. एक बार लगाने पर यह पचास दिन बाद ही कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इसमें पुनः वृद्धि की क्षमता होती है। अतः कटाई के तुरंत बाद यूरिया और पानी देने पर यह शीघ्र बढ़ती है और लगभग 35–40 दिन बाद पुनः कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इस तरह संकर नेपियर घास 400–600 कुन्तल/एकड़ हरा चारा प्रदान करती है।
5. संकर नेपियर को उच्चहन भूमि, खेतों के मेड़ों पर तथा नारियल और अन्य फलों के बगीचों में कहीं भी रोपित किया जा सकता है।
6. चारे की पौष्टिकता बढ़ाने के लिए नेपियर घास की दो पंक्तियों के बीच खरीफ में दलहनी चारा फसल जैसे लोबिया और रबी के मौसम में बरसीम की बुवाई आसानी से की जा सकती है।
7. सामान्यताः संकर नेपियर घास में कोई कीट और अन्य बीमारियाँ भी नहीं लगती है।

संकर नेपियर की खेती से जुड़ी प्रमुख बातें

स्थापना एवं प्रबंध

संकर नेपियर का बीज आनुवांशिक कारणों की वजह से अंकुरित नहीं हो पाता है अतः इसकी स्थापना पुरानी घास की जड़ों की रोपाई के द्वारा की जाती है। रोपाई करने से पहले खेत की जुताई करके अच्छी से समतल कर लेना चाहिए ताकि स्थापना ठीक से हो सके। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि रोपाई वाले खेत में जल भराव न होता हो अन्यथा जड़ों के सड़ने की संभावना रहती है।

रोपाई का समय एवं विधि :

रोपाई का उचित समय वर्षा ऋतु (जुलाई) है। जुलाई के मध्य में रोपाई करने से सबसे अच्छी स्थापना और उपज प्राप्त की जा सकती है। सामान्यतः एक एकड़ भूमि में रोपाई के लिए 10000–12000 जड़ों की आवश्यकता होती है। ऐसी जड़ें जिनकी लम्बाई लगभग 50 सेंटीमीटर हो तथा जिनमें 2 से 3 गाँठे हो, की रोपाई करने से स्थापना अच्छी होती है। पंक्ति में बुवाई करने पर पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75 सेंटीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 60 सेंटीमीटर रखी जाती है।

उर्वरकों की मात्रा और सिंचाई :

सामान्यतः एक एकड़ में लगी संकर नेपियर घास के लिए 17–18 टन गोबर की खाद और 10–12 किग्रा. नत्रजन प्रति कटाई की आवश्यकता होती है। उर्वरकों को निराई–गुड़ाई और कटाई के तुरंत बाद सिंचाई करके देने पर पैदावार अच्छी होती है। सामान्यतः गर्मियों में 10–15 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है और अन्य ऋतुओं में वर्षा के अनुसार सिंचाई की जाती है। प्रत्येक कटाई के बाद खाद और पानी देने के बाद नेपियर घास की पुनः वृद्धि शीघ्र होती है।

चारा प्राप्ति एवं कटाईयों की संख्या :

संकर नेपियर घास सर्दियों के अलावा साल भर हरा चारा प्रदान करती रहती है। पहली कटाई रोपाई के लगभग दो महीने बाद की जाती है तदोपरांत 35–40 दिन के अंतराल में कटाई की जाती है। उचित प्रबंधन एवं रख–रखाव से साल भर में 10–12 कटाईयां की जा सकती है। सामान्यतः एक एकड़ से 500–600 कुन्तल हरे चारे की प्राप्ति होती है।

औषधीय पादपों का पशुओं के चारे में उपयोग

पुष्पेन्द्र कोली, एस.बी. मैती, के.के. सिंह एवं ए.के. मिश्रा

मनुष्य जीवन में प्राचीन काल से ही पशुधन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भोजन की इस बढ़ती माँग को देखते हुए पशुधन का महत्व किसी भी प्रकार से नकारा नहीं जा सकता। पशुधन से हमें दुग्ध, माँस, ऊन प्राप्त होते हैं। इसलिए इन मवेशियों के खान–पान पर ध्यान देना उतना ही जरूरी है जितना कि एक मनुष्य के खान–पान के लिए दिया जाता है। वास्तविक रूप से देखा जाये तो पुराने समय से ही जड़ी बूटियों का उपयोग प्रायः हमारे पूर्वज दवाइयों के रूप में भली–भांति करते आये हैं। निश्चित तौर पर ये जड़ी बूटियां मनुष्य और पशुओं के स्वास्थ को संतुलित बनाए रखती है। हाल ही में भोजन विज्ञान से संबंधित एक शब्द उभर के आया है, जिसे न्यूट्रास्युटिकल्स के नाम से जाना जाता है। इसका मतलब है, एक दवा के रूप में इस्तेमाल खाद्य पदार्थ अथवा एक ऐसा भोजन या पोषक तत्व जिसमें रोगनाशक गुण हो। आजकल बाजार में भी व्यवसायिक रूप से बहुत से पौष्टिक आहार और पेय पदार्थ उपलब्ध है, जो कि न्यूट्रास्युटिकल्स पर आधारित है। यह संकल्पना मनुष्य के पौष्टिक आहार में अच्छी तरह से प्रचलित हो रही है, तो क्यों ना हमारा ध्यान पशुधन की तरह जायें जिनका हमारे जीवन में बहुत बड़ा महत्व है।

औषधीय एवं खुशबूदार/सगंधीय पादपों का महत्व :

''आहार ही पहली औषधि है'' यह बात बहुत समय पहले एक महान चिकित्सक हिप्पोक्रेट्स ने 377 ई.पू. में कही थी। पशुओं और मनुष्य के विभिन्न रोगों के उपचार हेतु वर्षों से औषधीय पौधों और जड़ी बूटियों का इस्तेमाल जाता रहा। किसानों द्वारा हर्बल दवाओं का उपयोग पशुओं की चिकित्सा में भी खूब लिया जाता रहा है। कुछ वैज्ञानिकों ने शोध कर पौधों से निकाले गये सक्रिय तत्वों का परीक्षण कर उनके गुणों के बारे में बताया है जो कि विभिन्न प्रकार के उपचार हेतु काम में लिए जाते हैं, जैसे कि पाचन उत्तेजक, दस्त विरोधी, विशाक्तनाशी, रोगनाशी, कीटनाशी, दुग्धपान बढ़ाने में इत्यादि। उनमें अक्सर इस्तेमाल किये जाने वाले निम्नलिखित पौधे है (तालिका–1)।

पौधें– जायफल, दालचीनी, लौंग, इलायची, धनिया, जीरा, मोटी सौंफ, अजवायन, अजमोद, मैथी इत्यादि।

तीखी प्रजातियाँ– शिमला मिर्च, कालीमिर्च, सहजन, सरसों एवं अदरक इत्यादि।

खुशबूदार जड़ी बूटियां और मसाले– रोजमैरी, अजवायन, ऋषि, पुदीना, नीम इत्यादि।

चारे में उपयोग :

कुछ ऐसी ही पादपों की प्रजातियाँ है, जिन्हें अगर पशुओं के चारे में नियमित और उचित मात्रा में मिलाया जाएं तो न केवल दुग्ध उत्पादन बल्कि इसके साथ–साथ दुग्ध की गुणवत्ता में भी बढ़ोत्तरी पायी गयी है। दुग्धपान को बढ़ाने वाले पौधे हैं जैसे कि जीवन्ति या डोरी (*लेप्टाडेनिया रेटिकुलेटा*), सतावर (*एस्पेरेगस रेसिमोसस*) कलौंजी या काला जीरा (*निगेला सेटिवा*) एवं असालिओं (*लेपीडियम सटाइवम*) इत्यादि। गुजरात के नवसारी कृषि विश्वविद्यालय में हुए शोध में पाया गया कि एक पॉली हर्बल गलक्टोस मिश्रण, जो कि पूरी तरह से मध्य प्रदेश, गुजरात एवं राजस्थान के सीमावर्ती स्थानीय जनजातियों के स्वदेशी ज्ञान पर आधारित है। पॉली हर्बल गलक्टोस मिश्रण निम्नलिखित पादपों के तत्वों से बनाया गया है।

तालिका–1 हर्बल पौधों के सक्रिय तत्व और उनके कई औषधीय गुण

नाम	उपयोगी अंश	सक्रिय पदार्थ	औषधीय गुण
1. प्रजाति			
जायफल	बीज	सबिनेन	पाचन उत्तेजक, दस्त निरोधी
दालचीनी	छाल	अम्मामेल्डिहाइड	भूख और पाचक उत्तेजक, रोगाणुरोधक
लौंग	फूल	यूजेनॉल	भूख और पाचक उत्तेजक, रोगाणुरोधक
इलायची	बीज	चिनूक	भूख और पाचक उत्तेजक
धनिया	पत्ते	उनालोल	भूख उत्तेजक
जीरा	बीज	क्युमिनल्डिहाइड	पचानेवाला और दुग्धवर्धक
मोटी सौंफ	फल	एनेथोल	पाचन उत्तेजक और दुग्धवर्धक
अजवायन	फल, पत्ते	तालीडेस	भूख और पाचक उत्तेजक
अजमोद	पत्ते	अपियोल	भूख और पाचक उत्तेजक, रोगाणुरोधक
मेंथी	बीज	ट्राइगोनेलिन	भूख उत्तेजक
2. तीखी प्रजातियाँ			
शिमला मिर्च	फल	कैप्सैसिन	दस्त निरोधी, सूजनरोधी, शक्तिवर्धक
काली मिर्च	फल	पिपेरिन	पाचन उत्तेजक
सहजन	जड़	एलिल आइसो थायोसायनेट	भूख उत्तेजक
सरसों	बीज	एलिल आइसो थायोसायनेट	पाचन उत्तेजक
अदरक	राइजोम	जिंजरॉल	पाचन उत्तेजक
3. खुशबूदार जड़ी–बूटियाँ और मसालें			
रोजमैरी	पत्ते	सिनिओल	पाचक उत्तेजक, रोगाणुरोधक, ऑक्सीकरणरोधी
अजवायन के फूल	पूरा का पूरा पौधा	थयमोल	पाचक उत्तेजक, रोगाणुरोधक, ऑक्सीकरणरोधी
ऋषि	पत्ते	सिनिओल	पाचक उत्तेजक, रोगाणुरोधक, ताप वर्धक
पुदीना	पत्ते	मेंथोल	भूख और पाचन उत्तेजक, रोगाणुरोधक
नीम	पत्ते, छाल, बीज	अजाडीरेक्टिन, सलानिन, नुम्बिन, मेलिएन्ट्रियल	एंटीवायरल, एंटीसेप्टिक, कवकनाशी

स्त्रोत : चेरिस (2000)

1. खैर, 2. देशी बबूल, 3. सप्तपर्ण, 4. दिल, 5. सतावरी, 6. धनिया, 7. जीरा, 8. सौंफ, 9. असालिओं, 10. जीवन्ति या डोरी, 11. महुआ, 12. विदारी कंद, 13. गन्ना, 14. तिल, 15. सरफोंक, 16. गिलोय। हर्बल जड़ी बूटियों से बना यह मिश्रण मनुष्य के दुग्ध उत्पादन में भी बहुत वृद्धिकारक है। शोध में देखा गया कि इस मिश्रण कि दो–दो बिस्कुट सुबह शाम नियमित ढंग से चारे के साथ सुरती भैंस को खिलाने से दुग्ध में वृद्धि के साथ ही साथ भैंस के स्वास्थ्य में भी लाभकारी होता है।

औषधिय एवं संगधीय पादपों के फायदे :

1. **सूक्ष्मजीव रोधी गतिविधि :** कुछ औषधीय पादपों में सूक्ष्मजीव रोधी गुण होता है। पशुओं को नीम की पत्तियाँ खिलाने से सूक्ष्मजीव जैसे *स्ट्रेप्टोकोकस, इसेरेसिया* आदि की वृद्धि रूक जाती है। सूक्ष्मजीव के साथ–साथ नीम की पत्तियाँ फफूंद जैसी बीमारियों से लड़ने में भी पशुओं के अंदर क्षमता प्रदान करती है। दौना (*ओरिगेनस वेल्गारे*) पौधे में लगभग 30 सूक्ष्मरोधी रसायन पाये जाते हैं।
2. **एंटीऑक्सीडेंट गुण :** एंटीऑक्सीडेंट गुण बहुत सारे पौधों में फ्लावोनोइड्स एवं फेनॉलिक अम्ल के कारण होता है। कुछ पौधे जैसे कि दालचीनी, तुलसी, लौंग एवं अन्य आयुर्वेदिक पौधे हैं।
3. **एंटी कैंसर गतिविधि या कर्क रोग रोधी :** तुलसी की पत्तियों से अर्क रोग रोधी दवाईयां तैयार करने की प्रक्रिया भी जारी है। शोध के दौरान देखा गया है कि तुलसी की पत्तियों से निकाले गए अर्क में सक्रिय तत्व आनुवांशिकी परिवर्तनों को रोकने में बहुत ही सहायक है।
4. **पीड़ाहर और ज्वरनाशक गतिविधि :** बहुत सारे पौधों में पीड़ाहारक एवं ज्वरनाशक गतिविधियां पायी जाती है। उनमें प्रमुख है, तुलसी, वैनिला, वेरवेना, हनुमान फल, इमली, कद्दू, लिंडेन, कॉफी के पत्ते, अदरक, फालमा, गुड़हल, यूकेलिप्टस एवं पुदीना आदि है।
5. **कीटनाशी गुण :** नीम की पत्तियों में टेट्रा नोर ट्राईटेरपेनॉइड्स ग्रुप का एक आजाडिरेक्टिन नामक रसायन होता है जो कि कीटनाशक तथा अन्य फायदेमंद गुण से भरा होता है। इसके अतिरिक्त नींबू, यूकेलिप्टस, प्याज, लहसून एवं गुलदावदी के फूल में भी कीटनाशक क्षमता पायी जाती है।
6. **अंतः परजीवीनाशक गुण :** नीम पत्तियाँ, चित्रा/दारू हल्द, विडिंग, वशा बेच आदि पौधों से आयुर्वेदिक अंतः परजीवीनाशक औषधियां बनाई जाती है। ये दवाईयां पशुओं के पेट में होने वाले *कोक्सीडिया* नामक अंतः परजीवी का नाश करते हैं।

निष्कर्ष :

पौष्टिक पशु उत्पादों के प्राप्त करने के लिए पशुओं को स्वस्थ रखना आवश्यक है। लगभग पिछले दशक से मनुष्य एवं पशुओं के पोषण में प्राकृतिक योग की भी बहुत ही प्रोत्साहित किया गया है। विभिन्न तरह के प्राकृतिक योग जैसे प्रोबियोटिक्स, प्रेबियोटिक्स, कार्बनिक अम्ल और पौधों के सक्रिय तत्व, उनके जैव रसायन, संरचना एवं शारीरिक कार्यो पर भी शोध केंद्रित किया गया है। अगर पशुधन के चारे में औषधीय एवं सगंधीय पादपों को पूरक भोजन के रूप में सम्मिलित किया जायें जैसे कि सूखे पौधें, उनके कुछ हिस्से या अर्क के रूप में खिलाया जाये तो निश्चित ही किसान को दुग्ध उत्पादन एवं उसकी गुणवत्ता में इजाफा मिलेगा। औषधीय जड़ी–बूटियाँ पशुओं में पाचनशक्ति, रोगाणुरोधी, एंटीमाइक्रोबियल, एंटी ऑक्सीडेंट, विशाक्तनाशी, कीटनाशी और प्रतिरक्षी उद्दीपक के सुधार में बहुत ही प्रभावशाली है। इसी के साथ–साथ किसान, उसका पूरा परिवार एवं उसके पशु भी स्वस्थ रहेंगे और निश्चित तौर पर किसानों के लिए पशुपालन एक अच्छी आमदनी का स्त्रोत भी बरकरार रहेगा।

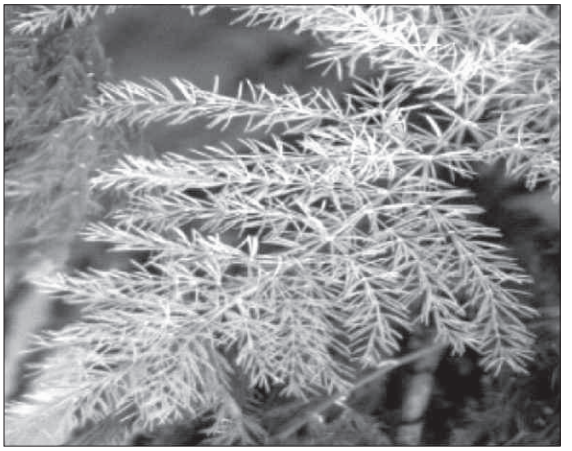

सतावर

असालियो

जीवान्ति

मेंथी

सहजन

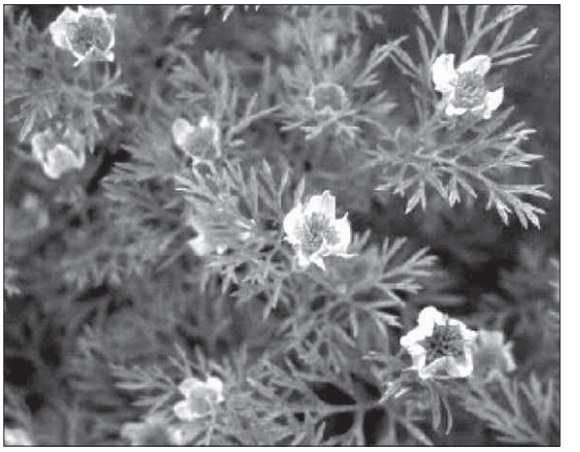

कलौंजी

चारा मक्का बीज उत्पादन प्रमाणीकरण और भंडारण

सुशान्त कुमार कौशिक, शिवा पालीवाल, प्रहलाद सिंह यादव एवं डी. विजय

चारा मक्का भारत में रबी, खरीफ, जायद तीनों मौसम में उगाई जाती है। चारा मक्का फसल उत्तम स्वादिष्ट और पौष्टिक चारा है, जो बिना किसी जोखिम के पशुओं के विकास के किसी भी चरण में खिलाया जा सकता है। इसका उपयोग हरी और सूखी रूप से किया जा सकता और इससे उत्कृष्ट साइलेज भी बनाकर कर सकते हैं।

बीज उत्पादन करने के लिए तैयारी

बीज स्त्रोत : आधार बीज उत्पादन के लिए प्रजनक, आधार बीज तथा प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए लिया जाता है। किसान अपने द्वारा उगाई गई बीज से भी बीज उत्पादन कर सकता है। बशर्ते बीज प्रमाणीकरण संस्थान के सिद्धान्त को पूरा करते हो।

खेत का चयन : चारा मक्का बीज उत्पादन की फसल के लिए चयनित खेत स्वतः उगे पौधों व खरपतवार रहित हो तथा उसमें जल निकास का उचित प्रबंधन हो। इसके लिए किसी विशेष किस्म के भूमि की आवश्यकता नहीं होती है।

परम्परागत दूरी : परम्परागत दूरी द्वारा होने वाली मिश्रित परागण को रोका जा सकता है। मक्का की मुक्त परागित किस्मों के आधार बीज उत्पादन के लिए 400 मीटर तथा परम्परागत बीज उत्पादन के लिए 200 मीटर अन्य किस्मों के खेतों से तथा उसी किस्म के उन खेतों से जो किस्म संबंधित शुद्धता के प्रमाणीकरण मानकों के अनुरूप न हो, बीज फसल उत्पादन के लिए परम्परागत दूरी आवश्यक है।

मिट्टी की स्थिति : चारा मक्का की बुवाई सभी तरह की भूमियों (मिट्टी) में की जा सकती है। किन्तु अच्छी प्रकार तथा अधिक बीज उत्पादन के लिए अच्छे जल निकास वाली मटियार दोमट मिट्टी अनुकूल मानी जाती है।

किस्में : चारा मक्का बीज उत्पादन के लिए प्रमुख किस्में, अफ्रीकन टाल, विजय कम्पोजिट, मोती कम्पोजिट, जवाहर कम्पोजिट, ए.पी.एफ.–8, प्रताप मक्का चरी–6, जम्मू–1006, पंजाब 45–55, बी.एल–54 (पहाड़ी क्षेत्र के लिए) बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

फसल प्रणाली : चारा मक्का के साथ लोबिया मिश्रित फसल के लिए पसंदीदा दलहनी चारा है। मिश्रित फसल 30 किग्रा. मक्का + 20 किग्रा. लोबिया के लिए प्रति हेक्टेयर एकान्तर पंक्तियों में 2:2 अनुपात बोया जाना चाहिए। लोबिया और मक्का (2:2) मिश्रित फसल में खरपतवार नियंत्रण करने के लिए एट्राजिन खरपतवारनाशी का उपयोग करना चाहिए अन्यथा लोबिया भी खत्म हो जायेगा।

खेत की तैयारी : बुवाई से पहले खेत की सिंचाई करके उसकों एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व 3–4 जुताई हैरो/रोट्रावेटर से करके खेत को समतल कर लेना चाहिए।

बीज उपचार : बीज उपचार बावस्टिन तथा कैप्टान 1+1 (2) ग्राम/किग्रा. दर से बुवाई के पहले थोड़ा नमी वाले बीज में मिलाकर मिक्स करने से बीज पर कोटिंग लेपन हो जाता है।

बीज उत्पादन हेतु फसल बुवाई और प्रबंधन :

बीज और बुवाई : बीज की मात्रा बीज के आकार पर निर्भर करता है। सामान्यतः 40 किग्रा./हे. के लिए पर्याप्त होता है। सिंचित क्षेत्रों में गर्मियों की बुवाई फरवरी के अंतिम सप्ताह से मार्च के प्रथम सप्ताह तथा बरसात के मौसम में फसल जून–जुलाई में वर्षा की शुरूआत के साथ बोया जाता है। रबी की फसल के लिए विशेष रूप से देश के पूर्वी

और दक्षिणी भागों में अक्टूबर–दिसम्बर में बोया जाता है। पहाड़ियों में मई का महीना उपयुक्त माना जाता है। बीज कतारों में 75 सेमी. दूरी पर, पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी. और गहराई 3–5 सेमी. रखते हुए की जानी चाहिए तथा मशीन (कार्न पलान्टर) या हल के पीछे जैसे तरीको से करने से बीज की मात्रा काफी कम (16–20 किग्रा.) हो जाती है।

पोषक तत्व प्रबंधन :

अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद 20 टन की दर से पहली जुताई के समय अच्छी प्रकार मिलानी चाहिए। इसके अतिरिक्त चारा मक्का की फसल बीज के उत्पादन के लिए लगभग 115 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस और 35 किग्रा. पोटाश/हे. की मात्रा पर्याप्त मानी जाती है। मिट्टी में जस्ते की कमी होने पर 25 किग्रा. जिंक सल्फेट/हेक्टेयर दिया जाना चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई व फॉस्फोरस, पोटाश व जस्ते की पूरी मात्राएं बुवाई के पूर्व तथा नत्रजन की शेष मात्रा का आधा भाग बुवाई के 30 दिन बाद तथा पुष्पन के समय देना चाहिए। उर्वरक बुवाई के समय बीज के साथ मिलाकर के न दें। उसे अलग से खड़ी फसल में पंक्तियों के बीच में देना चाहिए।

जल प्रबंधन :

चारा मक्का की फसल अधिक नमी के प्रति अपेक्षाकृत संवेदनशील है। इसमें विशेषकर फूल व भूट्टे निकलते समय सिंचाई आवश्यक है तथा गर्मी के मौसम में 12–15 दिनों के अंतराल पर 4–5 सिंचाई, रबी के दौरान 2–3 और वर्षा के अनुसार सिंचाई करने की आवश्यकता होती है।

खरपतवार प्रबंधन :

खरपतवार उन्मूलन के लिए 2–3 बार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए अगर खरपतवार उगने से पहले टेफजिन 2–3 किग्रा. 2000 लीटर पानी में मिलाकर/हे. छिड़काव करके खरपतवार पर नियंत्रण किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन :

भारत में मक्का की फसल विभिन्न तरह के कीट और रोग से प्रभावित रहती है। इन रोगों से बचाव करने के लिए उपचारित बीज का प्रयोग करना चाहिए। बुवाई में देर होने तथा अधिक वर्षा के कारण कवक तथा जीवाणु का प्रकोप होने की सम्भावना बढ़ जाती है। पत्तियों को झुलसा रोग से बचाने के हेतु जिनेब 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव लक्षण देखते ही प्रारम्भ कर देना चाहिए। रोमल फॅफूदी नजर आते ही 2–3 छिड़काव 0. 25 प्रतिशत डाइथेन एम–45 का करते हैं। तना विगलन रोग के नियंत्रण के लिए 0.2 प्रतिशत कैप्टान का घोल जड़ों में प्रयोग करें तथा मृदु रोम की रोकथाम के लिए अपरान 35 एस.डी. 4 किग्रा./बीज को उपचारित करके प्रयोग करें।

कीट प्रबंधन :

तना भेदक के रोकथाम के लिए बुवाई के 15–20 दिन बाद छिड़काव करते हैं। दीमक तथा प्ररोह मक्खी की रोकथाम के लिए इमेडाक्लोरोमाइड 4 ग्रा/किग्रा. तथा प्रोपोमिल 40 मि.ली/किग्रा. की दर से बीज उपचारित करके प्रयोग करें।

अनावश्यक पौधों को निकालना :

खेत में से दो बार पुष्पन तथा परिपक्व अवस्था में अलग तरह के दिखने वाले पौधों को निकाला जाता है इसके साथ रोग ग्रस्त पौधों को भी निकाल देना चाहिए।

सिल छंटाई :

मक्का के बहुत छोटे आकार वाली सिल को निकाले तथा जो बीज पंक्तियों तथा बीज संख्या और रंग में अंतर दिखे और जिसमें बहुत कम मात्रा में बीज हो उसे निकाल दे।

गोलदाजी :

बीज को यांत्रिक तरीकों से अलग किया जाना गोलदाजी कहलाता है। इसके लिए नमी की मात्रा बीज में लगभग 15 प्रतिशत और सिल में 25 प्रतिशत होना चाहिए। कटाई के

बाद सिल को आवश्यक नमी के स्तर तक सुखाया जा सकता है और नमी के कारण होने वाली यांत्रिक क्षति को कम किया जा सकता है। यांत्रिक क्षति की घटना कम से कम होने का प्रयास करना होता है।

बीज प्रसंस्करण, श्रेणीकरण एवं भंडारण

कटाई एवं खलिहान : बीज उत्पादन फसल की कटाई 14 प्रतिशत नमी अवस्था पर की जाती है। यदि कृत्रिम सुखाई की व्यवस्था हो तो कटाई 20–34 प्रतिशत नमी अवस्था पर की जा सकती है। अलग तरह की दिखने वाली तथा रोगग्रस्त भूट्टों को निकाल दिया जाता है और उसे 10–20 प्रतिशत नमी अवस्था तक सुखाकर दाने निकाल लिए जाते हैं। संसाधन के बाद बीज को बोरों में भरकर उचित दशाओं में उसका भंडारण किया जाता है।

बीज सुखाना : बीज सुखाने के लिए ड्रायर का इस्तेमाल किया जा सकता है। सुखाने के दौरान, हवा का तापमान 40° सेल्सियस से ऊपर जाना चाहिए। इसी तरह हल्के सूर्य के तहत फर्श पर पतली परत बनाकर सुखाना चाहिए।

बीज श्रेणीकरण : चारा मक्का बीज समान आकार के साथ छिद्रित चलनी के साथ चाल करके समान आकार का बीज प्राप्त किया जा सकता है।

बीज उत्पादन : ऊपर लिखे तथा बीज प्रमाणीकरण संस्थान के द्वारा सभी मानकों को पूरा करने के पश्चात् 1200–1300 किलो बीज/हे. उत्तम बीज प्राप्त किया जा सकता है।

मक्का बीज का भंडारण : मक्का के बीजों की अच्छी तरह सफाई करके एवं बीज श्रेणीकरण के बाद भंडारण से पहले बीज उपचार किया जाता है। अनुसंधान परिणामों से पता चला कि बीज उपचार से 10 मिलीलीटर पॉलीमर + थीरम 2 ग्राम/किलो की दर से भंडारण प्लास्टिक के डिब्बे में संग्रहित बीज अधिकतम बीज की गुणवत्ता के मानकों पर पर्याप्त होना पाया गया है।

बीज प्रमाणीकरण

बीज प्रमाणीकरण बीज की गुणवत्ता की गारंटी के रूप में यह सुनिश्चित करता है। प्रमाणित बीज आनुवांशिक, भौतिक, शारीरिक और स्वस्थ होते हैं। आनुवंशिक पवित्रता का मतलब है बीज एक संयत्र है जो विभिन्न प्रकार के किस्म विशेषताओं के अनुरूप करने के लिए जन्म देता है। शारीरिक पवित्रता का मतलब है कि बीज पत्थर, टूटी बीज, पुआल, कंक्रीट और पत्ती आदि से मुक्त है। शारीरिक गुणवत्ता के अंकुरण से मापा जाता है और स्वस्थ बीज कीट और रोगों से मुक्ति परिकल्पना की गई है। बीज प्रमाणीकरण कई चरणों में किया जाता है। इसकी पुष्टि करने के लिए बीज पौधों की वृद्धि, फूल, कटाई, प्रसंस्करण तथा प्रमाणीकरण स्त्रोत, अलगाव दूरी और निरीक्षण के सत्यापन से शुरू होता है। इसके अलावा बीज के नमूने परीक्षण प्रयोगशाला में परीक्षण करने के लिए भेजा जाता है। तत्पश्चात् फिर प्रमाणीकरण टैग जारी किया जाता है। टैग का रंग बीज के आधार पर निर्भर करता है। बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा सभी मानकों को पूरा करने के बाद बीज को प्रमाणित तथा बिक्री के लिए अनुमति प्रदान कर दिये जाते हैं तथा बीज प्रमाणीकरण में कुछ निम्न प्रकार के मानक है।

खेत के लिए मानक (प्रमाणित बीज)

	कारक	अधिकतम अनुमति (%)
1	अनवांछित पौधे	0.5%
2	पौध पुष्प गुच्छा	1.0%
3	न्यूनतम	98.0%
4	निष्क्रिय पदार्थ	2.0%
5	अन्य फसल बीज	10.0/किग्रा.
6	किस्मों से अलग तरह पहचाने गये पौध	10.0/किग्रा.
7	अंकुरण	90.0%
8	नमी (नमीवाण्य प्रवेषक के लिए)	12.0%
9	पात्रवाण्य प्रतिरोधक	8.0%

साइलेज बनायें वर्षभर हरा चारा खिलायें

के.के. सिंह, एम.एम. दास, एस.बी. मैति एवं ए.के. मिश्रा

पशुपालन व्यवसाय हेतु पशुओं के भोजन में हरे चारे का महत्वपूर्ण स्थान है एवं पशु पालकों को अपने पशुओं को वर्ष पर्यन्त हरा चारा उपलब्ध कराना एक चुनौती से कम नहीं है। आमतौर पर जुलाई से अक्टूबर एवं मध्य दिसम्बर से मार्च तक पर्याप्त मात्रा में हरा चारा उपलब्ध रहता है। मानसून के पश्चात चरागाहों में भी प्रचुर मात्रा में घास उपलब्ध रहता है। कई बार चारे की उपलब्धता तत्कालीन आवश्यकता से अधिक होती है जिसका उपयोग नहीं हो पाता और वह खराब हो जाता है। इसके विपरीत अक्टूबर से दिसम्बर एवं अप्रैल से जून के बीच हरे चारे की एकाएक कमी हो जाती है। विशेषकर गर्मियों के मौसम में हरे चारे का अकाल हो जाता है। यदि खरीफ एवं रबी के मौसम में आवश्यकता से अधिक उपलब्ध हरे चारे को साइलेज के रूप में संरक्षित कर लिया जाये तो हरे चारे की कमी एवं अभाव के दिनों में पशुओं को समुचित पौष्टिक चारा उपलब्ध कराया जा सकता है।

साइलेज क्या है ?

साइलेज चारा संरक्षण की एक बहुत सरल एवं उपयोगी विधि है। हरे चारे को वायु रहित अवस्था में संरक्षित करने को साइलेज कहते हैं। यह अम्लीय होता है जिससे हानिकारक जीवाणुओं की बढ़त रुक जाती है। साइलेज बनाने से पोषक तत्वों का नुकसान नहीं होता है तथा पाचक एवं रूचिकर चारा बनता है। इससे चारे की कमी के समय साइलेज के रूप में अच्छा हरा चारा मिलता है।

साइलेज के लाभ

- हरे चारे को साईलेज के रूप में संरक्षित कर चारे की कमी के समय उपयोग किया जा सकता है।
- साइलेज बनाने में कम स्थान की आवश्यकता पड़ती है।
- साइलेज को किसी भी मौसम में बनाया जा सकता है।
- साइलेज अम्लीय होने के कारण यह जीवाणु रहित होता है तथा वर्षों तक रखा जा सकता है।

साइलो क्या है ?

जिस गड्ढे या पात्र में साइलेज बनाया जाता है उसे साइलो कहते हैं। साइलो कई आकार के होते हैं जैसे कच्चा, वंकर, टावर, टेंच (खाई) आदि। आमतौर से एक घन मीटर के साइलो से 3 से 4 कुन्तल साइलेज प्राप्त होता है। इस प्रकार से यदि एक पशु को 10 कि. ग्रा. साइलेज पूरक के रूप में खिलाना है तो एक माह के लिऐ एक घन मीटर के साइलो की आवश्यकता होगी। इस प्रकार से साइलो के आकार की गणना की जा सकती है। विभिन्न परिस्थितियों के लिये भिन्न–भिन्न साइलो का उपयोग किया जाता है। जहाँ यंत्रीकरण कम हो अर्थात कम से कम मशीनों का साइलेज बनाने में उपयोग हो वहाँ जमीन के उपर बंकर सबसे उपयुक्त होता है। बड़े–बड़े सरकारी डेरी फार्मों के लिऐ जमीन के नीचे टेंच साइलो सबसे उपयुक्त पाया गया है।

साइलेज के लिये गड्ढे का चयन

ऊँची जमीन जहाँ पर पानी नहीं भरता हो तथा सतह कठोर हो, गड्ढे बनाने के लिये उपयुक्त होती है। गड्ढे का आकार अपनी आवश्यकता अनुसार रख सकते है। आमतौर से 1 घन मीटर के गड्ढे में लगभग 3 से 4 कुन्तल साइलेज बनाया जा सकता है। गड्ढ़ों को सीमेंन्ट कंक्रीट तथा ईटों से पक्का करना ठीक रहता

है। कच्चे गड्ढें में भी साइलेज बनाया जा सकता हैं। परन्तु पानी से बचाने हेतु कच्चे गड्ढे में पॉलीथीन शीट अवश्य बिछानी चाहिये।

जमीन के नीचे गड्ढा

जमीन के ऊपर ट्रेंच

जमीन के नीचे ट्रेंच

साइलेज के लिये फसलों का चयन

चारे की फसल जिसमें पानी में घुलनशील शर्करा अधिक मात्रा में हो, उसे साईलेज के लिए उपयुक्त माना गया है। अनाज वाले चारा फसलें जैसे मक्का, बाजरा, ज्वार, नेपियर, गिनी घास, एवं जई साइलेज के लिए उपयुक्त है। अकेले दलहनी चारा फसलें जैसे बरसीम, लोबिया, स्टाइलो, रिजका ग्वार से साइलेज बनाना लाभप्रद नहीं होता है। बल्कि इन्हें अनाज या घासीय चारों के साथ मिश्रण कर साइलेज बनाना ज्यादा हितकर है। इस प्रक्रिया से घासीय चारों एवं निम्नकोटि के चारा फसलों, भूसा एवं कड़वी इत्यादि के पौष्टिक द्रव्यों विशेषतः प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि होती है।

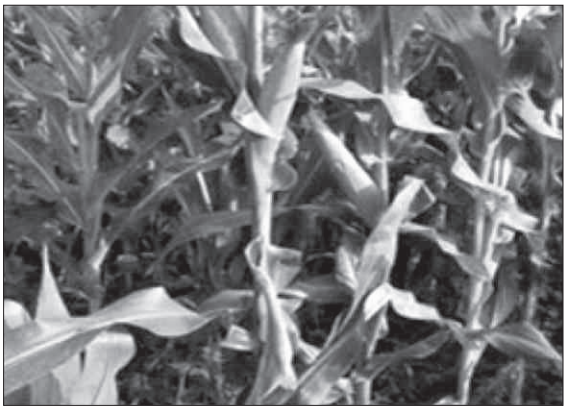

मक्के की फसल

गिनी घास

ज्वार की फसल

जई की फसल

फसलों की कटाई की अवस्था

फसलों में फूल आने के बाद अर्थात् जब फूल 50 प्रतिशत दिखने लग जाए तब कटाई करनी चाहिये। फसलें दोपहर के बाद काटना चाहियें तथा कुछ समय सूखने के लिये छोड़ देना चाहिये।

तालिका : चारों के कटाई की उचित अवस्था

चारे का नाम	अवस्था
मक्का	50 प्रतिशत फूल आने से दुग्धावस्था तक
ज्वार	50 प्रतिशत फूल आने से दुग्धावस्था तक
जई	बूट से दुग्धावस्था तक
गिनी घास	फूल आने शुरू होने पर

साइलेज बनाते समय नमी का आंकलन

साइलेज बनाते समय नमी की सही मात्रा का होना बहुत ही जरूरी है। जब चारे की फसल पचास प्रतिशत फूल की अवस्था में होता है तब चारे में 80 से 85 प्रतिशत नमी होता है। जबकि साइलेज बनाने के लिए 65 से 70 प्रतिशत नमी होनी चाहिये।

- कुट्टी किये हुये चारे को हाथों में लेकर गोला बनाये यदि गोला तुरन्त खुलने लगता है और फूट जाता है तो समझना चाहिये कि चारे में नमी की मात्रा (30 से 40 प्रतिशत) कम है।
- यदि कुट्टी के गोले के आकार में कोई परिवर्तन नहीं होता है तो समझना चाहिए कि चारे में नमी की मात्रा (80 से 85 प्रतिशत) बहुत अधिक है।
- यदि कुट्टी का गोला धीरे धीरे खुलता है तथा गोले का आकार बना रहता है तो समझना चाहिए कि चारे में नमी की मात्रा उपयुक्त (65 से 70 प्रतिशत) है।

साइलेज बनाने की विधि

साइलेज बनाने की प्रक्रिया को तीन चरणों में विभक्त किया गया है।

चारे की कुट्टी करना

साइलेज किसी भी समय बनाया जा सकता है। सबसे पहले हरे चारे की कुट्टी कर लें। कुट्टी छोटे आकार 2 से 3 सेमी. की होनी चाहिए। कुट्टी छोटी होने से भरना आसान हो जाता है।

गड्ढों की भराई

चारे की कुट्टी को गड्ढें में भरते समय अच्छी तरह दबाते रहना चाहिए जिससे अन्दर की वायु बाहर निकल जाये। लाभदायक जीवाणु वायु रहित अवस्था में अधिक बढ़ते है तथा साइलेज बनने की क्रिया सुचारू रूप से होती है।

गड्ढों को बन्द करना

गड्ढों को भरने के बाद सूखी घास, भूसा तथा पुआल आदि की पर्त लगाकर चिकनी मिट्टी से लेप देना चाहिए अथवा ढ़कने के लिये पॉलीथीन की चादर का भी प्रयोग कर सकते हैं। ध्यान रहे कि गड्ढा अच्छी तरह से बन्द हो जिससे बाहर की हवा तथा वर्षा का पानी अन्दर न जा सकें।

चारे की कुट्टी करना

गड्ढे की भराई

गड्ढे की ढकाई

पशुओं को खिलाना

45 से 60 दिन में साइलेज खिलाने को तैयार हो जाता है। चूंकि साइलेज में हरे चारे का ही पोषक तत्व संरक्षित रहता है अतः इसे हरे चारे के स्थान पर खिलाया जा सकता है। साइलेज को अन्य सूखे चारे के साथ पूरक के रूप में भी खिलाया जा सकता है। साइलेज के साथ थोड़ा दाना मिश्रण भी देते रहना चाहिए। चूंकि साइलेज अम्लीय प्रकृति की होती है यह छोटे बच्चों को नहीं खिलाना चाहिए। गाय एवं भैंस के 6 माह से बड़े बच्चों को तथा भेड़ व बकरी के 2 माह से बड़े बच्चों को साइलेज खिलानी चाहिए। पशु आहार में साइलेज को एक साथ सम्मिलित नहीं करना चाहिए। धीरे–धीरे पशु को आदती बना कर साइलेज की मात्रा उसके आहार में बढ़ानी चाहिए।

हरे चारे की कमी की दशा में पशुओं का पोषण ऐसे करें

सतेन्द्र कुमार, शेषधर पाण्डेय, राजीव कुमार अग्रवाल, एम.एम. दास, के.के.सिंह एवं रोहित कटियार

मानव आहार में पशु उत्पादों का एक विशेष स्थान है। पशु उत्पादों में वृद्धि तभी संभव है, जब पशुधन के पोषण के लिए वर्ष भर पौष्टिक चारा उपलब्ध रहे। अधिकांशतः चारे को हरी अवस्था में पशुओं को खिलाया जाता है तथा इसकी अतिरिक्त मात्रा को सुखाकर संरक्षित कर लिया जाता है जिसका उपयोग चारे की कमी के समय पशुओं को खिलाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस चारे का भंडारण यदि वैज्ञानिक तरीके से किया जाये तो उसकी गुणवत्ता में कोई कमी नहीं आती साथ ही कुछ विशेष तरीकों से चारे को उपचारित करके रखने से उसकी पौष्टिकता में वृद्धि भी की जा सकती है।

उपचारित चारे का पशुपोषण में प्रयोग

हरे चारे का संसाधन एवं भंडारण : चारा फसलों से प्राप्त हरे चारे को वैज्ञानिक विधि से संशोधित एवं भंडारित करने से चारे की पौष्टिकता बनी रहती है। अतः पशुपालकों को आवश्यकता से अधिक उपलब्ध हरे चारे को वैज्ञानिक विधि से संरक्षित करना चाहिए।

(1) हरे चारे से 'हे' बनाना : 'हे' बनाने के लिए कटाई के बाद हरे चारे या घास को 15–20 प्रतिशत नमी की मात्रा

मशीन द्वारा संघनित 'हे' का भंडारण

तक सुखाया जाता है। इससे पादप कोशिकाओं तथा जीवाणुओं की एन्जाइम क्रिया रूक जाती है और चारे की पौष्टिकता में कमी नहीं आती है। 'हे' बनाने के लिए लोबिया, बरसीम, रिजका, ज्वार, नेपियर, जई, बाजरा, मक्का, गिन्नी, अंजन आदि फसलों का प्रयोग किया जाता है। दलहनी चारा फसलों में पाच्य तत्व अधिक होते हैं तथा इसमें प्रोटीन व विटामिन ए, डी व ई भी प्रचुर मात्रा में पायी जाती हैं। दुग्ध उत्पादन के लिए ये फसलें बहुत उपयुक्त होती हैं। इन फसलों से प्राप्त हरे चारे को सुखाने हेतु निम्नलिखित विधियों में से किसी एक विधि को अपनाकर पशुओं के लिए पौष्टिक हे बनाया जा सकता है।

अ. हरे चारे को परतों में सुखाना : चारे की फसल जब 50 प्रतिशत फूल वाली अवस्था में होती है तो उसे काटकर एवं एक समान परत के रूप में पूरे खेत में फैला देते हैं तथा बीच–बीच में (24–48 घंण्टों के अन्तराल पर) उसे पलटते रहते हैं और लगभग 15 प्रतिशत नमी की मात्रा तक चारे को सुखा लिया जाता है।

ब. हरे चारे को गट्ठरों में सुखाना : चारे की फसल को काटकर 24–48 घण्टों के लिए खेत में छोड़ देते हैं, तत्पश्चात् चारे को छोटे–छोटे बंडलों/गट्ठरों में बाँधकर खेत में फैला देते हैं और समय–समय पर बंडलों को पलटते हुए लगभग 15–20 प्रतिशत नमी की मात्रा तक चारे को सुखाया जाता है।

स. चारे को तिपाई विधि द्वारा सुखाना : जहाँ भूमि अधिक गीली रहती हो अथवा वर्षा अधिक होती हो ऐसे स्थानों पर खेतों में तिपाइयां गाढ़कर चारे को उन पर फैला देते हैं और इस प्रकार भूमि के बिना संपर्क में आए, हवा व धूप से चारा सूख जाता है। कई स्थानों पर घरों की छत पर, खेत की ऊँची मेड़ों एवं कच्ची सड़कों के किनारों पर भी घासों को सुखा कर 'हे' बनाया जाता है।

उपर्युक्त विधियों से सुखाये गये चारे को भंडारित करने के लिए ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिए, जहाँ वर्षा आदि का पानी जमा न हो। भंडारण करते समय चारे को अच्छी तरह से दबा कर एक ढेर के रूप में इकट्ठा कर देते हैं और ऊपरी भाग को शंक्वाकार बना देते हैं। ताकि वर्षा का पानी ढेर के अन्दर प्रवेश न कर सकें।

(2) भूसे का यूरिया से उपचार : भूसा, पुआल जैसे फसलों के उपोत्पादों या ज्वार, बाजरा, मक्का की कुट्टी, गन्ने का सूखा अगोला, सूखी घासों आदि की पोषकता बहुत कम होती है। इनका रेशा अधिक कड़ा और लिग्नीफाइड होने के कारण कम पचनीय होता है। पशुओं को खिलाए जाने वाले सूखे चारे व भूसे में पाचक प्रोटीन न के बराबर होती है तथा आवश्यक ऊर्जा भी बहुत कम होती है। इन परिस्थितियों में यदि पशु अपना निर्वाह इस प्रकार के सूखे चारे पर करता है, तो बहुत शीघ्रता से देह भार में कमी के साथ–साथ उसकी उत्पादन क्षमता में भी कमी आ जाती है। वैज्ञानिकों के द्वारा किये गये शोध कार्यों से ज्ञात है कि पशुओं में एक

भूसे का यूरिया द्वारा उपचार

सीमा तक, यूरिया में पायी जाने वाली नाइट्रोजन को प्रोटीन में बदलने की क्षमता होती है। अतः नीचे कुछ ऐसी विधियां सुझाई गयी है, जिससे उपलब्ध सूखे चारे को यूरिया से उपचारित करके एवं उसकी पोषकता व गुणवत्ता में सुधार करके प्रति पशु उपलब्ध होने वाले पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ायी जा सकती है।

अ. चारे को यूरिया से उपचारित करने की विधि : गेहूँ के भूसे अथवा कुट्टी किए हुए पुआल आदि को उपचारित करने के लिए 4 किग्रा यूरिया को 50–60 लीटर स्वच्छ पानी में भली–भांति घोल लें। इसके बाद 100 किग्रा. भूसे अथवा कुट्टी किए हुए पुआल को पक्के फर्श पर एक जैसा बिछा लें, जिसकी ऊँचाई 30 सेमी. से अधिक नहीं होनी चाहिए। अब यूरिया के घोल का छिड़काव भूसे अथवा कुट्टी पर समान रूप से करें एवं फर्श पर ही ढेर बनाकर पैरों से अच्छी तरह दबा कर पालीथीन से ढक दें, जिससे उसमें वायु का प्रवेश न हो पाए। इस ढेर को 18–21 दिन तक इसी अवस्था में छोड़ दें। ऐसा करने पर यूरिया से अमोनिया गैस बनती है, जो कि भूसे को मुलायम बना देती है तथा उसमें प्रोटीन की मात्रा 3.0 –3.5 प्रतिशत से बढ़कर 8–9 प्रतिशत हो जाती है। इस उपचारित भूसे से कम मात्रा में ही पशुओं को और अधिक संतुलित पोषक तत्व मिल जाते हैं। उपचारित भूसे को निकालकर ढेर को पुनः पॉलीथीन से ढक

देना चाहिए। निम्नांकित सारणी–1 में यूरिया द्वारा उपचारित एवं बिना उपचारित चारे में पाये जाने वाले रासायनिक संघटनों का तुलनात्मक विवरण दिया गया है।

सारणी–1 : यूरिया उपचारित एवं बिना उपचार के भूसे का रासायनिक संघटन

क्र.सं.	पोषक पदार्थ	भूसा (बिना किसी उपचार के)	भूसा (यूरिया द्वारा उपचारित)
1.	शुष्क पदार्थ	93.18	58.20
2.	कार्बनिक पदार्थ	90.91	89.49
3.	क्रूड प्रोटीन	03.64	09.06
4.	न्यूट्रल डिटर्जेन्ट फाइबर	75.55	70.49
5.	एसिड डिटर्जेन्ट फाइबर	49.24	47.75
6.	ईथर एक्सट्रेक्ट	01.64	01.61

ब. चारे को यूरिया–शीरा द्वारा उपचारित करने की विधि : इस विधि में 100 किग्रा. भूसे को उपचारित करने के लिए 1 किग्रा. यूरिया, 10 किग्रा. शीरा और 1 किग्रा. लवण मिश्रण तथा 15–20 लीटर स्वच्छ पानी की आवश्यकता होती है। उपचारित करने के लिए 1 किग्रा. यूरिया को 7 लीटर पानी में तथा बचे हुए 8 लीटर पानी में शीरा एवं लवण मिश्रण को अच्छी तरह घोल लिया जाता है। इसके बाद दोनो घोलों को अच्छी तरह मिलाया जाता है। इस घोल को 100 किग्रा. भूसे की 30 सेमी. मोटी परत पर हजारे द्वारा छिड़क दिया जाता है तथा हाथों द्वारा भूसे को अच्छी तरह मिलाया जाता है। जब यह भली प्रकार मिल जाता है तो उसे तुरंत पशुओं को खिला सकते हैं। इससे भी चारे की पचनीयता एवं पौष्टिकता में काफी वृद्धि होती है। उपरोक्त दोनो विधियों से चारे को उपचारित करने में प्रयुक्त आवश्यक सामग्री एवं मात्रा सारणी–2 में दर्शायी गयी है।

सारणी–2 : यूरिया तथा यूरिया–शीरा द्वारा उपचार के लिए आवश्यक सामग्री एवं मात्रा

आवश्यक सामग्री	यूरिया द्वारा उपचार के लिए	यूरिया–शीरा द्वारा उपचार के लिए
गेहूँ का भूसा या पुआल	100 किग्रा	100 किग्रा
यूरिया	4 किग्रा	1 किग्रा
शीरा	–	10 किग्रा
लवण मिश्रण	–	1 किग्रा
स्वच्छ पानी	50–60 लीटर	15–20 लीटर

सावधानियाँ :

अ. यूरिया का घोल साफ पानी में तथा यूरिया की सही मात्रा के साथ तैयार करना चाहिए।

ब. घोल में यूरिया पूरी तरह से घुल जाना चाहिए।

स. यूरिया द्वारा उपचारित चारे/भूसे को 3 सप्ताह से पहले पशु को कदापि नहीं खिलाना चाहिए।

द. यूरिया के घोल का चारे के ऊपर एक समान रूप से छिड़काव करना चाहिए।

(3) साइलेज बनाने योग्य फसलें : साइलेज लगभग सभी घासों से अकेले या उनके मिश्रण से बनाया जा सकता है। जिन फसलों में घुलनशील कोर्ब्रोहाईड्रेट अधिक मात्रा में होते हैं जैसे– ज्वार, मक्का, गिन्नी घास, नेपियर, सिटीरिया आदि साइलेज बनाने के लिए उत्तम होती हैं। फलीदार चारा फसलों को कार्बोहाईड्रेट वाली फसलों के साथ मिलाकर अथवा शीरा मिला कर साइलेज के लिए प्रयोग किया जाता है।

साइलोपिट (गड्ढा) बनाना : साइलेज जिन गड्ढों में तैयार किया जाता है उसे साइलोपिट कहते हैं। गड्ढों की दीवारें जमीन की सतह से ऊपर निकली हुई होनी चाहिए एवं दीवारों व फर्श को सीमेंन्ट से प्लास्टर कर देना चाहिए। ताकि वर्षा आदि का पानी गड्ढ़ों में प्रवेश न कर सके। सामान्यतः, साइलेज बनाने के लिए 1 X 1 X 1 मीटर के गड्ढें का निर्माण करना चाहिए। इसमें लगभग 3–4 कुन्तल साइलेज बनाया जा सकता है। आवश्यकता एवं सुविधानुसार गड्ढ़ों के आकार में परिवर्तन किया जा सकता है।

साइलेज बनाने की विधि : साइलेज बनाने के लिए जिस हरे चारे का इस्तेमाल करना हो उसे उपयुक्त अवस्था में खेत से काट कर 2 से 3 सेन्टीमीटर के टुकडों में कुट्टी बना लेते हैं ताकि ज्यादा से ज्यादा

साइलेज बनाने के लिए चारा द्वारा गढ़डों की भराई

चारा साइलों पिट में भरा जा सके। कुट्टी किया हुआ चारा अच्छी तरह दबा–दबा कर गड्ढें में भरना चाहिए। फिर इसके ऊपर पॉलीथीन की शीट बिछा दी जाती है अथवा सूखी घास, भूसा या पुवाल की परत बिछाकर इस परत को गोबर व चिकनी मिटटी से लीप दिया जाता है। दरारें पड़ जाने पर उन्हें मिटटी से बन्द करते रहना चाहिए ताकि हवा व पानी गड्ढ़े में प्रवेश न कर सके। लगभग 45 से 60 दिनों में साइलेज बन कर तैयार हो जाता है जिसे गड्ढे को एक तरफ से खोलकर मिट्टी व पॉलीथीन शीट हटाकर आवश्यकतानुसार निकालकर पशु को खिलाया जा सकता है। साइलेज को निकालकर गड्ढ़े को पुनः पॉलीथीन शीट व मिट्टी से ढक देना चाहिए। धीरे–धीरे पशुओं को इसका स्वाद लग जाने पर हरे चारे की 35–50 प्रतिशत मात्रा साइलेज के रूप में खिलाई जा सकती है।

सारणी 3 : मक्का से बनाये गये साइलेज में पाये जाने वाले पोषक पदार्थों का विवरण

क्र.सं.	पदार्थ	मात्रा (प्रतिशत में)
1	शुष्क पदार्थ	25–35
2	प्रोटीन	5–10
3	रेशा	15–27
4	स्टार्च	18–37
5	वसा	2–3
6	लिग्निन	2–3

(4) संपूर्ण आहार ब्लाक : संपूर्ण आहार ब्लाक बनाने के लिए चारे एवं दाने की संतुलित मात्रा को मिलाकर मशीन के द्वारा ब्लाक के रूप में संघनित कर दिया जाता है। इस विधि से तैयार ब्लाक को पशुओं को खिलाकर आवश्यक पोषक तत्वों की जरूरत को पूरा किया जा सकता है। ब्लाक बनाने से पूर्व प्रयोग किये जाने वाले चारे को मशीन से कुटटी कर लिया जाता है। सरसों की खली, पिसा हुआ जौ, चोकर, यूरिया, नमक

एवं खनिज मिश्रण से तैयार किया हुआ दाना मिश्रण एवं चारे को एक निश्चित अनुपात में (दाना मिश्रण 40 प्रतिशत एवं चारा 60 प्रतिशत) अच्छी तरह से पक्की फर्स अथवा पॉलीथीन के ऊपर हाथ से मिला लिया जाता है। तैयार हुए इस मिश्रण को मशीन में डाला जाता है जो इसे दबाकर एक ब्लाक के रूप में संघनित कर देती है। मशीन द्वारा बनाये गये एक ब्लाक का भार लगभग 3.5 किग्रा. होता है।

मशीन द्वारा संघनित संपूर्ण आहार ब्लाक

सारणी 4 : दाना मिश्रण बनाने के लिए आवश्यक सामग्री एवं मात्रा

क्र.सं.	सामग्री	मात्रा (%)
1	सरसों की खली / अन्य कोई खली	35
2	पिसा हुआ जौ / मक्का	25
3	गेहूँ का चोकर / कन	37
4	यूरिया	1
5	नमक	1
6	खनिज मिश्रण	1

पशुओं को संपूर्ण आहार ब्लाक खिलाने की विधि : दुधारू पशु जिस का देह भार 400 से 450 किग्रा. तथा दुग्ध उत्पादन 6–8 किग्रा. है, उसको 3 या 4 ब्लाक देना उपयुक्त होता है। शुरू में एक ब्लाक को 2 या 3 टुकड़ों में तोड़कर दिया जाता है लेकिन बाद में पशु स्वयं ही ब्लाक को तोड़–तोड़ कर खाने लगता है। अच्छी चराई की उपलब्धता होने पर ब्लाक की मात्रा को एक या दो तक सीमित कर सकते हैं।

(5) फीड पैलेट : चारे की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए कुछ उपचारों के अन्तर्गत चारे की गोलियाँ बनाना अर्थात–पैलेटिंग शामिल है। पीसने व पैलेटिंग की प्रक्रिया द्वारा पदार्थों का आयतन कम होने के साथ–साथ उसकी एकरसता घनत्व (4–5 गुना) एवं पाचकता बढ़ जाती है तथा इन पैलेट्स को एक स्थान से दूसरी स्थान पर आसानी से ले जाया जा सकता है। इनके भंडारण के लिए कम जगह की आवश्यकता होती है।

पैलेट बनाने की विधि : भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी द्वारा विकसित फीड पैलेटिंग मशीन का प्रयोग करके फीड पैलेट को बनाया जा सकता है। यह मशीन 5 हॉर्सपावर मोटर द्वारा चलाई जा सकती है। विभिन्न आकार की डाई का प्रयोग करके अलग व्यास (मोटाई) की पैलेट बनाई जा सकती है। गाय व भैंस के लिए पैलेट का व्यास 28 या 38 मिमी व भेंड़ बकरियों के लिए 16 मिमी. की पैलेट बनाना उचित रहता है।

पैलेटिंग मशीन द्वारा फीड पैलेट का निर्माण

पैलेट बनाने के लिए क्या–क्या मिलाएं : इसके लिए अवयवों क्षेत्रीय उपलब्धता एवं उनकी कीमत को ध्यान में रखा जाता है। सामान्यतः गेहूँ का भूसा 20 प्रतिशत,

सूबबूल की सूखी पत्तियाँ 30 प्रतिशत, गेहूँ का चोकर 19 प्रतिशत, खली 15 प्रतिशत, जौ पिसा हुआ 15 प्रतिशत व नमक 1 प्रतिशत अच्छी प्रकार मिलाकर मिश्रण तैयार कर लेते है। इस मिश्रण में 50 से 55 प्रतिशत वजन के आधार पर पानी मिलाकर मिश्रण को नम करके पैलेट मशीन के हापर में डालते रहते हैं। मशीन से पैलेट तैयार होकर बाहर आती रहती है। जिन्हें तुरन्त ही सूखने के लिए फैला देते हैं। पैलेट 2 या 3 दिन में भली प्रकार सूख जाती है तो इनको भंडारित कर लेते है। इस प्रकार की मशीन द्वारा 60 से 80 किग्रा पैलेट प्रति घंटा बनाया जा सकता है। यह प्रतिशत एवं घटक पदार्थ को पशु की आवश्यकता एवं उपलब्धता के अनुसार परिवर्तित किया जा सकता है।

पैलेट खिलाने की विधि : पशुओं को फसल अवशेष जैसे गेहूँ का भूसा, पुआल व हरे चारे के साथ दाने के स्थान पर पैलेट को खिलाया जा सकता है। गाय व भैंस को सामान्यतः 2 किग्रा. फीड पैलेट प्रति पशु प्रति दिन एवं भेंड़ व बकरियों को 250 ग्राम पैलेट प्रति दिन देना चाहिए। विशेषकर गर्मियों के समय जब हरा चारा उपलब्ध नहीं होता है तो उस समय पैलेट खिलाने से पशुओं की पोषण आवश्यकता को पूरा करके उनसे अच्छा उत्पादन प्राप्त कर पशु व्यवसाय को लाभप्रद बनाया जा सकता है।

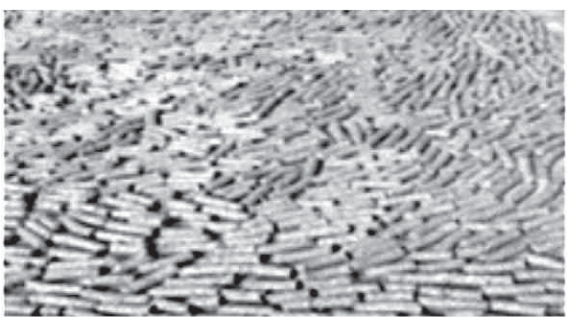

तैयार फीड पैलेट

(6) सूबबूल लीफमील : सूबबूल की पत्तियों से लीफ मील बनाने का सबसे उत्तम समय मार्च से अप्रैल एवं अक्टूबर से नवम्बर माह होता है। इस समय पौधों में पत्तियाँ अधिक मात्रा में होती है। लीफमील बनाने हेतु ऐसे टहनियों का चुनाव करना चाहिए जिनका आधार व्यास 2.5 से.मी. हो। चुने गये टहनियों को काटकर उनकी टहनियों को खलिहान में लाया जाता है एवं पत्तियों को सुखाने के लिए टहनियों को खड़ी स्थति में रखकर या विशेष रूप से बने सुखाने के ढ़ांचे (ड्राइंग स्ट्रक्चर) पर रखकर छाया में सुखाया जाता है। जब पत्तियों में नमी 8–10 प्रतिशत स्तर पर पहुँच जाती है तो इस अवस्था में हल्का झटका देने या डंडे से पीटने पर पत्तियाँ अलग हो जाती हैं। पत्तियों को एकत्र करके इनमें से डंठल आदि को निकाल कर पालीथीन बैग या साफ बोरों में भरकर भंडारित कर दिया जाता है। ताकि पत्तियों का रंग क्षय न हो।

लीफमील खिलाने का तरीका : भंडारण पात्र जैसे पॉलीथीन बैग, स्टेपल्स या पिन आदि को सावधानी पूर्वक हटाने के बाद, लीफमील को भूसे या दूसरे हरे चारे में अच्छी तरह से मिला लें फिर पशुओं को खाने के लिए दें। पशुओं के कुल चारे का एक तिहाई भाग लीफमील से सम्पूरक हो सकता है जिससे पशुओं को दी जाने वाली दाने की आधी मात्रा बचाई जा सकती है।

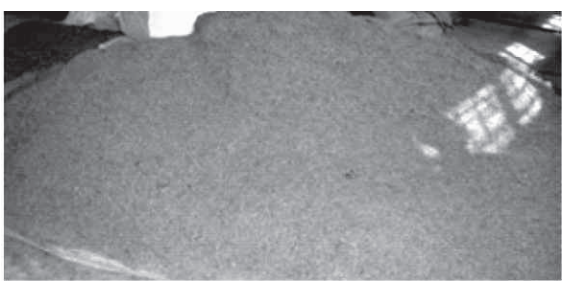

पशुओं को खिलाने हेतु तैयार सुबबूल लीफमील

निष्कर्ष :

हमारे किसान भाई एवं पशुपालक, ऊपर बताये गये तरीकों को अपनाकर अपने पशुओं के लिए आवश्यकता से अधिक उपलब्ध चारे को उपचारित करके एवं उसका संरक्षण करते हैं, तो वर्षभर पशुओं के समुचित पोषण के साथ पशु उत्पादन में भी वृद्धि की जा सकती है एवं चारे की कमी की दशा में भी पशुओं को पोषित कर अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

मृदा एवं जल संरक्षण में घास की भूमिका

अकरम अहमद, प्रभाकान्त पाठक एवं सुनील कुमार

पानी से मिट्टी का कटाव, भूमिक्षरण और मृदा की उत्पादकता में गिरावट का प्रमुख कारण है। मिट्टी के कटाव नियंत्रण हेतु मुख्य बातें जैसे पानी और हवा के परिवहन क्षमता एवं उसके द्वारा मिट्टी को तोड़ने की क्षमता को विभिन्न उपायों द्वारा कम करने से संबंधित है। संरचनात्मक/मेकेनिकल उपायों जिनके द्वारा आमतौर पर मिट्टी एवं जल का संरक्षण किया जाता है, जो मँहगे, श्रमगहित होने के साथ उनके उपयोग में अधिक तकनीकी जानकारियों की आवश्यकता होती है। ऐसी दशा में कम लागत की वैकल्पिक एंव प्रभावी तकनीकियों द्वारा मृदा एवं जल संसाधनों के संरक्षण की तकनीकियों को विकसीत करने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में घास आधारित मृदा एवं जल संरक्षण प्रणाली (जिसे जैव अभियंत्रिकी उपायों के रूप में जाना जाता है), द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में एक लागत प्रभावी समाधान प्रस्तुत करता है।

मृदा संरक्षण संरचनाओं के रूप में घास : मृदा संरक्षण संरचनाओं के रूप में घासों को उबड़–खाबड़ जमीनों, परती पट्टिनेटकाओं, टेरेस राइजरस, खेतों के मेड़, अवनत भूमि पर, शाकीय अवरोधों के रूप में पानी को पहुँचाने के लिए कच्ची नालियों (वाटर वे) पर, या नाली के किनारों को सुदृढ़ करने के लिए घासों की उपयोग किया जाता हैं। ये घासें मेड़ों और टेरेसों को शक्ति एवं स्थिरता प्रदान करने के अलावा पशुओं के चारे के रूप में भी उपयोगी होती हैं। उच्च ढलानों पर, पेड़ों और झाड़ियों का घासों के संयोजन से संसाधनों को कुशल संरक्षण के अलावा चारा तथा जलाऊ लकड़ी आदि प्राप्त किया जा सकता है।

घासों का चयन : किसानों द्वारा घासों की चयन उसकी बहु–उपयोगिता पर निर्भर करती है जैसे चयनित फसल द्वारा उसकी उपज एवं किसान की आय में वृद्धि हो, वर्षा जल संरक्षण में उसकी उपयोगिता मृदा क्षरण में आने वाली कमी आदि विभिन्न भूपरिस्थितियों के अनुसार घासों की उपयुक्त प्रजातियाँ निम्नानुसार है।

सारणी 1 : भूपरिस्थितियों के अनुसार उपयुक्त घासें

भूपरिस्थितियाँ	प्रजातियाँ
सीमांत मिट्टी/रेगिस्तान/रेत के टीले/रेवाइन्स	*सेंक्रस सीलीएरिस, सेंक्रस सेटीजिरस, क्राइसोपोगान फुलवस, लेसिरस इंडिकस, लबलब परप्यूरियस, क्लाइटोरिया टर्नेटी, स्टाइलोसेंथिस हुमिलिस, स्टाइलोसेंथिस हमाटा, मैक्रोप्टिलियम एट्रोपरप्यूरेम*
कृषियोग्य बंजर भूमि	*सेंक्रस सीलीएरिस, सेंक्रस सेटीजिरस, सेहिमा नरवोस, डाईकैन्थियम एनुलेटम, क्राइसोपोगॉन फुलबस, स्टाइलोसेंथिस, मैक्रोप्टिलियम एट्रोपरप्यूरेम, क्लाइटोरिया टर्नेटी, सेन्ट्रोसीमा प्यूबीसेन्स, ग्लाईसीन विघटी*
लवणीय और क्षारीय भूमि	*क्लोरिस गयाना, क्लोरिस बरबटा, लेसिरस इंडिकस, सितारिया स्फेसिलेटाए, मक्रोप्टिलियम एट्रोपर प्यूरेम, यूरोकलॉ मोसंबीएनसिस*
खेती के स्थानांतरण से प्रभावित भूमि	*सेंक्रस सीलीएरिस, सेंक्रस सेटीजिरस, क्राइसोपोगान फुलवस, क्लाइटोरिया टर्नेटी, लबलब परप्यूरियस, स्टाइलोसेंथिस स्केब्रा*
दलदली भूमि	*व्रेकेरिया म्युटिका, बी. ब्रिजेनथा*
सिंचित भूमि	*पेनीकम मैक्सिमम, पेनीसिटम परप्युरम, पी. अमेरिकनम*

मृदा सुदृढ़ीकरण : पौधों एवं घासों की जड़े अपने तन्य शक्ति एवं घर्षण के गुणों के कारण मिट्टी को दृढ़ता प्रदान करते हैं, यह कुछ वैसा ही होता है जैसे सीमेंट को सरिया में ढालकर दृढ़ता प्रदान किया जाता है। जड़ों के इस गुण के कारण बड़े पैमाने पर मिट्टी के कटाव एवं बर्बादी को रोका जा सकता है। जड़ों द्वारा मिट्टी के सुदृढ़ीकरण की क्षमता (परिमाण) हालाकि जड़ों की संरचना प्रणाली, जड़ों का वितरण उनके द्वारा मिट्टी को बांधने की क्षमता, जड़ों की तन्यता तथा उनकी प्रकृति एवं अन्य गुणधर्मो पर निर्भर करती है।

अपवाह एवं मृदा क्षति : लंबी सीधी कड़े तने वाली बारहमासी प्रकृति की रहवासी घासों की संकीर्ण पट्टिका जिसे कंटूर पद्धति पर लगाया जाये उसे शाकीय या वानस्पतिक अवरोध कहते है। शाकीय अवरोध मिट्टी की कटाई को रोक कर उसकी मात्रा में कमी करते हैं, वर्षा जल के प्रवाह वेग को कम करने तथा उसे समानांतर फैलाने एवं ढलानों पर बैंचिग की तरह कार्य करते है। घासों के कल्ले निकलने से ढलानों पर पानी के आसान प्रवाह में बाधा उत्पन्न होती है जिससे भूमि के अंदर पानी के रिसाव में अधिक समय मिलता है एवं इस तरह मिट्टी को जमाव की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। पर्यावरण के अनुकूल प्रकृति एवं कम लागत का होने के कारण शाकीय अवरोधों का उपयोग देश और दुनियां भर में वाटर शेड कार्यो में किया जाता है। शाकीय अवरोध तकनीक आसानी से स्थापित होने तथा उसे बनाये रखने के कारण सीमांत एवं छोटे किसानों के लिए बहुत उपयोगी है तथा उससे प्राप्त चारा के कारण सीधे आर्थिक लाभ उठाया जा सकता है।

चारा उत्पाद : शाकीय अवरोधों के उपयोग से कृषि उत्पादन भी प्रभावित होता है हालांकि कुछ नकारात्मक प्रभाव भी इसके उपयोग से पाया गया है, लेकिन फसल की उपज में होने वाले शुद्ध मुआवजे से उसकी क्षति पूर्ति हो सकती है। शाकीय अवरोधों के आस पास के क्षेत्रों में अस्थाई जल जमाव, वर्षा के दिनों में मिट्टी में अतिरिक्त नमी एवं शाकीय अवरोधों के छाया के प्रभाव के कारण तथा पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा की वजह से फसल उत्पादन में कमी पाई जाती है। बाद में हालांकि यह नकारात्मक प्रभाव कुछ समय के लिए एवं शाकीय अवरोधों से कुछ निश्चित दूरी के बाद सकारात्मक प्रभाव में बदल जाता है। एक अध्ययन में फिंगर मिलेट (रागी) की उपज लेमन घास के अवरोध एवं मेड़ +V जीजानोइड्स के अवरोध के कारण उसके कंट्रोल की तुलना में क्रमशः 25.9 एवं 5.4 प्रतिशत अधिक पाई गई ।

बंजर व ऊसर भूमि का जीर्णोद्धार

एकल घास या पेंड़ / झाड़ियों (सिल्वी पाश्चर पद्धति) के साथ संयोजन से घासों को बंजर / ऊसर भूमि के सुधार एवं प्रकृतिक संसाधनों के संरक्षण में बहुत उपयोगी पाया गया है। वन चरागाह पद्धति में पेड़ जलवायु एवं मृदा की विपरित परिस्थितियों को सहन करता है जब कि घासें भूमि को एवं मृदा आच्छादन का रूप प्रदान करती है जिससे भूमि का कटाव रूकता है। यह प्रणाली लगातार एवं स्थिर बहुरूपीय आऊटपुट जैसे चारा, ईधन, फाइबर एवं औधोगिक कच्चे माल के उत्पादन देने के अलावा दूसरे सकारात्मक पर्यावरणीय प्रभाव जैसे कार्बन का बनना सुनिश्चित करती है आदि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण घासों की प्रजातियाँ है जिनसे उबड़ खाबड़, ऊसर / बंजर जमीनों से चारा की प्राप्ति की जा सकती है एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी किया जा सकता है।

मृदा स्वास्थ्य :

जड़ों की बहुलता, मृत जड़ों के क्षरण से एवं पौधों के अवशेषों के मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों के लगातार मिलने के कारण मृदा के गुण धर्म जैसे जल धारण क्षमता, हाइड्रोलिक चालकता एवं हवा एवं पानी के प्रति

प्रतिरोध क्षमता आदि में सुधार हो जाता है यह सुधार हालाकि, व्यापकता से जलवायु और मिट्टी के प्रकार के अलावा घास की जड़ों एवं अवशेषों की रासायनिक संरचना (लिग्नीन)पर निर्भर करती है।

पोषक तत्वों का क्षरण :

कृषि क्षेत्रों से होने वाले अपवाहों में उपलब्ध पोषक तत्वों को प्रभावी तरीके से रोकने में घासों का योगदान कम लागत वाला होता है वे पानी के प्रवाह की गति को धीमा करती है जिससे निलंबित अवसाद धीरे–धीरे छनकर घास पर जमा हो जाता है, जब निलंबित अवसाद पानी द्वारा हटाया जाता है उसी समय ऐसे अवसाद पोषक तत्वों तलहट बाध्य एवं कीटनाशकों को भी सतही पानी द्वारा हटाया जाता है। अतः घासों को कीटनाशकों एवं पोषक तत्वों को रोकने के उपचारीकरण के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है, जिससे कीटनाशक को एवं पोषक तत्वों के ग्रहण की क्षमता बढ़ जाती है जो किसी अन्य विधि से रोकने में मुश्किल होता है तथा यह आसपास के अन्य भूजल स्त्रोतों में संचय हो सकता है ।

निष्कर्ष :

भारत वर्ष में अधिकतर भूमि में कुछ स्तर तक मृदा संरक्षण की आवश्यकता होती है जिससे भूमि की उत्पादकता प्रभावित न हो, अकेले घास या पेड़ों के साथ वन चरागाह पद्धति में इसका संयोजन पानी एवं हवा द्वारा मिट्टी के कटाव को रोकने में सक्षम है जिससे फसल उत्पादन बढ़ता है एवं पशुओं के लिए चारा की उपलब्धता हो सकती है इस तरह यह पद्धति किसानोंपयोगी एवं कृषि स्थिरता के लिए उपयोगी है।

खाद पड़े तो खेत। नहीं तो कूड़ा रेत।
गोबर मैला नीम की खली,
या से खेती दूनी फली।
खेत में नहीं गोबर। किसान है दूबर।

कृषक वैज्ञानिक की दावेदारी।
खाद्य सुरक्षा मेरी जिम्मेदारी।।

श्वेत क्रान्ति तब
भरपूर चारा हो जब।

फसलों में रोगों की रोकथाम के लिए बीज उपचार की विभिन्न विधियाँ

संजय कुमार, पुष्पेन्द्र कोली, ए. मैति, मंजूनाथ एन., वी.के. वासनिक, सी.के. गुप्ता एवं डी. विजय

बीज उपचार बीजों की बुवाई के पहले की जाने वाली एक साधारण प्रक्रिया है, जिसमें जैविक उत्पादों और रसायनों का उपयोग करके मिट्टी और बीज जनित कीटों और रोगों पर नियंत्रण किया जाता हैं। जिससे फसल उत्पादन के दौरान फसल की सुरक्षा होती है एवं गुणवत्तायुक्त उपज भी मिलती है।

वर्तमान में भारत में बीज की 65 प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति किसानों द्वारा अपने भोजन के उद्देश्य से बचाए हुए दाने की बीज के रूप में उपयोग करने से होती है और इन बीजों को बिना उपचार के ही खेतों में बुवाई कर दी जाती है। इसके अतिरिक्त निजी या सार्वजनिक क्षेत्र की एजेंसियाँ भी संकर बीज को छोड़कर अन्य बीजों का बड़ा प्रतिशत बिना उपचारित किये ही बिक्रय करती है। एक अनुमान के अनुसार देश में बोया गया 80 प्रतिशत बीज बिना उपचारित किया होता है। बिना उपचारित बीजों के बुवाई करने से फसल में रोगों और कीटों का ज्यादा प्रकोप, कम अंकुरण क्षमता, असामान्य बीज जमाव होता है, फलस्वरूप किसानों को कम उपज प्राप्त होती है।

बीजोपचार के लाभ

वैज्ञानिकों ने यह पाया है कि बीजोपचार के बहुत सारे लाभ खेती में मिलते हैं, फिर भी ज्यादातर किसान अनुपचारित बीज ही बोते हैं। इसलिए उपचारित बीजों के लाभों और विधियों का किसानों तक प्रचार तथा प्रसार करना बहुत आवश्यक है।

1. अंकुरण क्षमता : बीजों को उचित कवकनाशी से उपचारित करने से उनकी सतह कवकों के आक्रमण से सुरक्षित रहती है, जिससे बीजों की अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है। यदि बीज पर कवकों का आक्रमण बहुत अधिक होता हो तो भी भंडारण के दौरान उपचारित सतह के कारण बीजों की अंकुरण क्षमता बनी रहती है।

2. भंडारण में सुरक्षा : भंडारण के दौरान बीजों में विभिन्न प्रकार के कीटों का आक्रमण होता है जो बीज के भ्रूण तथा भ्रूणकोष भाग को खाकर बीज की जीवन क्षमता को खत्म कर देते हैं इसके लिए कीटनाशी रसायनों के द्वारा बीज लेपन से इसे लम्बे समय तक सुरक्षित रख सकते हैं।

3. बीज-जनित रोगों पर नियंत्रण : छोटे दाने की फसलों जैसे घासों के बीज, बाजरा के बीज और अन्य कई फसलों में बीजों के द्वारा विभिन्न रोग खेत तक पहुँचते हैं और फसल को नुकसान पहुँचाते हैं। चारा फसलों में प्रमुख बीज जनित रोग ज्वार में कर्नेल स्मट (*स्फेसिलेथेका सोर्गि*), बाजरा में अरगट (*क्लैवेसप्स* प्रजाति), ग्वार में बैक्टीरियल ब्लाइट और जई में लूज स्मट आदि हैं। इसलिए बीजों का उपचार करके फसलों को इन रोगों से बचाया जा सकता है।

4. मृदा-जनित रोगों से नियंत्रण : मृदा–जनित रोग बीजों के अंकुरण के पूर्व और बाद (दोनों स्थिति) में प्रभावित करते हैं। फसलों में प्रमुख मृदा–जनित रोग *फ्यूजेरियम, पायथियम, राइजोक्टोनिया, वर्टिसिलियम, नेमेटोड्स* और रूट राट (*फाइटोफ्थोरा*) शामिल हैं। इन रोगों से फसल को बचाव के लिए बीजों को कवकनाशियों (2 ग्राम/किग्रा. बीज) से उचित उपचार करके बुवाई करना चाहिए।

5. हार्मोन और सूक्ष्मतत्वों का लेपन : हार्मोन और सूक्ष्मतत्वों का लेपन बीजों की बुवाई के दौरान किया जाता है। हार्मोन जैसे जीबरेलिक अम्ल और अन्य पोषक तत्वों का लेपन करने से बीजों का जमाव और शुरूआती वृद्धि तेजी से होता है और अधिक उपज मिलता है।

बीजोपचार के विभिन्न आसान तरीके

1. नमक का घोल : नमक का घोल (जिसे ब्रायन घोल भी कहते हैं) की सहायता से हल्के और रोग युक्त बीजों को अलग करके निकाल सकते हैं जिससे खेत में पौधों की वृद्धि एक समान होती है। इसके लिए एक बड़े बर्तन में नमक का 2 प्रतिशत का घोल तैयार करें और बुवाई वाले बीजों को इस घोल में डालकर हिलायें। नमक के घोल में हल्के और रोगयुक्त बीज ऊपर तैरने लगते हैं तथा अच्छे बीज, बर्तन के तली में नीचे बैठ जाते हैं। ऊपर तैरते हुए बीज को बाहर निकाल कर अलग रख दें तथा अच्छे बीजों को साफ पानी से धोकर छाया में सुखाकर फफूँदनाशक, कीटनाशक एवं जीवाणु कल्चर से उपचारित करके खेत में बुवाई करने से बीजों का जमाव और वृद्धि अच्छी होती है।

2. तापमान उपचार : जब बीजों को नमक के घोल से उपचारित करते हैं तो बाहरी तौर से रोगग्रसित बीज को ही अलग कर पाते हैं परन्तु कुछ रोगों के रोगकारक बीजों की भीतरी परत में उपस्थित रहते हैं जैसे गेहूँ का कंडूआ रोग, इससे रोग्रसित बीजों से रोगकारक फफूँद को मारने के लिए बीजों को उच्च तापमान से उपचारित करना चाहिए। इसके लिए मई–जून के महीने में जब तापमान 40 से 45° सेल्सियस के बीच होता है, तब बीजों को सीमेंट के पक्के फर्श पर खुले में सूखने के लिए बिछा दें और ऐसे ही 6–7 घंटे तक धूप में उपचारित होने दें, यह प्रक्रिया 4–5 दिनों तक करें। इससे बीज के अंदर के रोग कारक को खत्म करने में मदद मिलती है।

3. गर्म पानी का उपचार : बीजों में भ्रूण तथा भ्रूणकोष में उपस्थित रोगाणु को मारने के लिए तापमान उपचार की तरह ही गर्म पानी उपचार भी करते हैं। इसके लिए उबलते हुए पानी (100–110° से.) में बीजों को 3–5 मिनट के लिए रखते हैं। उसके बाद छाया में बीजों को सुखाकर तथा उचित रसायन से उपचारित करने के बाद बुवाई करते हैं। इस प्रकार उपचार करने से बीज को बाहरी और भीतरी दोनों तरह के रोगाणुओं से मुक्त कर सकते हैं।

4. रसायनिक दवाओं से उपचार : बीजों को रोगमुक्त बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के रसायनों का प्रयोग जरूरत और फसल के हिसाब से किया जाता है। बीजों में विभिन्न प्रकार का रसायनिक उपचार निम्नलिखित तरीके से करते हैं। इस विधि में बीजों के ऊपर हल्का पानी का छिड़काव करने के बाद उसमें उचित मात्रा में (प्रायः 2–2.5 ग्रा/किग्रा. बीज) जरूरत के हिसाब से रसायन मिलकर अच्छी तरह मिलाकर छाया में सुखाकर बुवाई करते है यह विधि निम्न उपचार में प्रयुक्त होती है।

1. मिट्टी में मौजूद कीट और दीमक से अंकुरित बीज को बचाने के लिए क्लोरोपाईरीफॉस 20 ई.सी. का बीजों पर छिड़काव करके अच्छी तरह मिलाकर बुवाई करते हैं।
2. बीज की सतह पर उपस्थित फफूंद का इलाज करने में रसायनों जैसे बीटावेक्स, बाविस्टिन, कॉपरसल्फेट, एग्रोसेन जी.एन. और सेरेरान पाउडर का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें एक किलो बीज के लिए इन रसायनों की 2 से 2.5 ग्राम मात्रा मिलाई जाती है।

5. जीवाणु कल्चर से उपचार : विभिन्न जीवाणु कल्चर से बीजोपचार कर पौधों के लिये मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाया जाता है। जीवाणु कल्चर के बीजोपचार से अच्छे परिणाम के लिये सही विधि का महत्वपूर्ण योगदान है। वाहक आधारित जीवाणु (200ग्राम) को गुड़ के 10 प्रतिशत घोल (एक लीटर पानी में 100 ग्राम गुड़) में मिलाया जाता है और इस घोल को बीजों की मात्रा पर छिड़ककर मिलाया जाता है। ताकि बीजों पर वाहक की परत बन जाये। इन बीजों को छाया में सुखाकर तुरन्त बुवाई करनी चाहिए। उपचारित बीजों को रासायनिक उर्वरकों तथा कृषि रसायनों के संपर्क से बचाना चाहिए। फसल में अगर

कीटनाशी, फफूंदनाशी और जीवाणु कल्चर का उपयोग बीजोपचार द्वारा करना हो तो सर्वप्रथम फफूंदनाशी के उपचार के बाद क्रमशः कीटनाशी व जीवाणु कल्चर का उपयोग करें। सामान्यतः उपयोग में आने वाले जीवाणु कल्चर निम्न है।

अ. राइजोबियम जीवाणु : इन जीवाणुओं का दलहनी फसलों के साथ प्राकृतिक सहजीवता का संबंध होता है। ये दलहनी फसलों की जड़ों में रहकर ग्रांथियां बनाते हैं जो पर्यावरण से नाइट्रोजन स्थिर करते हैं। इनके द्वारा नाइट्रोजन की स्थिर की गयी मात्रा जीवाणु विभेद, पौधों की किस्में, मृदा गुणों, वातावरण, सस्य क्रियाओं आदि पर निर्भर करती है। राइजोबियम–दलहन सहजीवता से 100–200 किलोग्राम नाइट्रोजन/हेक्टर प्रतिवर्ष स्थिर होती है। अलग–अलग दलहनी फसलों की जड़ों में राइजोबियम नामक जीवाणु की अलग–अलग प्रजाति होती है, इसलिए अलग–अलग जीवाणु कल्चर की जरूरत पड़ती है।

ब. ऐजोटोबेक्टर जीवाणु : ये जीवाणु गैर दलहनी फसलों जैसे गेहूँ, जौ, मक्का, ज्वार, बाजरा, आदि के लिये उपयुक्त है। इनके द्वारा 20–30 किलोग्राम नाइट्रोजन/हेक्टेयर तक स्थिर किया जा सकता है।

स. फास्फोरस विलेयकारी जीवाणु : ये जीवाणु मृदा में उपस्थित अविलेय, स्थिर तथा अप्राप्त फास्फोरस की विलेयता को बढ़ाकर उसे पौधों को उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं। इसका उपयोग लगभग सभी फसलों में हो सकता है।

6. अन्य बीज उपचार : बीजों को उपचारित करने के लिए कुछ देशी तरीके भी है जिनकी सहायता से बीजों को शुरूआती रोगों से बचा सकते हैं। इसके लिए देशी गाय या बैल का 1 किलो गोबर उसको 2–3 लीटर चूने के पानी में मिलाकर घोल तैयार कर ले, इस घोल में बीजों को भिगों कर 4–5 घंटे के लिए छोड़ दे उसके बाद बीजों को घोल में से निकल कर छाया में सुखाकर बुवाई की जा सकती है। इस पूरी प्रक्रिया को बीजों का संस्करित करना कहते हैं।

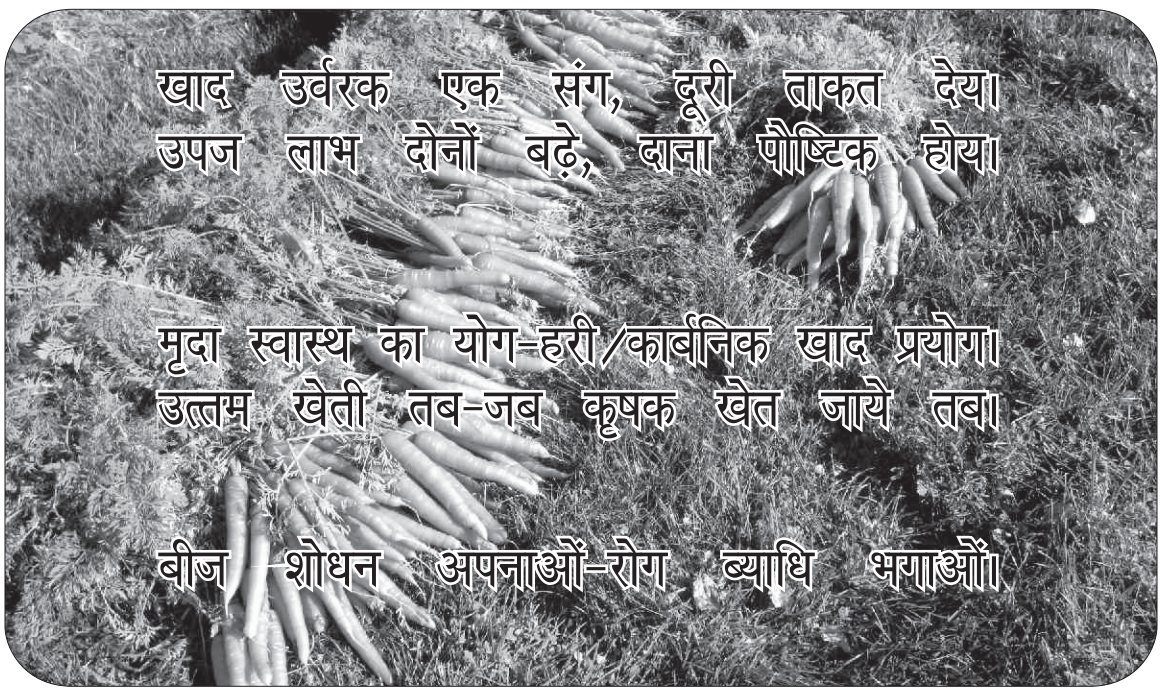

बीज की यांत्रिक टूट-फूट : कारण एवं निवारण

संजय कुमार सिंह

शुद्ध बीज में यदि किसी प्रकार की यांत्रिक टूट–फूट हो जाती है, तो उसकी सम्पूर्ण अंकुरण क्षमता नष्ट हो जाती है। यांत्रिक टूट–फूट फसल की कटाई से लेकर भंडारण तक किसी भी स्तर पर हो सकती है। यह टूट–फूट बीजों के टकराने, दबने, घिसने या पीटने से हो सकती है। अतः इस बात का ध्यान कटाई के समय रखना पड़ता है कि बीज में यांत्रिक टूट–फूट ना हो।

टूट-फूट के कारण :

फसल कटाई की मशीनें इतनी अधिक क्षमता से कार्य करती है कि उनमें जरा सा समायोजन गलत होने पर वे बीज को तोड़ने लगती है। गेहूँ की फसल को काटने वाली कम्बाइन जब खेत में चलती है, कही पर यदि बीज पर अधिक गति से चोट पहुँचती है या घिस रहा है, तो उसमें टूट–फूट की संभावना बनी रहती है। जमीन पर या लकड़ी, लोहे इत्यादि पर पीटकर अलग करने से भी टूट–फूट बढ़ती है। रोग ग्रस्त, कीटग्रस्त या पुराने बीज भी अपनी अंकुरण क्षमता खो बैठते हैं। गहाई के दौरान बेलन से बीज को पीटते हैं। यदि इस दौरान बेलन की गति तेज है या फिर उसके अवलत पृष्ठ (Cancave Surface) का आकार कम है, तो दाने दबकर चोट से टूट जाते हैं।

संसाधन के दौरान बीज–संवाहक भी बीज का टूट–फूट बढ़ाते हैं। बाजार में बहुत से बीज संवाहक मिलते हैं जिनकी डिजाइन ठीक नहीं होती है और उनमें छोटे–छोटे डोल बनाकर तथा गति बढ़ाकर अच्छी दक्षता लाई जाती है। ऐसे संवाहक अवश्य ही यांत्रिक टूट–फूट बढ़ाते हैं। उत्थापक (Elevator) से बीज नलिका के द्वारा धान्यकोष्ठ में, सफाई मशीन की धानी में या फिर बीज उपचार यंत्र में जाता है। यदि यह नलिका बहुत लम्बी है या वह बहुत तिरछी है, या बीज 2–3 मीटर की ऊँचाई से धान्यकोष्ठ में गिरती है, तो भी बीज की गति अधिक बढ़ जाने के कारण उसके टूटने का डर बना रहता है। बीजोपचार के बाद बीज का भंडारण किया जाता है। बीज बोरों में भरकर भंडार में भेजे जाते हैं। यदि श्रमिक एक स्थान से दूसरे स्थान पर जोर से उन्हें पटकते है या सिर से भी गिराते हैं तो भी बीज की टूट–फूट उनकी सतह घिसने के कारण भी बीच में टूट–फूट होती है। परिवहन के दौरान भी बीज के बोरों की बुरी तरह से ऊपर–नीचे फेंका जाता है जिससे बीज क्षतिग्रस्त हो ही जाता है।

यांत्रिक टूट-फूट के प्रभाव :

यांत्रिक टूट–फूट का प्रभाव बीज की अंकुरण क्षमता पर सीधा पड़ता है। बीज यांत्रिक चोट को सहन कर पाते हैं और चोट अधिक होने पर खराब हो जाते हैं। यदि ये पूरी तरह खराब होते हैं, तो अंकुरण के बाद पौधे मर जाते हैं या फिर अंकुरण बहुत ही अनियमित या कम होता है। इनका आंतरिक भाग क्षतिग्रस्त हो जाता है और बीज रोगी हो जाता है। टूटे–फूटे तथा कमजोर बीजों पर रोग का प्रभाव बहुत जल्दी होता है और वह क्षतिग्रस्त हो जाता है। बीज की रगड़ी हुई सतह भी कमजोर हो जाती है और रोग के जीवाणु उसे तोड़कर अंदर प्रवेश कर जाते हैं। क्षतिग्रस्त बीज कवकनाशी, कीटनाशी व घूमन रसायनों के उपचार को सहन कर सकते हैं जितना कि अच्छे बीज करते हैं। अतः भरपूर उपज में कमी रह जाती है।

यांत्रिक टूट-फूट से रक्षा के उपाय :

बीज की टूट–फूट की क्रिया फसल को आधुनिक मशीनों से काटने व गहाने से ही शुरू हो जाती है। बीज की अधिकतम टूट–फूट बेलन की गति से होती है क्योंकि उसके द्वारा उत्पन्न गतिज ऊर्जा बेलन की गति के वर्ग की सीधी समानुपाती होती है। जितनी अधिक गति होगी, उसके वर्ग के अनुसार ऊर्जा में भी वृद्धि होगी। कम्बाइन के बेलन की तेज गति कटाई वाले बीज की आर्द्रता पर भी निर्भर करती है। दोपहर को फसल काटने पर बेलन की गति सुबह व शाम की अपेक्षा अधिक हो सकती है, क्योंकि दोपहर के समय गर्मी के कारण फसल अधिक सूखी–सूखी रहती है और गहाई अधिक तेजी से की जाती है। बीज अधिक सूखने पर अधिक टूटते हैं और आर्द्र होने पर वे दब जाते हैं। अतः साधारणतः गहाई कार्य के लिए बीज की आर्द्रता उसके प्रकार के अनुसार अधिकतर 10 प्रतिशत से 16 प्रतिशत के बीच होनी चाहिए। बेलन के कटाई–यंत्र के बाहरी किनारे भी चिकने कर देना चाहिए या उन पर मजबूत रबड़ का आवरण चढ़ा सकते हैं जिससे बीजों की टूट–फूट को कम किया जा सकता है।

बीज की आर्द्रता संवाहक में होने वाली टूट–फूट पर प्रभाव डालती है। अधिक सूखे बीज (8 प्रतिशत से भी कम) इन संवाहकों में अधिक टूटते हैं। इसी प्रकार आर्द्रता का प्रभाव रेशा हटाने व बीज की सतह खुरचने की क्रियाओं में पड़ता है। अधिक सूखे बीज अधिक टूटते हैं और अधिक गीले बीज दबकर टूट जाते हैं। अतः इन मशीनों का प्रयोग करते समय बीज की आर्द्रता 14 से 16 प्रतिशत के बीच में रखनी चाहिए। साथ ही साथ बेलन की गति तथा अवकाश भी बीज की प्रकार, आर्द्रता तथा निर्माता के निदेशों के अनुसार ही रखना चाहिए।

धान्यकोष्ठों में या मशीन की घानी में गिरने पर बीजों को टूटने से बचाने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जाते हैं :

1. धान्यकोष्ठ में बीज गिरने की ऊँचाई 2 मीटर से कम ही रहे।
2. जहाँ तक संभव हो, वहाँ पर सर्पिल नाली (Spiral chute) का प्रयोग करना चाहिए।
3. अवमंदक रोधिका (Stepdown baffle) का प्रयोग करके भी बीज को टूट–फूट को कम किया जाता है। मुलायम बीजों के लिए रोधिकाओं पर मुलायम रबर या अन्य पदार्थ को लगाकर उनका प्रयोग करना चाहिए।
4. उत्थापकों की ऊँचाई अधिक होने पर बीज तेज गति पर पहुँच जाते हैं और टकराकर टूटते हैं। अतः उत्थापक साथ क्षैतिज पट्टों का प्रयोग करना चाहिए।
5. जहाँ तक संभव हो, बीज को क्षैतिज दिशा में ही प्रवाहित करना चाहिए।
6. बीज ले जाने वाले पाइपों में कम से कम घुमाव होना चाहिए क्योंकि तेज घुमावों पर बीज टकराकर टूटते हैं।
7. उचित आर्द्रता वाले बीज को ही मशीन में भेजना चाहिए।
8. निर्माता द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार ही प्रचालक को मशीन चलाना चाहिए। कभी–कभी संसाधक मशीन की गति बढ़ाकर अधिक से अधिक बीज संसाधित करना चाहते हैं। ऐसा करते समय वे इस टूट–फूट को भूल जाते हैं और अधिक हानि उठाते हैं और ग्राहक को भी हानि पहुचाते हैं।

जल संरक्षित करो : जल ही, हमारा आने वाला कल है।

पौधों की पहचान कैसे करें?

वी.सी. त्यागी, आर.वी. कुमार, सुनील कुमार, डी. देव, अमित कुमार, राहुल गजघाटे एवं मनीत राना

भारत में लगभग 17,500 से भी अधिक पौधों की प्रजातियाँ पायी जाती है। हमारे चारो ओर घास और अन्य पौधों की काफी किस्में पायी जाती है। आमतौर पर उनके बारे में पूरी जानकारी नहीं होती है किन्तु अगर हम उनके बारे में जान पाते या सही पहचान कर पाते तो हम उसका बेहतर उपयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिये अगर हम चारा हेतु उपयोगी वनस्पतियों की बात करें तो पायेंगे कि हमारे आसपास जो भी घास/ वनस्पति पायी जाती है, वह सभी पशुचारा के रूप में उपयोगी नहीं हो सकती है। क्योंकि उसमें से कुछ प्रजातियाँ नुकसान दायक या जहरीली भी हो सकती है। इसलिए अगर चारा उपयोगी वनस्पतियों की सही पहचान हो तो उससे पशुआहार एवं संरक्षण के लिए उचित निर्णय लिया जा सकता है। इसी तरह खरपतवार की सही पहचान होने पर उचित खरपतवारनाशक का उपयोग कर सकते हैं। फलस्वरूप कम लागत में खेती हो सकती है तथा उपज भी अधिक हो सकती है।

आमतौर पर हम पौधों की पहचान के लिए बड़े बुजुर्गो की मदद उनके स्थानीय नाम जानने के लिये लेते हैं। लेकिन कभी–कभी फूल विधि द्वारा पादप की सही पहचान नहीं हो पाती है या पहचान गलत होती है। इस स्थिति में किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि वो किसी भी पादप की जानकारी के लिए वनस्पति शास्त्री की ही मदद लें।

वनस्पति की पहचान कैसे होती है?

वनस्पति की पहचान वनस्पति शास्त्री द्वारा पौधे के विभिन्न भाग फल, फूल, पत्तियाँ, बीज की जानकारी के आधार पर की जाती है। पादप की सही पहचान के लिए सबसे महत्वपूर्ण अंग पुष्प है। पुष्प का तने पर आयोजन (पुष्पक्रम), पुष्पों की संख्या, तदपश्चात् पुष्पसूत्र की सहायता से पहचान की पुष्टि की जाती है। पुष्प–सूत्र विभिन्न पुष्प भागों (पुष्पकों) दलपुंज, पुंकेसर, जायांग, सहपत्र इत्यादि का प्रतीकात्मक और प्रतिरूप है। तथा यह विभिन्न पुष्प भागों के समरूपता, लैगिंकता और अंतः संबंधों के बारे में जानकारी भी प्रस्तुत करता है। इसके अलावा पादपों की पहचान नामित नमूनों, तस्वीरों, चित्रों या विवरण के साथ अज्ञात पौधे की तुलना करके किया जाता है। हॉलाकि पहचान की सबसे विश्वसनीय विधि–विशेषज्ञ द्वारा दी गई पुष्टि होती है। परन्तु इस विधि में विशेषज्ञ के कीमती समय की आवश्यकता होती है। इसके अलावा पादप की पहचान पादपालय, संग्रहालय में मौजूद हरबेरियम से मिलान करके भी किया जाता है।

हरबेरियम

यह सूखे पौधों के नमूने का एक संग्रह होता है, जिसे एक शीट (हरबेरियम शीट) पर चिपकाया गया हो तथा पादप वर्गीकरण की मानक प्रणाली का उपयोग कर वर्गीकृत किया गया हो। हरबेरियम बनाने की प्रक्रिया सर्वप्रथम इटली में लूका धनी तथा उनके छात्रों द्वारा की गई थी। यह पौधें के सभी अंगों को सूखे हालत की दशा में दर्शाता है। इस शीट पर एक पर्चा चिपकाया जाता है, जो कि पौधे के अवस्थिति, उत्पत्ति, स्थान, उपयोगिता आदि के बारे में बताता है। जो कि संग्राहक के द्वारा अंकित किया गया होता है।

हरबेरियम का महत्व : इसका वैज्ञानिक दृष्टि से काफी महत्व है

- यह वनस्पति वर्गीकरण, भौगोलिक वितरण एवं नामकरण अध्ययन के लिए बहुत आवश्यक है।
- यह पौधों के प्राकृतिक परिवर्तनशीलता और प्राकृतिक वितरण को समझने के लिए काफी मददगार होता है। यह समय के साथ वनस्पति में परिवर्तन का एक उल्लेख सुरक्षित रखता है।
- कुछ मामलों में पौधे एक क्षेत्र से विलुप्त हो जाते हैं, ऐसी दशा में पादप संग्रहालय में सुरक्षित नमूने ही एक मात्र सहारा होते हैं, जिसमें विलुप्त पादपों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।
- इसके अलावा ये दुर्लभ प्रजातियों की बीज का एक भंडार भी होते हैं।
- साथ ही विद्यार्थियों के लिए एक अध्ययन सामग्री होता है।

भारत के प्रमुख पादपालय

क्र.सं.	नाम	स्थान	नमूनों की संख्या
1	भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण	कोलकाता	7,20,00,000
2	वन अनुसंधान संस्थान	देहरादून	73,40,000
3	राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान	लखनऊ	7,91,500

भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान में चारा प्रजातियों का संग्रहालय

भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी (उ.प्र.) की स्थापना सन् 1962 में हुई थी। यह भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के प्रशासनिक नियत्रंण के तहत एक राष्ट्रीय संस्थान है, जो कि चारा फसलों के लिए महत्वपूर्ण बुनियादी तथा उपयोगिता के संदर्भ में अनुसंधान का कार्य करता है। इस संस्थान में लगभग 4000 से भी अधिक चारा फसलों तथा अन्य पादपों का एक संग्रहालय है तथा इन दिनों इन नमूनों का डिजिटलीकरण का कार्य हो रहा है। जिससे के इस संग्रहालय का लाभ सभी वैज्ञानिक, छात्र, किसान इत्यादि ले सकें।

हरबेरियम बनाने की प्रक्रिया

हरबेरियम बनाने के लिए आवश्यकता होती है एक क्षेत्र का मुआयना जहाँ से पादप का नमूना लिया जा सके। पूरा पादप जड़ सहित (हो सके तो पुष्पन की स्थिति में) एकत्र किया जाता है। नमूने के बारे में जगह, विशेष चरित्र (पुष्प का रंग, महक, पत्तियाँ इत्यादि) से संबंधित जानकारी एक पुस्तिका में लिख लेना होता है। पादप को मैदान क्षेत्र से लाने के बाद ब्लोटिंग पेपर/अखबार में रखकर सही तरीके से यदि नमूना बड़ा है तो 'L', 'V' या 'W' के आकार में किसी वजनदार वस्तु से 24–72 घंटों के लिए अच्छी तरह से सूखने के लिए रख देना चाहिए। अच्छी तरह से दबाए गये और सूखे नमूनों को गोंद/फैवीकोल की मदद से हरबेरियम शीट (12×18) पर चिपकाया जाता है। कुछ संग्रहालयों में सुई धागे की सहायता से नमूनों को शीट पर बॉधा भी जाता है। नमूनों को शीट पर स्थितिकरण करने के बाद, एक किनारे पर एक पर्चा चिपकाया जाता है। जोकि उस नमूने का वैज्ञानिक नाम स्थान, कुल, वंश, उपयोगिता इत्यादि की जानकारी खिल देते हैं। उचित रूप से चिपकाये गये तथा सही जानकारी संकलित कर इन नमूनों का वर्गीकरण, वर्गीकृत की मान्यता प्राप्त प्रणाली (अर्थात बैथंम और हूकर या एंगलर और प्रेंटल इत्यादि) द्वारा कर अलमारियों में व्यवस्थित ढ़ंग से सुरक्षित रख दिया जाता है।

हरबेरियम का रखरखाव

भंडारण के बाद नमूने बीटल, फफूँद, कीट आदि द्वारा नष्ट हो सकते हैं। इस समस्या को उपयुक्त कीटनाशकों के उपयोग से दूर किया जा सकता है। डी.डी.टी, कार्बन टैट्रक्लोराइड, एल्कोहल आदि द्वारा नमूनों पर छिड़काव किया जा सकता है। नेप्थलीन की गोली को भी विकर्शक के रूप में उपयोग किया जाता है।

किसान भाईयों के लिए सुझाव

किसान भाईयों को सुझाव दिया जाता है कि वो जब कभी भी किसी ऐसे संस्थान में जाए जहाँ पादपालय मौजूद हो तो उसको अवश्य देखें। चारा फसलों की जानकारी के लिए भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी से संपर्क करें अथवा इसकी वेबसाइट WWW.igfri.res.in पर उपलब्ध चारा फसलों के बारे में जानकारी ले सकते हैं अथवा फोन से 0510–2730666, 0510–2730158, 0510–2730385 पर संपर्क कर सकते हैं साथ ही जब कभी इस संस्थान में आए तो यहाँ का पादपालय अवश्य ही देखें।

भारतीय भाषाएं नदियाँ हैं और हिन्दी महानदी।

हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है।

हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए।

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि हिन्दी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

जैसे तिनका हवा का रूख बताता है वैसे ही मामूली घटनाएं भी मनुष्य के हृदय की वृत्ति को बताती हैं।

जो पुरूष पवित्र होकर जगत् के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर देता है, वह चक्रवर्ती से भी अधिक सत्ता भोगता है।

गलती स्वीकार कर लेना झाड़ू बुहारने के समान है, जिससे गंदगी का नामो-निशान तक नहीं रहता

– महात्मा गाँधी

शुष्क क्षेत्र में रोग ग्रसित खेजड़ी का जीर्णोद्धार

दीपेश, लाधूराम, ऋतु मावर एवं सीता राम कांटवा

खेजड़ी वृक्ष थार मरूस्थल की पारिस्थितिकी का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो भारत के उत्तर–पश्चिमी सीमा पर विस्तृत है। स्थानीय लोगों के लिए बहुउपयोगी होने के कारण इसे थार के कल्पवृक्ष की भी संज्ञा दी जाती है। इसके अन्य नामों में शमी, (संस्कृत), धफ़ (संयुक्त अरब अमीरात), जांटी (राजस्थानी), खेजड़ी (स्थानीय मारवाड़), जंड (पंजाब), कांडी (सिंध), वठिण (तमिल), सुमरी (गुजरात) आदि प्रचलित है। दलहन परिवार से जुड़े इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम *'प्रोसोपिस सिनेरेरिया'* है।

पश्चिमी राजस्थान में खेजड़ी का वृक्ष बहुतायात से पाया जाता है और मरूस्थलीय जीवन में यह वृक्ष एक जीवन रेखा का कार्य करता है। पारिस्थितिकी के महत्वपूर्ण घटक के साथ–साथ खेजड़ी सामाजिक तथा धार्मिक महत्ता का भी अभिन्न अंग है। प्रथम ऐतिहासिक चिपकों आन्दोलन राजस्थान के खेजड़ली गाँव में अमृता देवी विश्नोई द्वारा खेजड़ी वृक्ष के लिए ही किया गया था। सन् 1760 में मारवाड़ शासक के आदेश पर कटते खेजड़ी के वृक्षों को बचाने के लिए अपनी तीन पुत्रियों सहित अमृता देवी ने बलिदान दिया। इस क्रम में 363 लोग शहीद हो गए और खेजड़ी वृक्ष विश्व के प्रथम पर्यावरण आन्दोलन के रूप में अमर हो गया। राजस्थानी साहित्य में भी खेजड़ी को महिमा मंडित किया जाता रहा है। राजस्थानी कवि कन्हैयालाल सेठिया की प्रसिद्ध कविता 'मीझंर' खेजड़ी के महत्व तथा उपयोगिता को दर्शाती है। शमी वृक्ष की लकड़ी हवन सामग्री के लिए भी महत्वपूर्ण होती है। खेजड़ी वृक्ष की उपयोगिता पराकाष्ठा के कारण ही सन् 1983 में इसे राजस्थान का राज्य वृक्ष घोषित किया गया है।

खेजड़ी वृक्ष किसानों के लिए वरदान

किसानों का प्रत्यक्ष व्यवहार कृषि एवं सम्बन्धित फसल प्रजातियों से होता है, परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से खेत में लगे पेड़ आदि भी अत्यधिक लाभदायक होते है, इनमें राजस्थानी कृषकों हेतु खेजड़ी का विशेष महत्व है। खेत में खेजड़ी वृक्ष का होना भूमि की उपजाऊ शक्ति का द्योतक है। इस वृक्ष का प्रत्येक भाग किसी न किसी रूप में मरूस्थलीय प्राणियों के लिए उपयोगी व जीवनदायी है। सूखे व अकाल जैसी विपरीत परिस्थितियों में भी सफलता पूर्वक पल्लवित होकर शुष्क परिस्थितियों में मरूक्षेत्र के जन–जीवन की रक्षा करता है। सन् 1899 में दुर्भिक्ष अकाल जिसे 'छप्पनियां त्रिकाल' कहते है, उस समय यह वृक्ष सर्वाथ सिद्ध हो चुका है। खेजड़ी एक उत्तम पशु आहार (चारा) के रूप में उपयोगी है, खेजड़ी की पत्तियाँ (लूंग/लूम), पशुओं के लिए एक अति महत्वपूर्ण पौष्टिक आहार है तथा वे इसे बहुत ही चाव से खाते है। खेजड़ी का फल एक फली होता है जिसे सांगरी कहते है। सांगरी (फली) बहुत पौष्टिक व स्वादिष्ट होती है। खेजड़ी एक फलीदार दलहन है, जो राइजोबियम की सहायता से कृषि भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं। खेजड़ी की सांगरी (पूर्ण पकी) में औसतन 8–15 प्रतिशत प्रोटीन, 40–50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 8–15 प्रतिशत शर्करा, 8–12 प्रतिशत रेशा, 2–3 प्रतिशत वसा, 0.4–0.5 प्रतिशत कैल्शियम, 0.2–0.3 प्रतिशत लौह तत्व तथा अन्य सूक्ष्म तत्व पाये जाते हैं। जो मानव तथा दुधारू पशुओं के लिए अत्यन्त गुणकारी है।

खेजड़ी एक चारा स्त्रौत

राजस्थान के मरूस्थलीय स्थानों पर शुष्क जलवायु के कारण मरूद्भिद पादपों की बहुतायत है। जिनमें पत्तियाँ

काँटो में रूपान्तरित अथवा अनुपस्थित होती है, जैसे–कैर, कैक्टस, डण्डाथोर आदि। इन परिस्थितियों में खेजड़ी की पत्तियों का चारे के रूप में महत्व बढ़ जाता है, क्योंकि वृक्ष की शारीरिकी और कायिकी इसे वर्ष के अधिकतम शुष्क महिनों मई–जून में भी हरा–भरा बनाए रखती है जो उस विकट समय में पशुधन की आहार समस्या का मुख्य समाधान होता है। चारे के लिए खेजड़ी वृक्ष की छंटाई की जाती है। जिससे पतझड़ से पहले लूंग की अधिकतम मात्रा किसान द्वारा प्राप्त कर ली जाती है। लूंग की सबसे बड़ी विशेषता इसका तत्काल उपयोग के साथ–साथ दीर्घकालीन उपयोग क्षमता है। किसान खेजड़ी की लूम को सुखाकर भण्डारित कर सकता है जो पशु–आहार के रूप में प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट्स और महत्वपूर्ण सूक्ष्म तत्वों का अच्छा स्त्रोत सिद्ध होता है। दुधारू पशुओं के लिए विशेष उपयोगी यह लूम दुध की मात्रा बढ़ाने के साथ उसे पौष्टिक भी बनाता है। खेजड़ी का सुखा लूम पशुओं में पाचन एवं अन्य आहारनाल समस्याओं का शोधक तथा सुपाच्य है। खेजड़ी का पेड़ अप्रत्यक्ष रूप से अन्य फसलों तथा चरागाहों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। खेजड़ी के छाया क्षेत्र में उगने वाली अन्य पौष्टिक चारा–घास शुष्क परिस्थितियों से बच कर अच्छी तरह वृद्धि करती है जो एक विकल्प चारे का माध्यम बनती है। साथ ही चरागाहों में लगे खेजड़ी के वृक्ष पशुओं के लिए चरते समय प्राकृतिक आरामगाह के रूप में भी उपयोगी सिद्ध होते हैं।

गेनोडर्माः खेजड़ी वृक्ष पर गहराया संकट

विगत कुछ दशकों से राजस्थान के इस अमूल्य धरोहर वृक्ष पर विकट संकट के बादल मंडरा रहे है। गेनोडर्मा नामक एक कवक खेजड़ी वृक्षों में संक्रमण फैला कर इसकी संख्या को तेजी से कम कर रहा है। किसानों के खेतों में लगे वृक्ष देखते ही देखते सूख कर कालकवलित होते जा रहे है। पर्यावरण के साथ–साथ कृषि तथा पशु चारे के स्त्रौत पर अपूरणीय क्षति की स्थिति उभर रही है। गेनोडर्मा अनेक वृक्षों में संक्रमण उत्पन्न करता है जिनमें थार मरूस्थलीय क्षेत्रों में खेजड़ी प्रमुख है। गेनोडर्मा का संक्रमण जड़ों के आपसी सम्पर्क से भूमिगत रूप से फैलता है। इसलिए एक संक्रमित वृक्ष के आसपास के वृक्षों में भी यह संक्रमण शीघ्र परिसारित हो जाता है। यद्यपि इस रोग का संक्रमण जड़ो से होता है परन्तु प्रारम्भिक अवस्था में वृक्ष की हरितिमा प्रभावित होती है। पेड़ की पत्तियाँ झड़ जाती है जिससे वृक्ष का पर्ण घनत्व कम हो जाता है जो सीधे रूप में चारा (लूंग) उत्पादन में कमी करता है। रोग सघनता के अनुसार रोग स्तर 1 पर 25 प्रतिशत, 2 पर 50 प्रतिशत तथा 3 स्तर पर लगभग 75–90 प्रतिशत तक लूंग उत्पादन में कमी दर्ज की गई है, उपलब्ध लूंग (चारा) में कम पर्णहरित, कम प्रोटीन तथा पौषक तत्वों में कमी भी अंकित की गई है। गेनोडर्मा के साथ–साथ जड़ छेदक कीट '*अकेन्थोफोरस सिरेटीकॉर्निस* भी जड़ों को जख्मी करता है जो गेनोडर्मा संक्रमण को और आसान बना देता है। संक्रामक गेनोर्डमा खेजड़ी वृक्ष के संवहनपूल क्षेत्र में वृद्धि कर जाइलम तथा फ्लोएम को अवरूद्ध कर देता है। जिससे जल तथा पोषक पदार्थों का परिवहन बाधित होता है और रोगग्रस्त पौधा धीरे–धीरे पोषण और जल की कमी और संक्रमण के प्रभाव से कमजोर होकर मर जाता है। इस प्रकार किसानों के खेत से उनके पशुओं के चारे का महत्वपूर्ण स्त्रोत विलुप्त होने की स्थिति में आ गया है।

खेजड़ी वृक्ष का सुरक्षा चक्र : जैव नियंत्रण

गेनोडर्मा रोग से ग्रसित खेजड़ी वृक्षों को बचानें और अन्य वृक्षों में इसके संक्रमण को रोकने के सन्दर्भ में अनेक शोध हुए है। परन्तु जैव नियंत्रक ओर अवशिष्ट आधारित उर्वरकों की उपचार विधि एक कारगर प्राकृतिक तकनीक के रूप में विकसित की गई है। *ट्राइकोडर्मा* वंश के जैव नियंत्रक विदेशी बबूल अवशिष्ट आधारित उर्वरक, प्याज अवशिष्ट तथा गोबर आदि के समेकित उपचार विधि द्वारा गेनोडर्मा रोग का

प्रभावकारी नियंत्रण सिद्ध है। इस उपचार से उपस्थित गेनोडर्मा को नियंत्रित करने के साथ–साथ द्वितीयक संक्रमण और अन्य वृक्षों में उपस्थित गेनोडर्मा के संक्रमण को भी नियंत्रित किया जा सकता है। यद्यपि यह विधि जल की प्रचुर मात्रा के साथ सम्पूर्ण जड़ क्षेत्र में फैल कर प्रभावी उपचार में थोड़ा समय लेती है परन्तु एक बार इसका उपचार आरम्भ होने पर लम्बे समय तक खेजड़ी वृक्ष को एक प्रकार के सुरक्षा चक्र में लिया जा सकता है। उपचार विधि का प्रभाव खेजड़ी वृक्ष के पुनः हरा होने तथा चारा (लूंग) उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि के रूप में परिणित तथा प्रदर्शित होता है।

उपसंहार :

वर्तमान परिदृश्य में खेजड़ी के घटते वृक्षों को बचाने तथा खेतों और चरागाहों की पारिस्थितिकी को संतुलित रखने हेतु गेनोडर्मा जैसे पादप रोग कवकों का नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक है। जैव नियंत्रकों के प्रभावकारी उपयोग और समन्वित उपचार प्रक्रिया द्वारा राज्य की इस धरोहर को सुरक्षित रखा जा सकता है तथा पशुओं के चरागाहों को मरूभूमि में भी असीमित भण्डार उत्पादक क्षेत्रों के रूप में भविष्यान्वित किया जा सकता है।

बरसीम के हरे चारे एवं बीज उत्पादन हेतु उन्नत कृषि प्रबंधन क्रियाएं

तेजवीर सिंह, सीता राम कांटवा, ए. राधाकृष्णा, सेवा नायक डी., संजय कुमार एवं मंजुनाथ एन.

बरसीम एक उष्णीय एवं उपोष्णीय देशों जैसे भारत, पाकिस्तान एवं मिस्त्र आदि में शरद (रबी) के मौसम में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण चारे की फसल है। यह एक बहुकटाई (4–8) चारा फसल है जिससे लम्बे समय (नवम्बर–मई) तक पौष्टिक (20–24 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन) एवं पाचनशील चारा प्राप्त होता है।

जलवायु : बरसीम की उचित वृद्धि तथा विकास के लिये सूखी एवं ठण्डी जलवायु सर्वोत्तम मानी जाती है। इसकी अच्छी बढ़वार और उपज के लिये 18 से 25° सेंटीग्रेट तापमान उपयुक्त होता है।

मृदाः बरसीम की खेती के लिये जल निकास युक्त बलुई दोमट मिट्टी जिसमें कैल्शियम, फास्फोरस व कार्बनिक पदार्थ प्रचुर मात्रा में हो सर्वोत्तम मानी जाती है। यदि बरसीम की खेती कृषि वानिकी पद्धति से पेड़ों की पंक्तियों के बीच में करनी है तो, उस मृदा में फास्फोरस की उपयुक्त मात्रा अवश्य होनी चाहिये। बरसीम एक क्षारीय–लवणीय सहिष्णु फसल है इसे 4.9 से 7.9 पी.एच. मान वाली भूमियों में उगाया जा सकता है। बरसीम के बीज का आकार बहुत छोटा होता है, अतः अच्छे अंकुरण के लिये खेत की मिट्टी को बहुत अच्छी तरह से जुताई करके महीन कर लेना चाहिये।

उन्नतशील प्रजातियाँ : विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों एवं अनुसंधान संस्थानों द्वारा विकसित बरसीम की उन्नतशील प्रजातियाँ क्षेत्रानुसार निम्नलिखित हैं

किस्म का नाम	क्षेत्र के लिये अनुमोदित	चारे की उपज टन/हे.
वरदान, मेसकावी	सम्पूर्ण बरसीम उत्पादक क्षेत्र	80–110
बी. एल.–1 एवं बी. एल.–10	पंजाब, हिमाचल प्रदेश एवं जम्मू कश्मीर	80–100
बी. एल.–2 एवं बी. एल.–180	पहाड़ी एवं सम–शीतोष्ण क्षेत्र	80–105
बी. एल.–22	पहाड़ी, सम–शीतोष्ण एवं उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र	80–115
जे. बी.–1, जे. बी.–2 एवं जे. बी.–3	मध्य भारत	70–95
यू. पी. बी.–110	दक्षिणी भारत	55–70
बी. बी.–3	उत्तरी पूर्वी एवं पूर्वी भारत	50–55

बुवाई का समय, बीज दर एवं बीजोपचार :

बरसीम के अच्छे उत्पादन के लिये बुवाई समय से करनी आवश्यक है। इसकी बुवाई अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक अवश्य कर देनी चाहिये। समय से बुवाई के लिये 25 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर से पर्याप्त होता है, परन्तु जल्दी अथवा देरी से बुवाई करने के लिये 35 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिये।

यदि बरसीम की बुवाई किसी खेत में पहली बार की जा रही हो तो इसके बीज को राइजोबियम कल्चर से

उपचारित करना अति आवश्यक होता है। बीज के उपचार के लिये 50 ग्राम गुड़ को 1 लीटर पानी में घोलकर उसमें एक पैकेट राइजोबियम कल्चर (250 ग्राम) को अच्छी प्रकार से मिला लें। इस प्रकार तैयार मिश्रण को 10 किलोग्राम बीज के ऊपर छिड़क कर हल्के हाथों से मिलाऐं ताकि बीज के ऊपर एक हल्की सी परत जम जाये। इसके बाद बीज को 3–4 घण्टे तक छाया में सूखने के लिये छोड़ दें और फिर बीज को बुवाई के लिये प्रयोग करें।

बुवाई की विधिः

बरसीम की बुवाई मुख्यतः दो विधियों शुष्क व भीगी विधि से की जाती है। पहली विधि में सूखे खेत में ही बुवाई की जाती है परन्तु इस विधि से बुवाई करने से अंकुरण प्रतिशत काफी कम हो पाता है। भीगी विधि से बुवाई करने के लिये खेत में उपयुक्त आकार की क्यारियाँ बना कर उनमें 5–6 सेंटीमीटर की ऊँचाई तक पानी भर दिया जाता है और फिर बीज को छिटकवाँ विधि से बो दिया जाता है। बरसीम के खेत से जल रिसाव रोकने के लिये बुवाई से पहले पडलिंग (गोंद) अवश्य कर लेनी चाहिये। बुवाई से लगभग 5–6 दिनों के बाद अंकुरण अच्छी तरह से हो जाये तब एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिये। इसलिये यह बुवाई अच्छी मानी जाती है। दूसरी विधि से बुवाई करने से अंकुरण प्रतिशत बढ़ जाता है जिससे उपज पर सीधा असर पड़ता है।

खाद एवं उर्वरक : बरसीम एक दलहनी फसल है। अतः इसे अधिक मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इसके लिये 10–15 टन गोबर की अच्छी तरह सड़ी हुई खाद अथवा कम्पोस्ट खाद इतनी ही मात्रा में बुवाई से लगभग 25–30 दिन पहले खेत में डालकर भली–भाँति मिला देना चाहिये। इसके अतिरिक्त 20 किलोग्राम नाइट्रोजन तथा 60 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से उर्वरकों द्वारा देना चाहिये। नाइट्रोजन व फास्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा खेत में बुवाई के समय ही देनी चाहिये।

सिंचाई : बरसीम की फसल में सिंचाई की संख्या, पानी की मात्रा, कटाई की संख्या, प्रवृत्ति (एकल फसल या मिश्रित फसल) आदि पर निर्भर करती है। अधिक चारा उत्पादन के लिये अधिक पानी की आवश्यकता होती है। पहली दो सिंचाई 4–6 सेंटीमीटर गहरी 5–6 दिनों के अंतराल पर करनी चाहिये। इसके बाद फरवरी के आखिर तक 20–20 दिनों के अन्तराल पर करते रहना चाहिये। तापमान के बढ़ने पर अथवा मार्च से मई तक 8–10 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिये।

रोग एवं कीट प्रबंधन :

जड़ गलनः जड़ गलन रोग बरसीम फसल में मार्च से तापमान बढ़ने के साथ प्रारम्भ हो जाता है। इस रोग के कारण बरसीम का सम्पूर्ण पौधा सूख जाता है। इसके उपचार के लिए बरसीम को बोने से पहले बीज को थीरम, बाविस्टिन या कार्बोफ्यूरान 2.5 ग्रा./किलो. से उपचारित कर लेना चाहिए, खेत में अधिक सिंचाई तथा पानी भराव होना चाहिए।

तना गलनः तना गलन रोग बरसीम में कम तापमान में आता है। इसके कारण बरसीम के पौधे का तना गल जाता है। रोग की रोकथाम के लिए फसल की कटाई कर लेनी चाहिए जिससे सूर्य की किरणे सीधे भूमि और कटी फसल के तनों पर पड़े। फसल पर बाविस्टिन, डेरोसल, एग्रोजिम 400 ग्राम को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करना चाहिए।

चने की सुंडी, फली छेदकः मार्च–अप्रैल माह से चने की सुंडी, फली छेदक आदि से फसल को हानि हो सकती है। बीज के लिए छोड़ी गई फसल को अधिक हानि होती है. इनकी रोकथाम के लिए फसल पर 500 मिली. थायोडान को 80–100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करना चाहिए.

खरपतवार नियन्त्रण : बरसीम की फसल का मुख्य खरपतवार कासनी है। बरसीम के बीजों को बोने से पहले 10 प्रतिशत नमक के घोल में डुबो कर 2–3 मिनट के लिये छोड़ देते हैं। ऐसा करने से कासनी के बीज घोल की सतह पर तैरने लगते हैं तथा बरसीम के बीज नीचे बैठ जाते हैं। इन सभी बीजों को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिये।

कटाई प्रबन्धन एंव उपज : बरसीम की प्रथम कटाई बुवाई के 40–45 दिन बाद (पौधों की ऊँचाई 40–45 सेमी. हो जाये) करनी चाहिये। प्रथम कटाई के बाद प्रत्येक कटाई लगभग 25–30 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिये। अच्छे चारे की उपज के लिये तथा बार–बार कटाई के लिये बरसीम को भूमि की सतह से लगभग 5–7 सेमी. की ऊँचाई से काटना उपयुक्त रहता है। बरसीम चारे के उद्देश्य से उगाया जाये तो प्रति हेक्टेयर 80–120 टन हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

बीज उत्पादन : बरसीम की फसल में बीज उत्पादन के लिए चारे की कटाई फरवरी के अंत तक बंद कर देना चाहिए। जिस खेत में बरसीम का बीज उत्पादन करना है उसका अन्य बरसीम खेतों के 100 मीटर का अंतरण आवश्यक है। बरसीम के बीज उत्पादन के लिए यह नितांत आवश्यक है कि बरसीम के बीज में कासनी के बीजों की मिलावट बिलकुल न हो। इसके लिए बरसीम के खेत में रोगिंग करके कासनी खरपतवार को निकल देना चाहिए तथा साथ ही साथ यदि कोई पौधा बरसीम की दूसरी प्रजाति का हो उसे भी निकाल देना चाहिए। बीज के बनने और पकने के दौरान फसल की सिंचाई करनी आवश्यक है। अधिक बीज उत्पादन के लिए पकी फसल की कटाई उचित समय पर करना अति आवश्यक है। फसल के अधिक पक जाने पर बीज खेत में गिर जाते है तथा कम पकी फसल के बीज अपरिपक्व रह जाता है जिससे उसका अंकुरण प्रतिशत कम हो जाता है। फूल के नीचे का डंठल जब पीला पड़ जाये तथा दाना कठोर हो जाये तब फसल की कटाई करके एक स्थान पर इकट्ठा कर लेना चाहिए। फसल के पूर्णतया सूखने पर थ्रेसर से थ्रेसिंग कर लेनी चाहिए। अच्छे प्रबंधन से उगाई गयी बरसीम की फसल में 4–5 कुंतल/हेक्टेयर बीज उत्पादन और 40–50 टन हरा चारा आसानी से प्राप्त हो जाता है।

बरसीम की खेती

उद्यान–चरागाह पद्धति

अमित कुमार सिंह, मनीत राना, राहुल गजघाटे, संजय कुमार, वी.सी. त्यागी, पुष्पेन्द्र कोली एवं डी. देव

भारत में पशुधन की संख्या 450 मिलियन से भी ज्यादा है जो विश्व में पशुधन संख्या का प्रतिशत 15 प्रतिशत है। यह पशुधन विश्व के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के मात्र 2.4 प्रतिशत जमीन पर उपस्थित है। पशुधन उत्पादन शुष्क एवं पहाड़ी क्षेत्रों में भ्रमणकारी लोगों के जीवनयापन का प्रमुख सहारा रहा है। यद्यपि पशुधन हमारे देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। लेकिन इनके आहार में हरे एवं सूखे चारे की अत्यधिक कमी है। यह कमी चारे की फसलों के कम क्षेत्रफल में कम उत्पादन की वजह से भी है।

मनुष्य के संपूर्ण विकास के लिए कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा के अतिरिक्त विटामिन एवं खनिज लवणों की भी आवश्यकता होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रतिदिन एक व्यक्ति को 115–175 ग्राम फल खाना चाहिए, किन्तु भारत में यह उपलब्ध 50 ग्राम के आसपास है। फल विटामिन एवं खनिज लवणों के प्रमुख स्त्रोत है। फलों के उद्यान इस पूर्ति में सहायक होगें।

भारत में मृदा का अपरदन एक प्रमुख समस्या बन गयी है। मृदा का कटाव भौतिक कारकों की वजह से हो रहा है। चम्बल के बीहड़ मिट्टी के अनुत्क्रमणीय कटाव को दर्शाते हैं। इसके अतिरिक्त मृदा प्रदूषण रासायनिक एवं जैविक कारकों की वजह से भी हो रहा है। उपरोक्त विवरण समस्त पारिस्थितिकी तंत्र में बढ़ रही एक समस्या को दर्शाता है। ऐसी समस्या जो मनुष्य, पशुधन एवं प्राकृतिक संसाधन (मिट्टी) पर असर डाल रही है। इन तीनों को एक साथ समाधान करने के लिए उद्यान–चरागाह पद्धति महत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

उद्यान–चरागाह पद्धति एवं इसके लाभ :

उद्यान–चरागाह पद्धति अर्थात एक ही भूमि पर एक समय में फलदार वृक्षों और बहुवर्षीय चारा फसलों को एक साथ उगाया जाना। फलदार वृक्ष विटामिन एवं खनिज लवणयुक्त फल प्रदान करते हैं तो दूसरी तरफ मृदा के कटाव को रोकने के लिए इनकी गहरी जड़े सहायक होती है साथ ही साथ पौष्टिक अंतः फसलों से पशुओं के लिए चारे की आपूर्ति भी हो जाती है।

उद्यान–चरागाह पद्धति में फलदार पेड़ों के मध्य पशुधन के लिए भोजन का भी प्रबंधन हो जाता है। छोटे किसानों के लिए यह सूखे के दौरान पशुधन के निर्वाहन की भी व्यवस्था उपलब्ध कराता है। विभिन्न प्रकार के उद्यान–चरागाह पद्धतियाँ विकसित की गयी है जिनमें से बेल, आंवला, इमली, अमरूद आधारित उद्यान–चरागाह प्रमुख है।

छोटे और सीमांत किसानों के लिए आजीविका का प्राथमिक स्त्रोत पशुधन है। ये किसान सिंचाई के लिए मूल रूप से वर्षा पर निर्भर है। ये किसान अपने पशुधन के निर्वाहन के लिए मूल रूप से सामुदायिक जमीनों पर निर्भर रहते थे लेकिन बड़े किसानों द्वारा अपनाये गये मशीनीकरण ने इस संभावना को क्षीण कर दिया है। अब इन किसानों के लिए भोजन एवं चारा असुरक्षा की भावना/स्थिति उत्पन्न ही चुकी है।

बढ़ते हुए सूखे की आवृत्ति ने किसानों की समस्या को और भी बढ़ा दिया है। इस परिस्थिति में यदि फलों के पेड़ की प्रजातियों को बहुवर्षीय घास के साथ लगाया जाता है तो मृदा के क्षरण को काबू में ला सकता है। ऑवला और बेर के साथ अंजन घास, धामन घास, और सेवन को उद्यान–चरागाह व्यवस्था में उपयोग में लाया जा रहा है। उद्यान–चरागाह पद्धति एवं मृदा–मृदा का क्षय जो मिट्टी की उत्पादकता में गिरावट का कारण है,

भारत में हाल के वर्षों में बहुत तेज हो गया है। देश की बढ़ती आबादी का बढ़ती हुई भोजन की मॉग के कारण सीमांत इलाकों को भी कृषि योग्य बनाया जा रहा है। गरीबी और प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता में गिरावट के कारण जंगलों को काटकर कृषि के लिए उपयोग में लाया जा रहा है। उद्यान–चरागाह पद्धति का प्रभाव मृदा पर निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है।

1. मृदा : विभिन्न शोधों में यह पाया गया है कि उद्यान–चरागाह व्यवस्था में सतही मृदा (0–15 सेमी.) में अम्लीयता का स्तर 6–7.33 के मध्य पाया गया है जो सूक्ष्मजीवों को व्यापक वृद्धि को आधार देता है। ये सूक्ष्मजीव वायुमंडलीय नत्रजन के स्थिरीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

2. सूक्ष्मजीव वृद्धि : मृदा में पाये जाने वाले एंजाइम मिट्टी के स्वास्थ्य और पर्यावरण को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। मिट्टी में एंजाइम की उपस्थिति मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों की प्रत्यक्ष प्रमाण है। फलदार पेड़ों के सतह पर पड़ा कार्बनिक लिटर पोषक तत्वों की एक प्रणाली के रूप में कार्य करता है। यह जिससे विघटित होता है इसमें सूक्ष्मजीवों एवं एंजाइम की प्रमुख भूमिका होती है।

3. मृदा कार्बनिक कार्बन : इस पद्धति में सतही मृदा में कार्बनिक कार्बन के स्थिरीकरण की अपार संभावनाए है। वर्तमान शोधों में ऐसी प्रणालियों की संभावनाए तलाश की जा रही है जो कार्बनिक कार्बन के दीर्घकालिक भंडारण में सहायक हो। उद्यान–चरागाह व्यवस्था इस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। इन प्रणालियों के अंतर्गत आने वाली मिट्टी में दीर्घकालिक शोध के बाद कार्बनिक कार्बन की मात्रा 0.73 प्रतिशत तक पायी गयी है। आमतौर पर उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में स्थित भारत में मिट्टी में कार्बनिक कार्बन का प्रतिशत काफी कम रहता है। इस परिस्थिति में यह प्रतिशत काफी संतोषजनक है।

4. मृदा नत्रजन : विभिन्न उद्यान–चरागाह पद्धतियों को मिट्टी में उपलब्ध नत्रजन का स्तर बंजर भूमि की तुलना में अधिक पाया जाता है। कार्बनिक लिटर विघटन और वायुमंडलीय नत्रजन स्थिरीकरण की वजह से मिट्टी में उपलब्ध नत्रजन की मात्रा 200–250 कि. ग्रा/हेक्टेयर तक पायी गयी है।

5. मृदा में उपलब्ध फॉस्फोरस की मात्रा : विभिन्न उद्यान–चरागाह पद्धतियों में उपलब्ध फॉस्फोरस 18–38 किग्रा./हेक्टेयर तक पायी गयी है। फॉस्फोरस की उपलब्धता बहुवर्षीय घासों एवं पेड़ों के वृद्धि हेतु बहुत ही आवश्यक है जो इस पद्धति से स्वयं में पूर्ति हो जाती है।

6. मृदा में उपलब्ध पोटाश : उद्यान–चरागाह पद्धतियों की भूमियों में उपलब्ध पोटाश की मात्रा 227 किग्रा./हेक्टेयर तक पायी गयी। जो उद्यान–चरागाह मिट्टी के स्वास्थ्य को समुचित आधार देती है।

उद्यान–चरागाह एवं पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं :

उद्यान–चरागाह प्रणाली पारिस्थितिकी तंत्र की तरह व्यवहार करती है। यह पारिस्थितिकी तंत्र किसानों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सेवाएं प्रदान करता है। पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं मानव कल्याण में दीर्घकालिक भूमिका अदा कर रहे हैं। उद्यान–चरागाह पद्धति भी एक पारिस्थितिकी तंत्र है जो किसानों को सहायक सेवाएं (जैसे– प्राथमिक उत्पादन, मिट्टी का निर्माण), प्रावधान सेवाएं (जैसे– भोजन, ईंधन), विनियमन सेवाएं (जैसे– जल शोधन, मिट्टी कटाव नियंत्रण, जलवायु नियमन) और सांस्कृतिक सेवाएं (जैसे– सौन्दर्य अनुभव) प्रदान करती है। जैसे विविधता की भी बनाए रखना एक प्रमुख कार्य है।

उद्यान–चरागाह पद्धति मनुष्य, पर्यावरण एवं पशुधन तीनों की समस्या का एक साथ निवारण करती है। अतः यह पद्धति शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्र में महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

चारा विषाक्तता से अपने पशुओं की रक्षा करें

पुष्पेन्द्र कोली, सुनील नीलकंठ रोकड़े, शुभेन्दू विकास मैती, कृष्ण कुंवर सिंह एवं असीम कुमार मिश्रा

सामान्य रूप से चारे की गुणवत्ता का मापदंड उसमें मौजूद पोषक तत्व तथा उसके उपयोग के बाद पशुओं से प्राप्त दूध, माँस और अन्य पदार्थों से होता है। लेकिन चारे में पाये जाने वाले कुछ ऐसे विषाक्त पदार्थ जिनके कारण पशुओं की उत्पादन क्षमता में कमी आ जाती है। इन विषाक्त पदार्थों की अधिक मात्रा पशु के लिये जानलेवा भी हो सकती है। अतः विषाक्त पदार्थों की चारा फसलों में पायी जाने वाली मात्रा, स्तर एवं उससे पशुओं में होने वाले नुकसान की जानकारी रखना अति आवश्यक है।

चारे में मौजूद कुछ पोषक विरोधी तत्व :

1. नाइट्रेट : नाइट्रेट की वजह से नाइट्रेट विषाक्तता होती है। यह विषाक्तता मृदा में अत्यधिक नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक के प्रयोग, सूखा पड़ने के दौरान या विस्तारित बदली परिस्थितियों में होती है।

लक्षण : नाइट्रेट विषाक्तता के कारण जानवर के रक्त का रंग चॉकलेटी भूरा हो जाता है और अंत में ऑक्सीजन की कमी के कारण जानवर की दम घुटने से मृत्यु हो जाती है।

ग्रसित फसलें : सूडान घास, बाजरा, जई, ज्वार तथा मक्का इत्यादि।

उपाय : अ. इससे बचने के लिए मिट्टी में अत्यधिक मात्रा में नाइट्रोजन खाद या उर्वरक का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

ब. सूखे के दौरान हुई बारिश के 3 से 5 दिन बाद ही चारे को काटना चाहिए।

2. ऑक्सलेट : ऑक्सलेट की वजह से ऑक्सलेट विषाक्तता होती है। यह समस्या ज्यादातर उष्ण कटिबंधीय घासों में पायी जाती है। जैसे बाजरा, नेपियर घास, गिनी घास, संकर बाजरा नेपियर एवं अंजन घास इत्यादि। ऑक्सलेट के कैल्शियम के साथ रसायनिक क्रिया कर कैल्शियम ऑक्सलेट बनाता है जिससे की जानवरों में कैल्शियम की मात्रा कम हो जाती है। कैल्शियम की कमी को पूरा करने के लिए हड्डियों से कैल्शियम का खनिजीकरण होने लगता है इसके साथ–साथ कैल्शियम एवं फॉस्फोरस का संतुलन भी बिगड़ने लगता है और ओस्टियोआर्थराइटिस जैसी समस्या आने लगती है।

उपाय : अ. कैल्शियम लवणों का उपयोग ज्यादा किया जा सकता है।

3. साइनोजेनिक ग्लाइकोसाइड : साइनोजेनिक ग्लाइकोसाइड ऐसे कार्बनिक पदार्थ है जिनसे पशुओं के रूमेन में होने वाली सूक्ष्म जैविक गतिविधियों के दौरान एंजाइम संलयन द्वारा जहरीली गैस का निस्तारण होता है और इससे पैदा विषाक्तता को प्रूसिक अम्ल या एच. सी.एन. अम्ल विषाक्तता कहते हैं। जो पशु के श्वसन प्रक्रिया में रूकावट डालती है।

ग्रसित फसलें : ज्वार, सूडान घास, तथा जॉनसन घास इत्यादि।

उपाय : अ. अपरिपक्व या कच्ची पत्तियों की जगह परिपक्व पत्तियों का उपयोग चारे के रूप में ज्यादा करना चाहिए।

ब. सूडान घास को 18 इंच (डेढ़ फीट) तक की लम्बाई तक बढ़ने के बाद ही जानवरों के चारा के लिए काटना चाहिए।

स. सामान्यतः केवल घास का प्रयोग न करें उनमें दलहनी चारें की फसलों को मिश्रित कर पशुओं को खिलाना चाहिए।

4. टैनिन्स : टैनिन्स ऐसे जल घुलनशील यौगिक है, जोकि पोषक एवं विषाक्त दोनों ही गुण रखते हैं। टैनिन्स सामान्यतः सभी पेड़ों और झाड़ों में पाये जाते हैं। टैनिन्स यौगिक पशुओं के पाचन क्रिया में मुख्य रूप से बाधा डालते हैं। प्रोटीन के साथ मिलकर ये एक ऐसी जटिल संरचना बनाते हैं जो पशुओं की पाचनशक्ति को कम करता है। माना जाता है कि चारे में संचित टैनिन्स की मात्रा अगर 4 प्रतिशत से अधिक हो तो यह विषाक्ता दर्शाती है।

उपाय : अ. अगर भिगोकर या सूखाकर चारे को खिलाया जाए तो टैनिन्स की मात्रा मे कमी आती हैं।

ब. ऊष्मा उपचार भी एक साधारण तरीका है जिससे टैनिन्स की विषाक्ता कम होती है।

5. अल्कलॉइड्स : अल्कलॉइडस ऐसे पदार्थ होते हैं जो कि स्वाद में बहुत ही कड़वे होते हैं और इनका जनन मुख्यतः एमिनो अम्लों के द्वारा ही होता है। अल्कलॉइड्स भी औसतन सभी पेड़–पौधों में पाये जाते हैं। अल्कलॉइड्स की वजह से अल्कलॉइडस विषाक्ता होती है।

अल्कलॉइडस के उदाहरण : लेक्टिन्स, गॉसीपोल, मिमोसीन, सैपोनिन तथा ग्लूकोसिनोलेट इत्यादि।

गॉसीपोल नामक यौगिक कपास के बीजों में पाया जाता है। सूबबूल की पत्तियों में मिमोसीन नामक विषाक्तता यौगिक अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसे अधिक मात्रा में खाने से सूअर तथा बकरी के शरीर के बाल गिर जाते हैं। इसका उपाय यह है कि कुल खिलाये जाने वाले पत्तियों की मात्रा का एक चौथाई हिस्सा ही खिलाना चाहिए। सैपोनिन्स पनीकम घास में पाये जाते हैं। ग्लूकोसिनोलेट राई में पाये जाते हैं। एर्गोट यह अल्कलॉइड एक फंफूद के कारण ज्वार और बाजरा जैसी फसलों में जमा होता है।

अल्कलॉइडस की विषाक्तता को कम करने के उपाय :

1. चरागाह में क्लोवर अथवा दलहनी प्रजातियों का बीजीकरण करना चाहिए।
2. पशुओं को एक साथ इकट्ठा चराना चाहिए न की जगह छोड़–छोड़ कर चराना चाहिए।

6. माइकोटॉसिन्स : ये ऐसे द्वितीय घटक है जो फंफूद द्वारा उत्पन्न होते है तथा पशुओं के स्वास्थ्य एवं उत्पादकता में बाधा डालते हैं। विभिन्न प्रकार के फंफूदों की प्रजातियाँ अनेक प्रकार के विषाक्त पदार्थ उत्पन्न करती है। इनका संक्रमण खेतों में खड़ी फसलों में कटाई के समय या गोदाम में रखे हुए कभी भी हो सकता है। उदाहरण : ऐसा दूषित चारा पशुओं को नहीं खिलाना चाहिए। किसान निम्नलिखित सावधानियाँ बरतें :

1. चारा हमेशा सूखा रखे एवं उसे सूखी जगह भंडारित करें।
2. चारे में नमी पैदा नहीं होने दे।
3. अगर चारे में काली, पीली या सफेद किसी भी तरह की फंफूद दिखाई दे अथवा चारे में किसी भी तरह की अप्राकृतिक गंध आये तो उस चारे को कचरे या खाद के गड्ढ़े में डाल दे तथा उसे पशु को कतई न खिलाये।
4. जिस चारे में विषाक्त पदार्थ होते हैं या पैदा होते हैं उनके बारे में जानकारी रखे एवं सावधानी बरतें।
5. हमेशा चारे को घास और दलहनी फसलों के मिश्रण में ही देना चाहिए।

शहरी क्षेत्रों में भूगर्भ जल संचयन एवं भूजल सम्भरण

सोनम आर्या, रेनू आर्या, सुधीर कुमार एवं आर.एल. आर्या

एक अनुमान के अनुसार देश में हिमपात सहित कुल वर्षा, जो लगभग 4000 बिलियन घन मीटर हैं, सतही एवं प्रयोगयुक्त भूजल सहित जल की कुल उपलब्धता 1869 बिलियन घन मीटर है। देश के लगभग सभी महानगरों में विगत वर्षो में विकसित हुई आधुनिक जीवन शैली से भूजल की खपत में कई गुना वृद्धि हुई है। आँकड़ों के अनुसार 80 प्रतिशत आबादी अपनी दैनिक आवश्यकताओं हेतु भूजल पर निर्भर है। शहरी क्षेत्रों में रहने वाला प्रति व्यक्ति प्रतिदिन लगभग 185 लीटर जल का उपयोग करता है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों के प्रति व्यक्ति प्रतिदिन लगभग 135 लीटर जल का उपयोग करते हैं। कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्रों में भी 70 से 80 प्रतिशत जलापूर्ति भूजल से ही होती है। विगत वर्षो में सहजता से मिलने वाले इस प्राकृतिक संसाधन को अनियोजित ढंग से इस्तेमाल में लाने के फलस्वरुप प्रदेश के अधिकांश भागों में इसकी उपलब्धता में कमी आई है एवं भूजल स्तर में असामान्य रुप से गिरावट परिलक्षित हुई है। जो भविष्य में इस प्राकृतिक संसाधन पर आने वाले संकट का द्योतक है। प्रमुख महानगरों में घरेलू क्षेत्रों में भूजल का अंधाधुंध दोहन किया जाना महानगरों में भूजल संकट के रुप में सामने आया है। वर्तमान में कानपुर नगर के शहरी क्षेत्र में 45 सेमी. प्रतिवर्ष की दर से भूजल या वर्षा की गिरावट दर्ज की जा रही है। शहरी क्षेत्रों में भूजल प्रबन्धन एवं संरक्षण की दृष्टि से अन्य विधियों एवं उपायों के साथ–साथ रुफ टाप रेनवाटर हार्वेस्टिंग एक सर्वाधिक अनुकूल विधि है, जिसे बड़े पैमाने पर अपना कर भूजल संकट की वर्तमान स्थिति से काफी हद तक निपटा जा सकता है।

सन् 1950 में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 5300 घन मीटर थी जो 2025 तक घटकर 1500 घन मीटर रह जाने का अनुमान है जो जल उपलब्धता के न्यूनतम स्तर 1700 घन मीटर से भी कम है। देश की बढ़ती आबादी तथा कृषि दोनों के लिए जल की उपलब्धता में कमी दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। यह सब इस बात का संकेत देती है कि जल संसाधन का उचित संरक्षण एवं प्रबन्धन बहुत ही आवश्यक है। पश्चिमी राजस्थान में शताब्दियों से छतों के जल का संग्रहण कर पीने के पानी के रूप में प्रयोग होता आया है। पिछली कुछ शताब्दियों से गाँवों एवं शहरों का विकास तेजी से हुआ है। घरों की छते अछिद्रित होने के कारण जल बहाव के दोहन के लिए अत्यन्त उपयुक्त होती हैं और इस प्रकार एकत्रित जल का प्रयोग पीने के काम में लाया जा सकता है। अभी हाल के वर्षो में बड़े–बड़े भवनों की छत से जल दोहन कर उसे भूजल पुर्नभरण के काम में लिया जाने लगा है। यह तकनीक इतनी लोकप्रिय हो गई है कि सरकारी भवनों को भी इस काम में प्रयोग किया जाने लगा है। राजस्थान सरकार जल नीति के अर्न्तगत इस तकनीकी को वृहद स्तर पर अपनाने के लिए जोर दे रही है। इस प्रकार से एकत्रित जल की मात्रा छत के उपयोग में लाये गये क्षेत्र पर निर्भर करती है। एक सर्वेक्षण से पता चला है कि सर्वाधिक 85 प्रतिशत बहाव लोहे की चादरों से बनी छतों से होता है, चूने की बनी छतों से 81 प्रतिशत, मिटटी की टाइलों से बनी छत से 56 प्रतिशत तथा घास–फूस की बनी छत से भी लगभग 40 प्रतिशत जल बहाव वर्षा ऋतु में होता है। मृदा द्वारा कुल शोषित जल में से 165 मिलियन हेक्टेयर जल पृथ्वी पर उगने वाले पौधों के उपयोग में आता है तथा

शेष 60 मिलियन हेक्टेयर जल भूजल के पुर्नभरण का कार्य करता है। भारत का पुर्नभरण जल स्त्रोत विश्व की सम्पूर्ण जल उपलब्धता का केवल 4 प्रतिशत है। भूजल संवर्धन विधि एक कृत्रिम जल पुर्नभरण तकनीक है जिसमे स्थानीय हाइड्रोलोजिकल परिस्थितियों के अनुरुप विभिन्न रिचार्ज संरचनाओं के माध्यम से भूजल स्त्रोतों का संवर्धन किया जाता है। शहरी क्षेत्रों में सहज रुप से स्थापित की जाने वाली कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नवत हैं।

1. रिचार्ज पिट द्वारा :

यह विधि जलोढ़ क्षेत्रों के मैदानी भू–भाग के लिए उपयुक्त है जहाँ पर बलुई स्ट्रेटा जमीन से कम गहराई पर हो। इसके लिए 100 वर्ग मीटर क्षेत्र वाली छत उपयुक्त होती है। इसके लिए पिट का आकार 1.5 मी. x 2.0 मी. x 2.0 मी. रखा जाता है। यह सस्ती एवं आसान संरचना है जो कम जगह में बनाई जा सकती है।

2. रिचार्ज ट्रेन्च द्वारा :

ऐसे क्षेत्र जहाँ बलुई स्ट्रेटा कम गहराई पर होता है, यह विधि अपनाई जाती है। इस विधि के लिए 200 से 300 वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाली छत उपयुक्त होती है। इसके लिए पिट का आकार 0.50 मी. से 1.00 मी. चौडा, 1.00 से 1.50 मी. गहरा तथा 8.00 से 10.00 मी. अथवा अधिक लम्बा हो सकता है। यह कम लागत एवं आसानी से निर्मित की जा सकती है।

3. रिचार्ज ट्रैंच रिचार्ज वेल के साथ :

ऐसे क्षेत्र जहाँ परमियेबिल स्ट्रेटा बालू भूमि सतह से 3 से 4 मीटर के अन्दर मौजूद हो जिससे ट्रेन्च में आने वाले वर्षा जल का रिसाव इस स्ट्रेटा में हो सके तथा शेष जल रिचार्ज वेल के माध्यम से उथले तथा गहरे एक्यूफर्स में रिचार्ज हो सके। इस विधि में जल की उपलब्धता के आधार पर ट्रेन्च का साइज निर्धारित किया जाता है। इसमें 5.00 मीटर से 10.00 मीटर तक गहराई के 100 मिमी से 500 मिमी. व्यास का रिचार्ज वेल स्थानीय हाइड्रोलोजिकल परिस्थितियों के आधार पर बनाये जाते है। रिचार्ज वेल को मध्य में रखते हुए जल की उपलब्धता पर आधारित 1.5 से 3.0 मीटर चौडी तथा 8. 0 मीटर से 10.0 मीटर लम्बा (या अधिक) लेटरल ट्रैंच का निर्माण किया जाता है।

4. रूफ टाप वाटर की अन्य तकनीक :

छतों से प्राप्त वर्षा जल के संचयन एवं रिचार्जिंग हेतु अन्य सरल विधायें निम्नवत हैं।

- सूखा कुँआ
- अबन्डेन्ड नलकूप
- डग कम बोरवेल

वर्षा जल को उपरोक्त विधि से फिल्टर मेटेरियल के माध्यम से ही डाला जाना उचित होगा।

5. स्टोरेज टाप टैंक एवं रिचार्ज वेल विधि :

जहाँ एक्यूफर 25 से 30 मीटर अथवा अधिक गहराई पर हो वहाँ यह विधि बहुमंजिला भवनों तथा 400 से 1000 वर्ग मीटर अथवा अधिक क्षेत्रफल वाली छतों के लिए उपयुक्त है। यह विधि सीधे एक्यूफर में रिचार्ज कराये जाने के लिए उपयुक्त है। फिल्टर चेम्बर के माध्यम से स्टोरेज टैंक में वर्षा जल को पहुँचाया जाना आवश्यक होता है। वर्षा जल की उपलब्धता के आधार पर स्टोरेज टैंक का आकार निर्धारित किया जाता है।

6. जल रिसाइक्लिंग द्वारा :

जिस प्रकार प्रकृति में पाए जाने वाले कई पदार्थों जैसे एल्यूमिनियम, ग्लास, कागज को रिसाइक्लिंग के बाद पुनः उपयोग में लाने योग्य बनाया जाता है, उसी प्रकार घरेलू उपयोग, उद्योगों तथा वाणिज्य क्षेत्रों में एक बार उपयोग में लाये गये जल को पुनः ट्रीटमेंट के उपरान्त विभिन्न उपयोगों हेतु प्रयोग में ला सकते हैं जैसे उद्योगों में ठंडा करने की प्रक्रिया, सफाई शौचालयों में तथा बागवानी में पुनः प्रयोग में

लाये जाने के लिए किया जा सकता है। इसी प्रकार आवासीय, औद्योगिक इकाइयों तथा वाणिज्य संस्थानों में शौचालयों, कपड़े धोने, शावर पानी को ग्रे वाटर रिसाइकिल कर पुनः उपयोग में लाये जाने की तकनीक के प्रचलन को अपनाया जाना उचित होगा। इस प्रकार रिसाइकिल किये हुए पानी को जल संकट अथवा अतिदोहन वाले क्षेत्रों में पुनः प्रयोग में लाना उपयोगी होगा और यह प्रणाली जल माँग को पूरा करने में सहायक होगी। रिसाइकिल किये गये जल का मुख्यतः निम्न आवश्यकताओं को पूरा करने में उपयोग में लाया जा सकता है।

1. कृषि
2. बागवानी
3. उद्यान
4. आयल रिफाइनरी
5. पावर प्लान्ट
6. शौचालयों
7. निर्माण कार्यो में

बाहरी क्षेत्रों में रूफ टाप हार्वेस्टिंग एवं जल संरक्षण से लाभ

भूजल स्तर में गिरावट को नियंत्रित किया जा सकेगा एवं भूजल स्तर पर्यावरणीय दायरे में पुनः लाया जा सकेगा। वर्षा जल का समुचित उपयोग किया जा सकेगा। भूजल उपलब्धता में वृद्धि की जा सकेगी।

वर्षा जल से सड़कों पर होने वाली सतही जल प्लावन की समस्या से निदान मिल सकेगा। मृदा की नमी को पुनः अनुरक्षित किया जा सकेगा।

रूफ टाप हार्वेस्टिंग से सावधानियाँ :

क्षेत्र विशेष की भूगर्भीय तथा हाइड्रोलोजिकल परिस्थितियों के अनुसार संरचना के मानक तय किये जाये। इसमें सबसे महत्वपूर्ण यह है कि रिचार्ज वेल की गहराई को जोन आफ ग्राउन्ड वाटर ऐसट्रेक्सन के अधीन रखा जाये। वर्षा जल की उपलब्धता के अनुसार रिचार्ज संरचना की डिजाइन तय की जाये। उद्यानों अथवा खुले स्थानों में इस विधि का उपयोग किया जाये तथा उद्यानों को साफ रखा जाये। औद्योगिक इकाइयों से अथवा अन्य किसी भी प्रकार का प्रदूषित उत्प्रवाह का निस्तारण इस विधि द्वारा किसी भी दशा में न किया जाये।

सरदार बल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.) कृषि विज्ञान केन्द्र बहराइच (उ.प्र.)

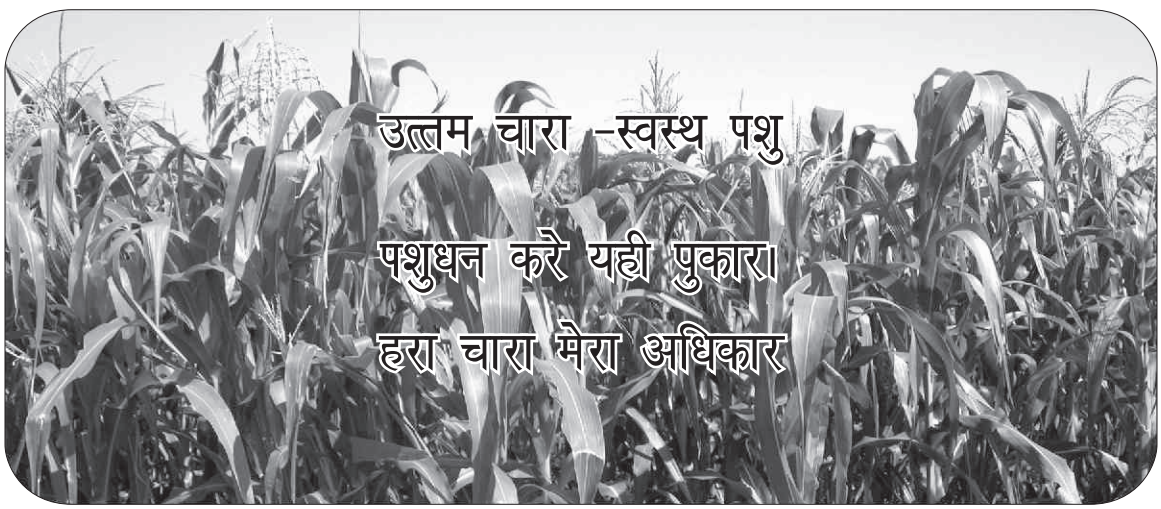

जैविक खाद: टिकाऊ खेती एवं मृदा स्वास्थ्य के लिए उत्तम विकल्प

रेनू आर्या, सोनम आर्या, सुधीर कुमार एवं आर.एल. आर्या

जैविक खेती कृषि की वह पद्वति है जिसमें प्राकृतिक सन्तुलन, पर्यावरण प्रदूषण एवं मृदा उर्वरता को बनाये रखते हुए अधिक समय तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकें। देश में हरित क्रान्ति आने से हम खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर तो हो गये परन्तु मृदा एवं पर्यावरण सन्तुलन पर प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ा है। फसलों के लगातार उगाने एवं सघन फसल पद्वति के कारण मृदा उर्वरता में ह्रास तथा मृदा में विकार उत्पन्न होने के कारण विगत वर्षो से फसलों की उत्पादकता में स्थिरता आई है। यह स्थिति भविष्य में कुल खाद्यान्न उपलब्धता हेतु चिन्ता का विषय है। फसलों के उत्पादकता में वृद्धि नई उन्नतशील प्रजातियों के द्वारा सम्भव हो सकी है परन्तु इसके लिये सिंचाई के साधनों तथा रासायनिक उर्वरक के संतुलित प्रयोग आवश्यक है। रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुन्ध प्रयोग से मृदा में विकार उत्पन्न हो गये है एवं मृदा उर्वरता में भी कमी हुई है, मृदा जल एवं वायु प्रदूषित हो गई है जिसका प्रभाव फसलोत्पादन पर पड़ा है। फसलों की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरकों विशेषकर यूरिया के असन्तुलित प्रयोग से भूगर्भ जल में नाइट्रेट की मात्रा बढ़ जाने से मनुष्यों में मीथोहयूमोग्लोबोमिया (नीला शिशु) नामक बीमारी का प्रकोप हो जाता है। इसके अतिरिक्त मनुष्यों में अन्य भयंकर बीमारियाँ का भी प्रकोप हो रहा है। वर्तमान समय में यांत्रिक युग हो जाने से खेती में पशुओं बैल का प्रयोग पूर्णतयः बन्द हो जाने से इनका हिस्सा खेती में लगभग समाप्त हो गया है।

जैविक खाद के रूप मे गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद एवं हरी खाद के प्रयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक संरचना में सुधार हो जाता है जो खाद्यान्न के उत्पादन में अस्थिरता को समाप्त करने में सहायक है। फसल अवशेषों जैसे डंठल, गिरे हुऐ पत्ते अपरिपक्व फल फूल एवं टहनियाँ, भूसा आदि को खेती में जुताई के माध्यम से मिला देने से मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि की जा सकती है। जो फसलोत्पादन में अस्थिरता को समाप्त करने में सहायक है। जैविक खाद के प्रयोग से फसलों में सूखे के प्रति सहन करने की क्षमता में भी वृद्धि हो जाती है। जैविक खेती के उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. जैविक खेती को अपनाकर कृषि उत्पादन को स्थायित्व प्रदान करते हुए, पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण संतुलन बनाये रखते हुए कृषि को लाभकारी बनाने एवं कृषकों के आर्थिक स्तर में सुधार कर खेती को सम्मानजनक बनाना।
2. वर्षा आधारित, कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में, कम उर्वरक प्रयोग किये जाने वाले क्षेत्र में, गैर सिंचित क्षेत्रों में जैविक खेती प्रारम्भ करने के लिये एवं भविष्य में सामान्य खेती को जैविक खेती में परिवर्तित करना।
3. जैव विविधता को समृद्ध एवं पर्यावरण संरक्षण करना।
4. मृदा एवं जल का संरक्षण कर कृषि उत्पादन में वृद्धि करना।
5. अक्षय ऊर्जा का उपयोग करना ।
6. रसायन मुक्त पानी, हवा और भोजन उपलब्ध कराना।
7. जैव विविधता के आधार पर पारिस्थितिकी, कृषि को बढ़ावा देने, जैविक निवेश एवं कृषि उपज में गुणवत्ता सुनिश्चित करना।

8. मानव स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए सुरक्षित कृषि उत्पादों का उत्पादन करना।
9. सुरक्षित कृषि से पारम्परिक ज्ञान का विकास करना।
10. जैविक खेती को अपनाने के लिए प्रोत्साहन देना।
11. नियन्त्रित जैविक उत्पादों के लिए घरेलू बाजार सुनिश्चित करना।
12. जैविक खेती के सम्बन्ध में जागरूकता और प्रशिक्षण कार्यक्रम, मार्केट लिन्केज (संयोजन), विकास एवं जैविक उत्पादों को चिन्हित करना।

नाडेप कम्पोस्ट : इस विधि में ईटों का 2 मीटर चौडा 3. 5 मीटर लम्बा तथा 1 मीटर ऊँचा ढाँचा बनाते हैं। ढॉचे की चुनाई पक्के गारे अथवा सीमेन्ट से छिद्रित करके बनाया जाता है। इस ढॉचे के अन्दर खेत, खलिहान, घर एवं रसोई से प्राप्त फसल अवशेषों, गोबर, पानी, मिट्टी के साथ सड़ाया जाता है। इस विधि से सड़ी खाद उच्च गुणवत्ता युक्त होती है तथा इससे अनुपयोगी पदार्थों का प्रयोग हो जाता है। सर्वप्रथम 40–45 किग्रा. गोबर को 100 से 150 ली. पानी में घोलकर ढाचें की तल पर डाल देते हैं। इसके पश्चात 8 इंच मोटी कचरे की तह दबा–दबा कर बिछाते हैं फिर 30–40 किग्रा. गोबर को 100–125 ली. पानी में घोल कर इस कचरे पर डाल कर 100 किग्रा. मिट्टी बिछा देते हैं। इसके बाद गोबर एवं मिट्टी की मोटी परत से ढाँचे के ऊपर लिपाई कर देते हैं। 70–80 दिन पश्चात् गड्ढें के ऊपर 15–20 छेद मोटे डन्ड़े की सहायता से बना देते हैं। इसमें 10 ली. गौमूत्र में पी.एस.बी., एजोटोबैक्टर कल्चर के पैकेट, 2 किग्रा. गुड़ एवं 100 ग्रा. हवन की राख का घोल बनाकर इन छेदों में डालकर पुनः इन छिद्रों को बन्द कर देते हैं। इस प्रकार 100 से 120 दिन में 30 कुन्तल कम्पोस्ट की खाद बनकर तैयार हो जाती है। इस कम्पोस्ट में 0. 75–1.75 प्रतिशत नत्रजन, 0.75–0.90 प्रतिशत फॉस्फोरस,1.20–1.40 प्रतिशत पोटाश के साथ–साथ सूक्ष्म तत्व भी पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इस खाद में पौधों के समस्त पोषक तत्व प्राप्त हो जाते हैं, मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि हो जाती है, कीट एवं व्याधियों का प्रकोप कम हो जाता है, उत्पाद के स्वाद एवं गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है, मृदा को बंजर/ऊसर होने से बचाया जा सकता है तथा फसल उत्पादन में लागत को कम करने में भी सहायक है।

वर्मी कम्पोस्टः कृषि अवशिष्ट पदार्थों, शहर तथा रसोई के कूड़े कचरे को केंचुए द्वारा उपयोगी पदार्थ में बदलने अथवा खाद बनाने को केंचुए की खाद अथवा वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं। केंचुए की कई प्रजातियाँ कम्पोस्ट बनाने में सहायक हैं। परन्तु भारतीय परिवेश में *एसीना फोटिडा* एवं जय गोपाल प्रजाति का प्रयोग किया जाता है। यह केंचुए अपने आहार के रूप में मिट्टी, गोबर, कच्चा जीवाँश, खरपतवारों के, गन्ने की खोई, बायो गैस स्लरी आदि निगलते हुए पाचन नलिका से गुजरने पर उसे कम्पोस्ट में परिणित करते हैं। कम्पोस्ट बनाने में 15 दिन लगते हैं। वर्मी कम्पोस्ट में 1–2 प्रतिशत नत्रजन, 0.63–1.48 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.30–0.72 प्रतिशत पोटाश के साथ–साथ फसल के लिए वृद्धि कारक हारमोन्स भी उपस्थित रहते हैं। वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए 7 फीट लम्बा, 3 फीट चौड़ा तथा 1 फीट ऊँचा ढाँचा बना कर उसमें 4–5 दिन पुराना गोबर, घर का कूड़ा कचरा, फसल आदि को इस ढाँचे में भर कर केंचुऐ डाल देते हैं। वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग दलहनी एवं खाद्यान्न फसल में 2 टन, तिलहनी फसल में 3 टन, मसाला एवं सब्जी फसल 4 टन, फूल वाली फसल में 5 टन/हे., फलदार पौधों में रोपण के समय 5 किग्रा. प्रति वृक्ष, गमलों में मिटटी के भार का 10 प्रतिशत तथा लॉन में 2 किग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से प्रयोग की जाती है। वर्मी कम्पोस्ट के प्रयोग से फसलोत्पादन में आई स्थिरता को समाप्त कर उत्पादन बढ़ाना, उत्पादन की गुणवत्ता में सुधार लाना, भूमि में सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता में वृद्धि तथा मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि करने में सहायक है।

हरी खाद : फसलों को उगाकर उन्हें हरी अवस्था में खेत में पलट देने की क्रिया को हरी खाद कहते हैं। हरी खाद के रूप में सनई, ढैंचा, पिलीपरेसा, ऊर्द, मूँग, लोबिया आदि फसलों का प्रयोग किया जाता है। खरीफ ऋतु में इन फसलों को उगाकर 30 से 40 दिन पश्चात खेत में ही पलट देते हैं। यदि इनकी सड़ाव प्रक्रिया में देरी होने की दशा में 10–15 किलो यूरिया/हे. की दर से छिड़काव करते हैं। हरी खाद के रूप में जायद ऋतु ऊर्द एवं मूँग की फसल को उगाकर पकने के समय फलियाँ तोड़कर पौधों को खेत में मिला देने से भी हरी खाद का कार्य करता है। हरी खाद के प्रयोग से मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि, मृदा की जल धारण क्षमता तथा अवशोषण क्षमता में भी वृद्धि हो जाती है। फसलों में कीट एवं बीमारियों का प्रकोप कम हो जाता है। उत्पादन गुणवत्ता एवं स्वाद में वृद्धि हो जाती है। फसलोत्पादन की लागत में कमी हो जाती है तथा फसल उत्पादन में वृद्धि हो जाती है। ऊसर भूमियों में ढैंचे को हरी खाद के रूप में आसानी से उगाया जा सकता है।

सघन फसलोत्पादन के कारण देश में हरी खाद का प्रचलन लगभग समाप्त होता जा रहा है क्योंकि इसको अपनाने से कृषक को एक फसल की हानि होती है।

परन्तु जायद में उर्द एवं मूँग को उगाकर उसकी फलियॉ तोड़कर पौधों को खेत में मिला देते हैं तो इस समस्या का निदान हो जाता है। हरी खाद के प्रयोग से खेत में पौधों के लिये आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति हो जाने के साथ–साथ कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में भी वृद्धि हो जाती है।

गोबर की खाद : पशुओं के गोबर, मूत्र से सनी हुई बिछावन, अप्रयुक्त चारा, घरों का कूड़ा कचरा आदि के प्रयोग से जो खाद बनाई जाती है, वह गोबर की खाद कहलाती है। पूर्णरूप से सड़ी हुई गोबर की खाद में 0.50 प्रतिशत नत्रजन, 0.25 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.50 प्रतिशत पोटाश के साथ–साथ सम्पूर्ण सूक्ष्म आवश्यक पोषक तत्व भी विद्यमान रहते हैं। गोबर की खाद का प्रयोग करने से फसल में इसका प्रभाव 2–3 वर्षो तक रहता है। इसके प्रयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक संरचना में सुधार होता है, मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि हो जाती है एवं मृदा में जीवांश पदार्थ की वृद्धि हो जाने से स्थाई/टिकाऊ उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। वैज्ञानिक विधि से गोबर की खाद सदैव एक निश्चित आकार के गड्ढें में बनाते हैं। जिससे गोबर की खाद पूर्णरूप से सड़ जाता है तथा पोषक तत्वों का ह्रास सबसे कम होता है। अपूर्ण रूप से सड़ी हुई गोबर की खाद से फसलों में दीमक का प्रकोप हो जाने से फसल में उत्पादन में कमी हो जाती है। फसलों में गोबर की खाद फसल बोने के एक माह पूर्व 5 टन/हे. की दर से खेत में जुताई करके अच्छी प्रकार से मिला देना चाहिए।

फसल : फसल काटने के बाद खेत में पड़े हुए फसल अवशेष जैसे जड़ें, डंठल पत्तियाँ, अपरिपक्व फूल तथा फलियाँ, भूसा आदि को खेत मे जुताई द्वारा मिला देने से मृदा में 0.4 प्रतिशत तक जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। फसल अवशेषों के प्रयोग से मृदा में मृदा जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाने से खाद्यान्न उत्पादन में स्थिरता को समाप्त किया जा सकता है। गेहूँ की फसल को कम्बाइन हार्वेस्टर से काटने के पश्चात् खेत में नरई एवं भूसा खेत में छोड़ दिया जाता है। अतः कृषक भाई इसको जलाये नहीं बल्कि रोटावेटर अथवा किसी अन्य मिट्टी पलटने वाले हल से खेत में जुताई करके खेत में मिला देने से मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। जिससे टिकाऊ एवं अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

तरल खाद : सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता बनाये रखने के लिए तरल खाद का उपयोग आवश्यक है। समस्त फसलों हेतु 3–4 बार तरल खाद का प्रयोग

आवश्यक है। वर्मी कम्पोस्ट अर्क तथा गौमूत्र आदि बहुत अच्छे वृद्धि उत्प्रेरक है तथा इसका पत्तियों पर छिड़काव के रूप में उपयोग किया जाता है। बुवाई के 25–30 दिन पश्चात 3–4 बार प्रयोग करने से अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। कुछ प्रमुख तरल खादों को विवरण एवं बनाने की विधि निम्नवत है।

संजीवक : 100 किग्रा. गाय का गोबर, 100 ली. गौमूत्र तथा 500 ग्रा. गुड़ को 500 ली. क्षमता वाले ड्रम में 300 ली. जल में मिला कर 10 दिनों तक सड़ने दें। 20 गुना पानी मिलाकर एक एकड़ क्षेत्र में मृदा पर छिडकाव करें अथवा सिंचाई जल के साथ प्रयोग करें।

जीवामृत : 10 किग्रा. गाय का गोबर, 100 ली. गौमूत्र, 1 किग्रा. गुड़ तथा किसी दाल का आटा, 1 किग्रा. जीवन्त मृदा को 200 ली. जल में मिलाकर 5–7 दिनों तक सड़ने दें। इस घोल को नियमित रूप से दिन में दो–तीन बार हिलाते रहें। इसको खेत में सिंचाई जल के साथ प्रयोग करें।

अमृत पानी– 500 ग्राम शहद के साथ 10 किग्रा. गाय के गोबर को मिलाकर एक लकड़ी की सहायता से फेटे जब तक कि लुगदी जैसा न बन जाए। इसके बाद इसमे 250 ग्राम गाय का घी मिलाकर तेजी से मिलाये। इसे 200 ली. पानी में घोल ले। इस घोल को एक एकड़ जमीन पर छिड़काव दें अथवा सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करें। 30 दिन पश्चात पुनः सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करें।

पंचगव्यः 5 किग्रा. गाय का गोबर, 3 ली. गौमूत्र, 2 ली. गाय का दूध, 2 किग्रा. गाय का दही, 1 किग्रा. गाय के दूध से बना मक्खन मिला कर एक सप्ताह सड़ने दें और इसे प्रतिदिन दो बार हिलायें। एक सप्ताह में पंचगव्य बन कर तैयार हो जायेगा। 3 ली. पंचगव्य को 100 ली. पानी में मृदा में छिडकाव करते हैं। सिंचाई के साथ 20 ली. पंचगव्य को एक एकड़ की दर से प्रयोग करें।

दशगव्यः 5 किग्रा. गाय का गोबर, 3 ली. गौमूत्र, 2 ली. गाय का दूध, 2 ली. गाय का दही, 1 किग्रा. गाय का घी, 3 ली. गन्ने का रस, 3 ली. कच्चे नारियल का पानी, 12 केलों का मसलकर तैयार किया पेस्ट, ताड़ी व अंगूर का रस 2 ली. को एक पात्र में गाय का गोबर तथा गाय का घी को तीन दिन तक सड़ाने के लिए रख देते हैं। बीच–बीच में इसे हिलाते रहे चौथे दिन उपरोक्त सभी सामग्री को इसमें मिला दें 15 दिनों तक सड़ने के लिए रख देते हैं। 18वें दिन दशगव्य तैयार हो जायेगा। छिड़काव हेतु 3 से 4 ली. दशगव्य को 100 ली. पानी में मिला कर प्रयोग करें। मृदा में छिड़काव हेतु 50 ली. पंचगव्य तथा 3–4 ली. दशगव्य के 100 ली. पानी में मिलाकर एक हेक्टेयर में छिड़काव करें।

बायोडायनामिक खाद : देशी गाय के सींग में देशी दुधारू गाय का गोबर भरकर नवम्बर से फरवरी माह के मध्य भूमि में 15 से 18 इंच की गहराई में गड्ढे में इस प्रकार गाड़ते हैं कि सींग का खुला हुआ भाग मिटटी के सम्पर्क में रहे। गड्ढे के पास पर्याप्त नमी बनाये रखे 4 माह पश्चात इसे निकालकर सींग से निकले मिश्रण को 25 ग्राम प्रति 13 ली. पानी में मिलाकर एक एकड़ भूमि में सायंकाल छिड़काव करें। इसके प्रयोग से स्थिरीकरण एवं फॉस्फोरस घुलनशील बैक्टीरिया की भूमि में वृद्धि होती है। इससे सिंचाई की 25–50 प्रतिशत आवश्यकता कम होती है तथा मृदा की जीवंतता में वृद्धि होती है।

देशी गाय के सींग को लेकर महीन पिसी हुई सिलिका भरकर मार्च से अप्रैल माह के मध्य भूमि के 16 से 18 इंच की गहराई में इस प्रकार गाड़ते हैं कि सींग का खुला भाग मिटटी के सम्पर्क में रहे। 6–7 माह के पश्चात सींग को निकालकर मिश्रण को शीशे के जार में संरक्षित कर लेते हैं इस मिश्रण के 1 ग्राम के भाग को 13 ली. पानी में मिलाकर एक एकड़ क्षेत्रफल में सायंकाल छिड़काव करते हैं। इसे फलों की प्रारम्भिक वृद्धि एवं विकास तथा परिपक्व अवस्था में प्रयोग करते हैं। इसके

प्रयोग से फल उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ फफूंदी जनित बीमारियों का प्रकोप कम हो जाता है ।

वृक्ष एवं झाड़ियाँ : मौसम की अनुकूलता के आधार पर बहुपयोगी वृक्ष एवं झाड़ियों का प्रयोग जैविक खेती के लिय महत्वपूर्ण है। आर्द्र क्षेत्रों में नीम, कैथा, अमरूद, सहजन, अंजीर एवं शहतूत जबकि सूखे क्षेत्रों में नीम, बेल पत्र, बेर, शरीफा, आंवला, सहजन, निरगुण्डी आदि लगाने चाहिए। फल उद्यानों में भी समुचित विविधता बनाये रखने के लिए 3–5 प्रकार के फलीय पौधे एवं गैर फलीय पौधे उपरोक्तानुसार लगाने चाहिए। खेत के चारों ओर डेढ़ मीटर की मेंड बना कर उन पर ग्लिरीसीडिया, सस्बेनिया, सुबबूल, अकेसिया आदि पेड़ लगाने चाहिये। छोटे भूखण्डों की मेड़ों पर अरहर, क्रोटोलेरिया, सिस्वानिया आदि लगाने चाहिये। समय–समय पर इन पौधें की पत्तियाँ तथा टहनियॉ काटकर खेत में डालने से भरपूर मात्रा में जैविक रूप से स्थिरीकृत नत्रजन की प्राप्ति होती है। समय–समय पर इन पेड़ों तथा झाड़ियों कि कटाई–छॅटाई करके इन पत्तियों एवं टहनियों को उसी खेत मे डाल कर पलवार के प्रयोग करने से नमी संरक्षित रहती है।

पेड़ एवं पौधे न केवल मृदा से उपलब्ध पोषक तत्वों को अवशोषित कर मिटटी की ऊपरी सतह में संग्रहित करते हैं। परन्तु पक्षियों, परभक्षियों एवं मित्र कीटों को आश्रय भी सुनिश्चित करते हैं। परन्तु इनसे फसलों में कीटों से बचाव करके जैविक कीट नियंत्रण में सहायता मिलती है। एक एकड़ फार्म पर एक नीम, एक गूलर, दो बेर, एक आवॅला तथा दो सहजन के पेड़ लगाने चाहिए। ग्लिरीसीडियाा/सस्बेनिया के पौधे बीच–बीच में कीटनाशी कुल के पौधे जैसे एडेथोडा, निर्गुन्डी, ऑक, धतूरा तथा बेसरम (सदाबहार) के पौध लगाने चाहिये। फार्म या बगीचे के चारों ओर एवं जीवंतता प्रदान करने के लिए बहुउपयोगी, गहरी जड़ों वाले पेड़ तथा झाड़ियाँ लगानी चाहिए। कम्पोस्ट तथा पशुधन आरक्षित स्थानों पर बड़े पेड़ों को बढ़ने दिया जाना चाहिए। फार्म के चारों ओर मुख्य मेंड़ों पर कम फासले से उपयुक्त बाड़ लगाये और निश्चित अंतराल पर इन्हें कांट–छांट कर खेतों में डालते रहें। यह बाड़ मात्र जैविक घेरा बंदी का कार्य ही करेगी बल्कि जैविक रूप से स्थिरीकृत नत्रजन से खेतों की मिटटी को समृद्ध भी करेगी। ग्लिरीसीडिया की 400 मी. लम्बी पट्टी तीसरे वर्ष से 22.5 किग्रा./हे. तथा सातवें वर्ष 17 किग्रा नत्रजन/हे. उपलब्ध करा सकती है। सिंचित दशा में 3–4 बार तथा असिंचित दशाओं में दो बार कटाई–छॅटाई की जा सकती है। प्रत्येक 3–4 माह के अन्तराल पर छॅटाई करते रहे तथा अवशेषों को हरीखाद के रूप प्रयोग करें।

पत्तियाँ आदि को कटाई के उपरान्त मिट्टी में मिला दें अथवा पलवार के रुप में भी प्रयोग करके शुष्क क्षेत्रों में मृदा नमी को भी संरक्षित कर सकते हैं। इस प्रकार पेड़ों की कटाई–छटाई से प्राप्त पत्तियों का प्रयोग चाहे सीधे मृदा में मिलाने के रुप में किया जाए अथवा पलवार के रुप में भी प्रयोग करने पर मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

कृषि विज्ञान केन्द्र बहराइच (उ.प्र.) 'सरदार बल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

हिन्दी भारत की एक भाषा स्वीकार कर ली जाए तो सहज ही एकता संभव हो सकती है।

– आचार्य केशवचंद्र सेन

शुष्क क्षेत्रों में निरंतर चारा उपलब्धता हेतु परम्परागत चरागाहों का पुनरोद्धार एवं प्रबंधन की आवश्यकता

राजेन्द्र प्रसाद, आर.एस. मेड़तिया, ओ.पी. चतुर्वेदी, आर.के. तिवारी, अशोक शुक्ला एवं प्रशान्त सिंह

शुष्क क्षेत्र विश्व के 18.8 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्रफल में फैला हुआ है। जलवायु की दृष्टि से शुष्क क्षेत्र विषम परिस्थितियों वाला ऐसा भू–भाग है जहाँ कृषि जोखिम भरा व्यवसाय होता है। भारत में शुष्क क्षेत्र 32.7 मिलियन हे. क्षेत्रफल में फैला हुआ है एवं इसकी परिधि में मुख्यतया राजस्थान, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र आते हैं। थार रेगिस्तान जोकि मुख्यतया राजस्थान, गुजरात, हरियाणा एवं पंजाब में फैला हुआ है, कुल भारतीय शुष्क क्षेत्र का 89.9 प्रतिशत हिस्सा है। भारतीय थार रेगिस्तान के पूर्वी क्षेत्र में वार्षिक औसत वर्षा 500 मि.मी. होती है जो पश्चिमी क्षेत्र में घटकर 100 मि.मी. रह जाती है। जबकि वाष्पीकरण पूर्वी क्षेत्र में 1650 मि.मी. एवं पश्चिमी क्षेत्र में 2000 मि.मी. होता है। कम वर्षा एवं अधिक वाष्पीकरण के कारण वार्षिक उपलब्ध नमी में भारी कमी रहती है। इस शुष्क क्षेत्र में पायी जाने वाली वानस्पतिक संपदा विरल रूप में बहुवर्षीय वृक्षों, झाड़ियों एवं घासों से युक्त होती है। अधिकतर वानस्पतिक संपदा अत्यधिक उपयोग के कारण जीर्ण–शीर्ण अवस्था में रहती है जिसकी उत्पादकता बहुत कम है।

राजस्थान के रेगिस्तानी परिप्रेक्ष्य में पायी जाने वाली घास ही पशुओं को दशकों से पालती आ रही है एवं पशुधन शुष्क क्षेत्रों की आर्थिक रीढ़ बनी हुई है। परन्तु पशुओं की बढ़ती संख्या के साथ–साथ बढ़ती हुई मानव जनसंख्या के कारण परम्परागत चरागाहों में कई गुना दबाव बढ़ने से उनकी उत्पादकता एवं क्षेत्रफल में कमी आ गयी है। जिन चरागाहों की चराई क्षमता सामान्यतया 0.2 से 0.5 इकाई पशुधन/हे. है। उन चरागाहों में चराई का दबाव 1 से 4 इकाई पशुधन/हे. तक बढ़ गया है। चराई के बढ़ते दबाव के कारण चरने योग्य घासों की अंतः–प्रजाति प्रतियोगिता के फलस्वरूप उनमें ह्रास होने लगा है एवं उनका प्राकृतिक अस्तित्व संकट में आने लगा है। एक अध्ययन के अनुसार, पिछले 40 वर्षों में चराई योग्य चरागाहों के क्षेत्रों में 30–35 प्रतिशत की कमी हुई है। दिनों–दिन चरागाहों के क्षेत्रफल में गिरावट चिंता का विषय है एवं सामूहिक सामाजिक जिम्मेदारी लेने की आवश्यकता को इंगित कर रही है। जिससे परम्परागत चराई क्षेत्रों को बचाया जाये एवं उनकी स्थिति को बेहतर करने के उपाय किये जायें। वर्तमान में बदलते जलवायु, बढ़ती जनसंख्या एवं पशुधन के दबाव के परिप्रेक्ष्य में निरंतर चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु परम्परागत चरागाहों का पुनरोद्वार एवं प्रबंधन आवश्यक हो गया है। इस लेख में परम्परागत चराई के क्षेत्र, उनके प्रबंधन की ऐतिहासिक विधियों के साथ–साथ इनके पुनरोद्धार के उपायों की चर्चा की गयी है।

परम्परागत चराई/क्षेत्र चरागाह :

अ अड़ाव : व्यक्तिगत वार्षिक चरागाह राजस्थान में परम्परागत खेती की पद्धति में एक किसान अपनी कुल जोत को तीन भागों–सठाव, दंड एवं अड़ाव में बाँटता था जो क्रमशः बाजरे की फसल, दलहनी फसलों एवं चराई हेतु उपयोग में लायी जाती थी (चित्र–1)। अड़ाव जोकि वार्षिक पड़ती होता है, कृषक अपने पशुओं के लिए जुलाई से अक्टूबर चरने के काम में लेता था। यदि किसी कृषक का अड़ाव का क्षेत्र अधिक है एवं उपलब्ध चारा अपने पशुओं की आवश्यकता से अधिक है तो वह कृषक अपने अड़ाव में पड़ोसी कृषकों के पशुओं को सहभागिता के आधार पर चरने की अनुमति देता है।

कभी–कभी अड़ाव का मालिक इसको अन्य कृषकों के पशुओं की चराई हेतु किराये पर दे देता था। वैज्ञानिक आधार पर देखा जाये तो अड़ाव क्षेत्र में मृदा की उर्वरता एवं स्वास्थ्य में बढ़ोत्तरी होती है। कृषक अड़ाव क्षेत्र को एक से अधिक वर्षों तक बनाये रखता था एवं अड़ाव की अवधि का निर्धारण कृषक जोत के आकार, पशुओं की संख्या एवं मृदा उर्वरता के स्तर पर निर्भर करता था। अड़ाव क्षेत्र में दलहन की फसलें उगाई जाती है। जिससे मृदा अधिक उर्वर हो जाये एवं बाजरे की खेती की जा सकें। सठाव का मतलब स्वस्थ मृदा वाला क्षेत्र जिसमें बाजरा की फसल पैदा की जा सके। पुराने समय में कृषक लोग अड़ाव–दंड एवं सठाव के चक्र को वर्षों तक चलाते एवं जीवनयापन हेतु अनाज का उत्पादन करते थे। परन्तु शनैः–शनैः इस प्रथा का अंत हो गया एवं भूमिक्षरण बढ़ता गया।

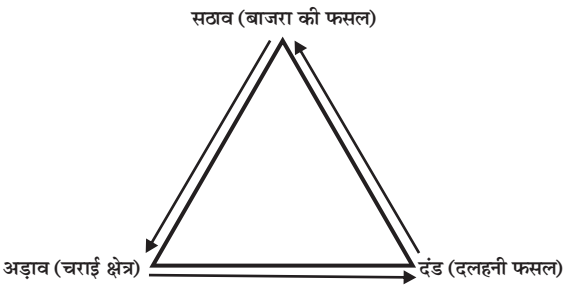

चित्र-1 : राजस्थान में अपनाई जाने वाली ऐतिहासिक कृषि-जोत पद्धति

ब. ओरण : ओरण एक भौगोलिक वन क्षेत्र होता है जहाँ किसी स्थानीय देवी/देवता का मंदिर होता है इसका क्षेत्रफल अलग–अलग होता है। चूंकि ओरण क्षेत्र की धार्मिक महत्ता होती है, इसीलिए कोई भी ग्रामीण ओरण के वृक्षों को न काटता है न ही अन्य कोई हानि पहुँचाता है। ओरण क्षेत्र का उपयोग चराई के लिए किया जाता था। चराई हेतु एक सुनिश्चित नियमावली बनी होती थी जिसमें पशुओं का प्रकार, चराई का समय एवं अन्य चराई के नियम होते थे। सभी ग्रामीण ओरण की घास का उपयोग एवं पशुओं की चराई नियमों का पालन करते हुए करते थे। नियमों का उल्लंघन करने वाले पर जुर्माना लगाया जाता था। साधारणता ओरण में मंदिर के पास नाड़ी अथवा झोड़ होता था जहाँ पशु पानी पीते थे। नाड़ी में वर्षा जल एकत्र होकर कई महीने संचित रहता था। ओरण में नाड़ी अथवा पोखर का पाया जाना आवश्यक तत्व है एवं कुछ ओरण बिना नाड़ी वाले भी होते थे। ओरण में चरने योग्य घास की कुछ सीमित प्रजातियाँ पायी जाती है एवं यह स्थान के अनुसार बदल जाती है। ओरण क्षेत्र राजस्थान के महत्वपूर्ण चरागाह है परन्तु वर्तमान में यह बंजर भूमि की तरह अनुपजाऊ हो गये हैं।

स. गौचर : गौचर का शाब्दिक अर्थ होता है गायों के चरने का स्थान गौचर। ग्राम समाज की जमीन होती है जिस पर ग्राम पंचायत का नियंत्रण होता है। परम्परागत रूप से हर ग्राम–पंचायत की एक गौचर हुआ करती थी जिसमें गाँव के सभी लोगों के पशु बिना किसी जाति, धर्म अथवा अमीर–गरीब के भेदभाव के चराये जाते थे। हर गौचर में वर्षा जल संग्रहण हेतु एक नाड़ी अवश्य होती थी जिसमें पशु पानी पीते थे। गौचर का आकार कुछ हेक्टेयर से लेकर 500 हेक्टेयर तक का होता था एवं गौचर के आकार के अनुसार नाड़ी का आकार भी छोटा या बड़ा होता था। कभी–कभी एक ग्राम–पंचायत में एक से अधिक गौचर पाये जाते थे।

द. भीलवार या चोइली : खरीफ की फसलों– बाजरा, मूँग, मोंठ, तिल इत्यादि के कटने के बाद खेतों के फसली अवशेष को चरने के लिए छोड़ दिया जाता है। इस दौरान सभी पशु चराई के लिए छोड़े जाते हैं। यह फसली अवशेष नवम्बर–दिसम्बर से जनवरी तक लगभग दो माह पशुओं को अच्छा चारा उपलब्ध कराते हैं। फसली अवशेष की चराई की पद्धति को भीलवार अथवा चोइली कहा जाता है।

य. बीड अथवा झोड़ : बीड स्थाई चरागाह वाली भूमि होती है। इसे झोड़ भी कहते हैं। जिसका आकार 100 से 500 हेक्टेयर तक होता है। कुछ बड़ा बीड कहा जाता है। साधारणतया हर बीड में पानी संग्रहण हेतु एक नाड़ी होती थी परन्तु गौचर की भांति बीड में नाड़ी का होना अनिवार्य है।

परम्परागत चरागाहों की वर्तमान अवस्था

पशुधन की संख्या में वृद्धि की वजह से चारे की माँग और आपूर्ति में अंतर दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। जिसके कारण उपलब्ध चरागाहों पर दबाव कई गुना बढ़ा है। पिछले चार दशकों में मानव जनसंख्या की बढ़ोत्तरी के कारण परम्परागत चरागाहों के आकार एवं संख्या में भी कमी आई है। राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्र में इंदिरा गॉधी नहर परियोजना आने से अधिकतर चरागाह वाली भूमि सिंचित कृषि क्षेत्र में बदल गयी है जिसके परिणामस्वरूप बचे हुए चरागाह क्षेत्रों पर दबाव बढ़ा है एवं उनकी उत्पादकता में कमी आई है। एक अध्ययन के अनुसार राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्र के जैसलमेर जिले में अनियंत्रिक चराई के कारण सेवन घास के मुंजों के घनत्व में गिरावट आई है। उचित प्रबंधन वाले चरागाहों में मुंजों का घनत्व 9022 मुंजा/हे. पाया गया है जबकि अनियंत्रित चराई वाले क्षेत्रों में यह घटकर 5700 मुंजा/हे. रह गया है। इसी प्रकार उत्पादकता 1.6 टन/हे. से घटकर 0.35 टन/हे. रह गयी है। अध्ययन में यह सुझाया गया है कि चरागाह को कुछ समय के लिए चराई से विराम देना अतिआवश्यक है एवं उनका प्रबंधन नियंत्रित चराई के आधार पर किया जाना चाहिए। लगातार अनियंत्रित चराई से वानस्पतिक संरचना एवं विविधताओं में परिवर्तन हो जाता है। सबसे ज्यादा बुरा प्रभाव अत्यधिक चराई योग्य बहुवर्षीय घासों–अंजन, सेवण, पेनीकम, डाइकेन्थियम इत्यादि पर पड़ा है। वर्तमान समय में उपरोक्त घास की प्रजातियाँ अधिकांश ओरण एवं गौचर में विलुप्त होने की स्थिति में आ गयी है। उचित प्रबंधन द्वारा चरागाहों की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर के अध्ययन के अनुसार केवल सुरक्षा बाड़ द्वारा चरागाहों की उत्पादकता को 200 प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है एवं यदि सुरक्षा बाड़ के साथ–साथ घास के बीज की पुनः बिजाई की जाये एवं वन–चरागाह पद्धति अपनाई जाये तो उत्पादकता को 600 से 800 प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है। चरागाहों के प्रबंधन में मुख्य समस्याएं है अनियमित चराई, बड़े एवं छोटे रेबड (झुण्ड) के बीच में समानता एवं सहयोग के अनुसार चराई एवं गरीब एवं छोटे पशुपालकों का पलायन।

परम्परागत चरागाहों का प्रबंधन

अ. गौ–हद : गौ–हद गायों को चराने के लिए एक सीमारेखा है। भगवान श्रीकृष्ण के समय इसको 'कार' कहा जाता था। गौ–हद की प्रथा के अनुसार प्रत्येक गाँव की गायों को चरने के लिए एक सीमा होती थी जिससे दूसरे पड़ोसी गाँव वालों की गायों के चरने में कोई विवाद नहीं होता था। प्रत्येक गाँव के ग्रामीण अपनी गायों को अपने गाँव की गौ–हद में ही चराते थे। पुराने समय में ग्रामीणों द्वारा इस प्रावधान का सख्ती से पालन किया जाता था। परन्तु अब इस प्रथा का अंत हो चुका है। इस प्रथा को दुबारा शुरू करने के लिए ग्रामीणों में जागरूकता फैलाने एवं प्रशिक्षण की जरूरत है यदि पुरानी गौ–हद की प्रथा पुनः शुरू हो जाती है तो आपसी विवाद कम होंगे व सौहार्द बढ़ेगा।

ब. जन–भागीदारी : क्षीण एवं अनुपजाऊ दशा में पहुँच चुके परम्परागत चरागाहों (ओरण, गौचर, बीड, इत्यादि) का पुनरोद्धार करने की परम आवश्यकता है एवं इसके लिए जनभागीदारी द्वारा सामूहिक कार्यवाही वांछित है। व्यक्तिगत एवं स्वार्थी विचार धारा को त्यागकर एक जन–आंदोलन के तहत पुराने चरागाहों को पुनः जीवित करना समय की माँग है। महिलाएं सहयोग के मुद्दों पर

ज्यादा प्रभावी होती है अतः महिलाओं के स्वयं सहायता समूह बनाकर इस कार्य को प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। प्रदर्शन के तौर पर गौचर, ओरण एवं दूसरे सामूहिक चरागाहों में घास को काटकर ले जाने अथवा चक्रीय चराई का प्रयोग किया जाना चाहिए एवं सीधी चराई रोकना चाहिए। जन–भागीदारी द्वारा चरागाहों के प्रबंधन में घास के अलावा अन्य उत्पाद जैसे नाड़ी का पानी, जलाऊ लकड़ी आदि के उपयोग में सभी वर्गो को समान सहभागिता मिलना चाहिए अन्यथा विवाद पैदा होगें।

स. चराई का कलेंडर : पूरे वर्ष समुचित चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय लोगों की अपनी परम्परागत बुद्धिमत्ता के आधार पर चराई करने का एक वार्षिक कलेंडर बनाना चाहिए। इस प्रक्रिया द्वारा उपलब्ध घास एवं फसली अवशेषों को चराने का समुचित प्रयोग किया जा सकता है। इस व्यवस्था से आपसी विवाद भी नहीं होंगे। चराई का कलेंडर बनाते समय उगाई जाने वाली फसलों, गौचर, ओरण एवं अन्य संसाधन, किसानों की प्राथमिकता एवं पशुपालकों के हितों का समावेश इस प्रकार होना चाहिए कि कोई विवाद न बने (चित्र–2)।

चराई क्षेत्र	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
अड़ाव							✓	✓	✓	✓		
भीलवार	✓										✓	✓
बीड़	✓	✓	✓	✓	✓							
गौचर	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓
ओरण	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓

चित्र–2 परम्परागत रूप से अपनाया गया चराई कलेंडर

गौचर में जुलाई से अक्टूबर के मध्य पारम्परिक रूप से चराई की अनुमति रहती है परन्तु प्रयोगों के आधार पर पाया गया है कि इस दौरान चराई रोककर गौचर को छोड़ दिया जाए तो इससे गौचर का पुनरोद्धार हो जाता है एवं उनकी चराई क्षमता वर्ष पर्यन्त बनी रहती है।

चारा बैंक : जिन वर्षों में अच्छी वर्षा होती है एवं चारा अतिरिक्त रूप में उपलब्ध होता है तो इसका भंडारण चारा बैंक के रूप में करना ठीक रहता है यह भंडारित चारा उन दिनों में पशुओं को खिलाने के काम आता है जब चरागाह में घास समाप्त हो जाती है। चारा बैंक में घास, ज्वार, बाजरा का अवशेष, बेर (पाला) एवं खेजड़ी (लूंग) की पत्तियाँ एकत्रित कर ली जाती है। परम्परागत रूप से चारा एकत्र करने के जो ढेर बनाए जाते हैं उनको बागर, कलार, ढूंगरी, छिवारा इत्यादि नामों से जाना जाता है। संग्रहित चारा सूखे के समय बहुत उपयोगी होता है। चारा का भंडारण उन्नत तरीकों जैसे ठोस गठ्ठर, पोषक ईट के रूप में किया जा सकता है। जिससे कम स्थान पर अधिक चारा संग्रहित किया जा सके।

सारांश

परम्परागत चरागाह जैसे ओरण, गौचर, बीड़, अड़ाव, भीलवार, चोइली इत्यादि का क्षेत्र दिनों–दिन घटता जा रहा है। चराई का अधिक दबाव होने की वजह से इन चरागाहों की उत्पादकता नगण्य एवं स्थिति क्षीण हो गयी है। गो–हद एवं 'कार' भी विलुप्त हो गयी है।

कृषकों एवं पशुपालकों के मध्य विवाद बढ़ते जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में इन परम्परागत चराई क्षेत्रों को पुनर्जीवित करना अतिआवश्यक है। आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग करके इनकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए सजीव सुरक्षाबाड़, वन–चरागाह पद्धति सामूहिक प्रबंधन, चराई कलेंडर, जन–चेतना एवं जन सहभागिता जैसे उपाय अति आवश्यक है तभी पशुओं के लिए पूरे वर्ष चारा उपलब्ध हो सकेगा एवं चरागाह टिकाऊ बने रहेंगें।

केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी एवं केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जैसलमेर

हाइड्रोपोनिक चारा तकनीकी: वर्षभर हरा चारा उत्पादन के लिए एक वरदान

शेषराव काऊतकर, वी.सी. त्यागी, अकरम अहमद एवं प्रभाकांत पाठक

भारतीय कृषि में हरे चारे को पशुओं के लिए संपूर्ण आहार का दर्जा दिया गया है। पशुओं के आहार में यदि हरा चारा न हो तो वह अपूर्ण आहार माना जाता है। हरा चारा एक प्रकार से पशुधन के लिए प्राकृतिक आहार है। यह प्रोटीन, वसा, खनिज, विटामिन आदि का एक अच्छा स्त्रोत है। इसलिए यह गुणवत्तायुक्त दूध उत्पादन एवं पशुओं का उत्तम स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए जरूरी खाद्यान्न है। भारत की 19वीं पशुगणना के अनुसार देश में विशाल पशुधन की आबादी है जिसमें लगभग 300 मिलियन गोजातीय पशु, 65.07 मिलियन भेंड़, 135.2 मिलियन बकरियाँ और 10.3 मिलियन सूकर है। इसी विशाल पशुधन आबादी के कारण वर्ष 2015–16 में भारत में लगभग 155.5 मिलियन टन दुध का उत्पादन हुआ और विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश बना।

वर्षा की अनिश्चितता, कम जमीन, जलवायु परिवर्तन, खाद्य फसलों के उत्पादन का दबाव और मजदूरों की कमी के कारण अच्छी गुणवत्तायुक्त हरा चारा उत्पादन करना किसानों के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य होता जा रहा है। इसलिए इस विशाल पशु संख्या की दैनिक चारा आवश्यकता को पूरा करने के लिए और दुग्ध उत्पादन में लगातार वृद्धि करने के लिए हम केवल मौसमी हरा चारा, शुष्क चारा और अन्य पशु आहार पर निर्भर कर सकते हैं। इन सभी समस्याओं से उभरने का एक सबसे अच्छा तरीका हाइड्रोपोनिक तकनीक द्वारा उगाया गया हरा चारा है। यह पद्धति दुग्ध के उत्पादन में भारत का शीर्ष स्थान बनाए रखने, किसान भाईयों की आय बढ़ाकर उनकी आजीविका में सुधार लाने और पूरे वर्ष हरा चारा उत्पादन करने के लिए वरदान साबित हो सकती है। भारत में 1980 दशक के अंत में कई वैज्ञानिकों द्वारा चारा उत्पादन एवं अनुसंधान कार्य हेतु इस तकनीक के प्रचार का प्रयास किया गया। सन् 2011 में गोवा डेयरी द्वारा भारत सरकार की ''राष्ट्रीय कृषि विकास योजना'' के अंतर्गत गोवा के विभिन्न सहकारी डेयरी समितियों में हाइड्रोपोनिक चारा उत्पादन की कई इकाईयों की स्थापना की गई। जिसमें हाइड्रोपोनिक के बारे में अनुसंधान करने के लिए एक इकाई की स्थापना भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के गोवा अनुसंधान संकुल में भी की गई।

हाइड्रोपोनिक यह शब्द दो ग्रीक शब्दों से बना है, हाइड्रो का मतलब ''पानी'' होता है और पोनिक का मतलब ''काम करने वाला'' होता है। इस प्रकार मिट्टी का उपयोग किये बगैर, केवल पानी या पोषक तत्व युक्त घोल में पौधों को उत्पादित करने की प्रक्रिया को ''हाइड्रोपोनिक'' या ''अंकुरित अनाज'' या ''अंकुरित चारा'' के रूप में जाना जाता है। सरल भाषा में कहा जाये तो पर्यावरणीय रूप से नियंत्रित संरचनाए, घर अथवा ग्रीन हाउस में बिना मिट्टी के चारा उत्पादन करने की विधि को हाइड्रोपोनिक कहते हैं। कम समय और कम लागत में अच्छी गुणवत्तायुक्त हाइड्रोपोनिक चारा उत्पादन करने का सबसे सरल तरीका ''ग्रीन हाउस'' है। ग्रीन हाउस एक पारदर्शक आवरण द्वारा ढ़का हुआ एक ढाँचा होता है, जिसमें कम से कम आंशिक रूप से नियंत्रित माहौल की शर्तो के तहत फसलों का उत्पादन किया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक को एक छोटी अवधि के भीतर ग्रीन हाउस में नियंत्रित तापमान और नमी के अंतर्गत उत्पादित किया जाता है। किसानों की वित्तीय स्थिति और ग्रीन हाउस निर्माण

सामग्री के अनुसार हाइड्रोपोनिक चारा उत्पादन के लिये ''हाई–टेक ग्रीन हाउस'' या ''कम लागत वाले सरल ग्रीन हाउस'' का निर्माण किया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक में पौधों और चारा वाली फसलों को नियंत्रित परिस्थितियों में 15–30° सेल्सियस तापमान और लगभग 70–85 प्रतिशत आर्द्रता में प्रभावी तरीके से उत्पादित किया जाता है। इस तकनीक की मदद से मक्का, जौ, ज्वार, गेहूँ, चना, अल्फा बाजरा, आदि फसलों का उत्पादन किया जा सकता है। नीचे दिये गये अनुच्छेदों में विभिन्न बिन्दुओं द्वारा इस उपयोगी तकनीक के बारे में संक्षिप्त रूप से जानकारी दी गई है। जिसकी मदद से छोटे एवं मध्यम वर्गीय किसान इसे अपना सके।

हाइड्रोपोनिक हरा चारा उत्पादन के लिए आवश्यक सामग्री : वर्षभर लगातार हरा चारा उत्पादन के लिये नीचे लिखी सामग्री की जरूरत है।

1. अच्छी गुणवत्ता वाले चारा बीज।
2. हाइड्रोपोनिक संरचना के निर्माण के लिए उपयुक्त छोटा क्षेत्रः इसका निर्माण स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री जैसे बांस, लकड़ी, ग्रीन हाउस जाल, प्लास्टिक पाइप, हल्के स्टील के कोण आदि से किया जा सकता है अथवा ईटों द्वारा उचित आकार में इसका निर्माण किया जा सकता है या हाइड्रोपोनिक मशीन को बाजार से खरीद कर स्थापित कर सकते हैं।
3. बीजों को भिगोने के लिए जूट का बोरा।
4. अंकुरित बीजों को फैलाने के लिए ट्रे ताकि इन बीजों को पर्याप्त नियोजित संरचनाओं में रखा जा सकें।
5. साधारण स्प्रेयर या स्वयं चलित पम्प के रूप में सिंचाई का सतत स्त्रोत है।
6. पम्प को चलाने के लिए बिजली।
7. एक से तीन घंटे के लिए मजदूर।
8. पोषक तत्व।

हाइड्रोपोनिक चैम्बर में हरा चारा उत्पादन की विधि

सर्वप्रथम उच्च गुणवत्ता वाले चारे के बीज को उचित साफ–सफाई एवं धुलाई के बाद 12–20 घंटे के लिये पानी में भिगोया जाता है तथा अंकुरित बीजों को रेक पर फैलाया जाता है। भिन्न बीजों के अंकुरण का समय विभिन्न होता है। अगला महत्वपूर्ण कदम अंकुरित बीजों को प्लास्टिक ट्रे में रखकर 8–10 दिनों के लिए तापमान और आर्द्रता नियंत्रित हाइड्रोपोनिक चैम्बर या ग्रीन हाउस में रखा जाता है। अंततः 8–10 दिनों के भीतर अच्छी गुणवत्ता वाले 20–25 सेमी. लम्बा चारा तैयार हो जाता है, जो कि सीधे पशुओं को आहार के रूप में दिया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक रूप से विकसित हरे चारे के प्रवाह चार्ट सरल रूप से नीचे दर्शाया गया है।

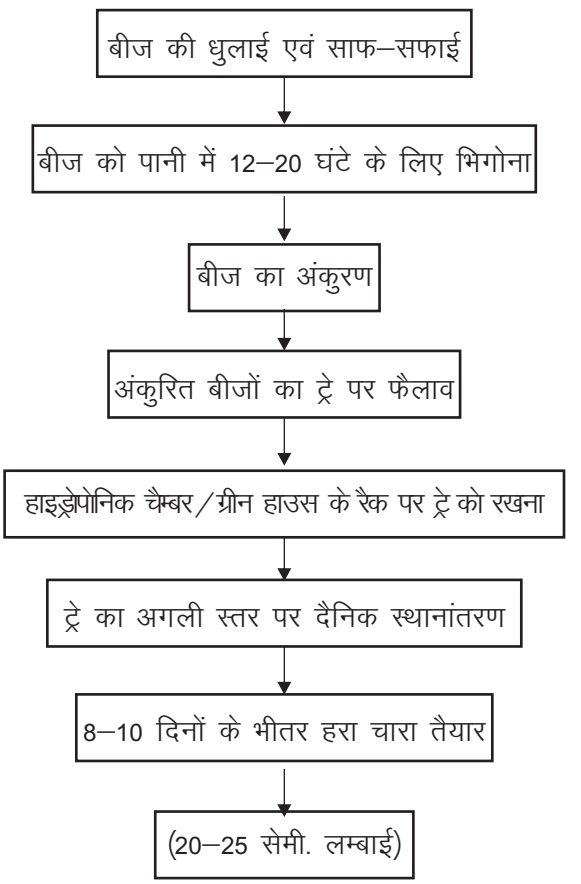

चित्र : 1 ग्रीन हाउस में हाइड्रोपोनिक तकनीक द्वारा उगाया गया पौष्टिक हरा चारा

चित्र : 2 बाजार में उपलब्ध आयुर्वेत प्रो ग्रीन कंपनी की हाइड्रोपोनिक म ीन

हाइड्रोपोनिक हरा चारा तकनीकी के लाभ :

1. लगातार वर्षभर हरे चारे की उपलब्धता।
2. चारा उत्पादन में समय कम लगता है लगभग 8–10 दिनों के भीतर ही पशुओं के लिए हरा चारा तैयार होता है।
3. कम जमीन की आवश्यकता पारम्परिक पद्धति की तुलना में 99 प्रतिशत कम जमीन का उपयोग होता है।
4. जल की बचतः पारम्परिक विधि से 98 प्रतिशत कम पानी का उपयोग।
5. न्यूनतम श्रम की आवश्यकता केवल 2–3 घंटों का दैनिक काम।
6. पूरी तरह से प्राकृतिक एवं ऑर्गेनिक चाराः रसायन और कीटनाशक का कोई उपयोग नहीं।
    1. कम उपकरणों का उपयोग : बुवाई, कटाई, निराई के उपकरणों की आवश्यकता नहीं।
    2. पौष्टिक चारा उत्पादनः अंकुरित बीज और जड़ों की छटाई के साथ अत्याधुनिक खाद्य और प्रोटीन से समृद्ध चारा।
    3. हरे चारे का न्यूनतम नुकसानः कटाई, परिवहन, संभाल द्वारा कोई नुकसान नहीं।
    4. उत्पादन में कम लागत : जमीन, रसायन, कीटनाशक, मेहनत और उपकरणों का खर्च बचाता है।
    5. कम बिजली की आवश्यकता।

हाइड्रोपोनिक विधि द्वारा उगाये गये हरे चारे के लाभ

1. प्रोटीन, विटामिन और खनिजों में अत्यधिक धनी चारा उत्पादन।
2. पशुओं द्वारा पचाने में आसान।
3. चारा में अधिक नमी।
4. प्रजनन क्षमता में सुधार।
5. ज्यादा स्वादिष्ट चारा।
6. इसमें हल्के रेशे होते हैं, इसलिए कब्ज को रोकता है।
7. प्राकृतिक रूप में ताजे पोषक तत्व की उपलब्धता।
8. दुग्ध उत्पादन की लागत में कमी एवं अधिक दुग्ध उत्पादन।
9. दूध में वसा प्रतिशत में सुधार।

हाइड्रोपोनिक विधि द्वारा उपलब्ध हरे चारे से पशुओं को होने वाले लाभ

1. पशुओं के वजन में वृद्धि।
2. लम्बे समय तक लेक्टेशन अवधि।

3. अधिक दूध उपज।
4. उच्च वसा प्रतिशत।
5. पशुओं के स्वास्थ्य और आयु में वृद्धि।
6. उच्च गर्भधारण दर।
7. कम राशन खर्च।

अच्छे गुणवत्तायुक्त हाइड्रोपोनिक चारा की ताजा उपज, फसल का प्रकार, कटाई के दिन, बीज का वजन, बीज की गुणवत्ता एवं उपचार, पानी की गुणवत्ता, तापमान, आर्द्रता, ग्रीनहाउस के भीतर की स्वच्छता इन सभी चीजों में मुख्य रूप से निर्भर करती है। अगर इन सभी बिन्दुओं का उचित ध्यान रखा जाये और ऊपर दी गई हाइड्रोपोनिक चारा विधि को अपनाया जाये तो निश्चित रूप से किसान भाई लाभान्वित हो सकते हैं।

संस्थान की प्रचार-प्रसार/गतिविधियाँ

दिनाँक 14–20 सितम्बर, 2017 तक हिन्दी सप्ताह का आयोजन

संस्थान में हिन्दी सप्ताह 14–20 सितम्बर, 2017 का आयोजन संस्थान के कार्यवाहक निदेशक डॉ. खेमचन्द की अध्यक्षता में शुभारम्भ किया गया। कार्यवाहक निदेशक ने समस्त कार्मिकों को अपना अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करने की शपथ दिलाई।

माननीय गृहमंत्री भारत सरकार एवं माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री भारत सरकार जी के संदेश का वाचन प्रभारी राजभाषा, डॉ. सुनील कुमार ने किया। सप्ताह के अंतर्गत आयोजित हिन्दी में मौलिक लेखन, मसौदा एवं टिप्पणी लेखन, कम्प्यूटर पर हिन्दी टंकण, शोध–पत्र पोस्टर प्रदर्शन, निबन्ध, भाषण, स्वरचित कविता पाठ एवं वाद–विवाद अहिन्दी भाषी प्रतियोगिताओं के संबंध में नीरज कुमार दुबे ने जानकारी प्रदान की।

समापन कार्यक्रम राजीव सिंह ''पारीछा'' माननीय विधायक–बबीना के मुख्य आतिथ्य एवं संस्थान के निदेशक डॉ. आर.वी. कुमार की अध्यक्षता में किया गया। मुख्य अतिथि राजीव सिंह ने अपने उद्बबोधन में हिन्दी को गौरव, वैभव बढ़ाने वाली व्यावहारिक, प्रभावशाली एवं विस्तृत भाषा बताते हुए मन के भावों को व्यक्त करने वाली एवं दिलों को जोड़ने वाली भाषा बताया। डॉ. आर.वी. कुमार ने अपने अध्यक्षीय उद्बबोधन में हिन्दी के विकास के लिए दृढ़ इच्छा शक्ति से दिशा निर्देशों के अनुरूप शत्–प्रतिशत हिन्दी में कार्य करने की आवश्यकता बतायी।

मुख्य अतिथि ने प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र एवं स्मृति चिन्ह देकर पुरस्कृत किया एवं प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किये तथा वार्षिक पुरस्कार योजना के विजयी प्रतिभागी को पुरस्कृत किया। कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र को वर्ष पर्यन्त अधिक हिन्दी कार्य के लिए चल वैजन्ती एवं फार्म मशीनरी एवं कटनोत्तरी तकनीकी विभाग को हिन्दी में सर्वाधिक कार्य करने पर विशिष्ट सम्मान पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। उद्घाटन एवं समापन कार्यक्रम का संचालन डॉ. सुनील कुमार एवं आभार नीरज कुमार दुबे ने किया।

चित्र : पुरस्कृत करते हुए मुख्य अतिथि माननीय विधायक-बबीना राजीव सिंह 'पारीछा'

एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

प्रथम कार्यशाला : संस्थान में 7 मार्च, 2017 को प्रथम एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन श्री एम. एम.भटनागर, राजभाषा अधिकारी, मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, झाँसी के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. के.एन. सचान, पूर्व वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी, भारत हैवी इलैक्ट्रिकल लिमिटेड, के विशिष्ट आतिथ्य तथा कार्यवाहक निदेशक डॉ. ए.के. राय, की अध्यक्षता में किया गया। डॉ. ए.के.राय ने अपने अध्यक्षीय उद्बबोधन में राजभाषा के निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए शासकीय कार्यो में अधिकतम हिन्दी का प्रयोग करने की

आवश्यकता को इंगित करते हुए कार्य करने का आव्हान किया। कार्यशाला में प्रशासनिक–तकनीकी श्रेणी के 15 कार्मिकों ने प्रतिभाग किया।

द्वितीय कार्यशाला : 21 जून, 2017 को द्वितीय एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन डॉ. एन.डी. समाधिया, पूर्व प्राचार्य, डी.बी. कालेज, उरई के मुख्य अतिथ्य तथा संस्थान निदेशक डॉ. पी.के. घोष की अध्यक्षता में किया गया। डॉ. पी.के. घोष ने अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में 'क' क्षेत्र के लक्ष्यों के अनुरूप पूर्ण मनोयोग से कार्य करने का आव्हान किया। कार्यक्रम में विभाग के अधिकारी–कर्मचारी श्रेणी के 12 कार्मिकों ने प्रतिभाग किया।

तृतीय कार्यशाला : 23 अगस्त, 2017 को तृतीय एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन श्री एम.एम. भटनागर, राजभाषा अधिकारी मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, झाँसी के मुख्य अतिथ्य तथा कार्यवाहक निदेशक डॉ. आर.वी. कुमार, की अध्यक्षता में किया गया। डॉ. आर.वी. कुमार ने अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में राजभाषा के निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए शासकीय कार्यो में अधिकतम हिन्दी का प्रयोग करने की आवश्यकता को इंगित करते हुए कार्य करने का आव्हान किया। कार्यशाला में संस्थान के अधिकारी–कर्मचारी श्रेणी के 14 कार्मिकों ने प्रतिभाग किया।

चित्र : (दायें से) डॉ आर.के. तिवारी, डॉ आर.वी. कुमार, डॉ सुनील कुमार एवं नीरज कुमार दुबे

चतुर्थ कार्यशाला : 18 नवम्बर, 2017 को चतुर्थ एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन डॉ. आर.के. तिवारी, प्रधान वैज्ञानिक, केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी के मुख्य अतिथ्य, तथा संस्थान निदेशक डॉ. आर.वी. कुमार की अध्यक्षता में किया गया। निदेशक ने अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में कार्यालय के कार्यो में अधिकतम हिन्दी का प्रयोग करने की आवश्यकता को इंगित करते हुए ज्ञान, अनुभव से व्यवाहारिक रूप से कार्य करने का आव्हान किया, जिससे लक्ष्यों की प्राप्ति हो सकें। इस कार्यशाला में विभाग के अधिकारी–कर्मचारी श्रेणी के 17 कार्मिकों ने प्रतिभाग किया।

चित्र : (दायें से) श्री एम.एम.भटनागर, डॉ आर.वी.कुमार, डॉ सुनील कुमार एवं नीरज कुमार दुबे

संस्थान भ्रमण

क्र.सं.	दिनाँक	आगन्तुक विवरण	भ्रमण	संख्या
1	2.1.2017	नरसिंहपुर, मध्य प्रदेश	किसान	13
2	3.1.2017	कृषि अधिकारी, धौलपुर, राजस्थान	किसान	35
3	4.1.2017	राजकीय स्कूल, झाँसी, उत्तर प्रदेश	छात्र	30
4	4.1.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, रायसेन, मध्य प्रदेश	किसान	16
5	10.1.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, रायसेन, मध्य प्रदेश	किसान	17
6	31.1.2017	उप–निदेशक, आत्मा, विदिशा, मध्य प्रदेश	किसान	10
7	4.2.2017	बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश	छात्र	6
8	6.2.2017	श्रीमती राना, बैतुल, मध्य प्रदेश	शासकीय अधिकारी	3
9	7.2.2017	उप–निदेशक, आत्मा, सागर, मध्य प्रदेश	किसान	11
10	10.2.2017	श्री राजेन्द्र, परवई, झाँसी, उत्तर प्रदेश	किसान	3
11	12.2.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, पन्ना, मध्य प्रदेश	किसान	12
12	24.2.2017	कृषि विभाग, रामपुर, सीधी, मध्य प्रदेश	शासकीय अधिकारी	30
13	25.2.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, विदिशा, मध्य प्रदेश	किसान	25
14	26.2.2017	श्री श्याम बिहारी गुप्ता, झाँसी, उत्तर प्रदेश	किसान	3
15	27.2.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, शिवपुरी, मध्य प्रदेश	किसान	51
16	1.3.2017	श्री विष्णु विष्ट, मेरठ, उत्तर प्रदेश	शासकीय अधिकारी	3
17	16.3.2017	कृषि अधिकारी, दमोह, मध्य प्रदेश	किसान	9
18	16.3.2017	किसान समूह	किसान	18
19	16.3.2017	श्रीमती सुमन मिश्रा, सफल, झाँसी, उत्तर प्रदेश	एनजीओ	4
20	16.3.2017	कृषि अधिकारी, टीकमगढ़, मध्य प्रदेश	किसान	9
21	21.3.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, कटनी, मध्य प्रदेश	किसान	19
22	24.3.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, टीकमगढ़, मध्य प्रदेश	किसान	11
23	24.3.2017	फार्मर फस्ट परियोजना प्रशिक्षण, झाँसी, उत्तर प्रदेश	किसान	125
24	29.3.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, टीकमगढ़, मध्य प्रदेश	किसान	31
25	8.9.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, टीकमगढ़, मध्य प्रदेश	किसान	11
26	10.9.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, आगरा, उत्तर प्रदेश	किसान	40
27	11.9.2017	बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश	छात्र	40
28	12.9.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, आगरा, उत्तर प्रदेश	किसान	37
29	12.9.2017	ऑल इण्डिया रेडियो, झाँसी	शासकीय अधिकारी	3
30	13.9.2017	बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश	छात्र	40
31	14.9.2017	परियोजना निदेशक आरएसीपी, जयपुर	किसान	35
32	14.9.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, आगरा, उत्तर प्रदेश	किसान	40

33	15.9.2017	बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश	छात्र	40
34	29.9.2017	थानसिंह, उरई, झाँसी	किसान	3
35	10.10.2017	उत्तर प्रदेश कृषि निदेशक, आत्मा, अलवर	किसान	40
36	12.10.2017	वन प्रशिक्षण संस्थान, नैनीताल	शासकीय अधिकारी	37
37	13.10.2017	मॉर्डन पब्लिक स्कूल, झाँसी	छात्र	180
38	13.10.2017	उप संचालक, आत्मा, कटनी	किसान	28
39	24.10.2017	पाली, पलीदा, झाँसी	किसान	97
40	25.10.2017	बाँदा कृषि एवं तकनीकी विष्वविद्यालय, बांदा	छात्र	37
41	25.10.2017	पाली, पलीदा, झाँसी	किसान	35
42	25.10.2017	उप संचालक, आत्मा, रीवा	किसान	85
43	25.10.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, रायसेन	किसान	46
44	26.10.2017	परवई, दातारनगर, झाँसी	किसान	15
45	06.11.2017	उप कृषि निदेशक, आत्मा, रीवा	किसान	12
46	06.11.2017	परियोजना निदेशक, आत्मा, गुना	किसान	25
47	07.11.2017	आर्यन स्कूल, झाँसी	छात्र	51
48	08.11.2017	पलीदा, झाँसी	किसान	12
49	15.11.2017	बैफ, झाँसी	किसान	23
50	18.11.2017	सी के सी स्कूल, झाँसी	छात्र	19
51	21.11.2017	राज्य कृषि प्रबंधन संस्थान, लखनऊ	किसान	40
52	30.11.2017	यूएएस, धारवाड़	छात्र	53
53	11.12.2017	उप संचालक, आत्मा, शिवपुरी	किसान	75
54	19.12.2017	डब्ल्यूडब्ल्यूएफ, सवाईमाधौपुर	किसान	29
55	20.12.2017	उपसंचालक, आत्मा, ग्वालियर	किसान	36
56	16.12.2017	प्रशिक्षणार्थी, केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी	किसान	60
57	19.12.2017	डब्ल्यूडब्ल्यूएफ, सवाईमाधौपुर	किसान	28
58	20.12.2017	प्रशिक्षणार्थी, केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी	किसान	60
59	21.12.2017	डब्ल्यूडब्ल्यूएफ, सवाईमाधौपुर	किसान	26
60	22.12.2017	केवीके, ग्वालियर (आरएसकेवीवी)	छात्र	40
61	23.12.2017	प्रशिक्षणार्थी, केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी	किसान	60
62	25.12.2017	प्रशिक्षणार्थी, केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी	किसान	60
63	25.12.2017	एएयू, गुजरात	छात्र	37
64	28.12.2017	उपसंचालक, आत्मा, कटनी	किसान	14
65	28.12.2017	प्रशिक्षणार्थी, केन्द्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान संस्थान, झाँसी	किसान	60
66	30.12.2017	सरकारी हाईस्कूल, दतिया	छात्र	70

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

Darpan Printers
&
Lamination